







All Right Reserved.

श्री १०८ गोस्वामी तुलसीदास कृत  
( सटीक )

# गीतावली ।

सातोकाण्ड ।

परमहंस प्रशंसमान हंसवंशावतंस  
श्री सीतारामीय महात्मा हरिहरप्रसाद कृत  
प्रकाशिका टीका सहित

जिस को

स्वस्ति श्री विविध विरुदावली विराजमान मानोन्नत

श्री महाराजधिराज काशिगज द्विजराज

श्रीश्री श्री श्री प्रभुनारायण सिंह

बहादुर के. सी. आइ. ई. के

आज्ञानुसार

७ म० कु० बाबू रामदीन मिहान्वज

श्री बाबू रामरणविजय सिंह ने प्रकाशित किया ।



पटना—“खड्गबिनाम” प्रेम—बांकीपुर ।

चाण्डीप्रसाद मिह ने मुद्रित किया ।

१९०६.



श्रीः

# गीतावली सटीक ।

श्रीसीतारामाभ्यां नमः ।

मङ्गलाचरण—श्लोक ।

वालं दिगम्बरं रामं कौशल्यानन्दवर्द्धनम् ।  
अतसीकुसुमश्यामं दध्योदनमुखं भजे ॥ १ ॥  
सोरठा ।

जपत रहत सब जाम, जामु नाम ब्रह्मादिकौ ।  
हरिहर करत प्रनाम, तेहि सिय सियवर चरन कौं ॥

दोहा ।

भरत लपन रिपुदवन पद, वंदि ध्याय हनुमान् ।  
हरिहर टीका रचत है, देहु सुधारि सुजान ॥

मूल ।

नीलाम्बुजश्यामलकोमलाङ्ग सीतासमारोपितवामंभागम् ।  
पाणौ महाशायकधारुचापं नमामि रामं रघुवंशनाथम् ॥

श्याम कमल सम श्यामल कोमल अंग औ सीता जू याम भली भांति तें स्थित औ हाथ में अमोघ बाण औ सुंदर सारंग जिन के तिन रघुवंशनाथ श्रीराम कों नमस्कार करत हई । श्री चारि लीला प्रधान हैं बाल, विवाह, वन और राजलीला । य श्लोक के एक एक पद से जनाए । नीलाम्बुजश्यामल कोमल बाल, औ सीतासमारोपितनामभागं तें विवाह, औ पाणौमहाशाचापं तें वन, औ नमामिरामंरघुवंशनाथं तें राज्यलीला ।

राग असावरी—आजु सुदिन सुभघरी सुहाई  
 शीलगुन धाम राम नृप भवन प्रगट भए आई ॥ १ ॥  
 पुनीत मधुमास लगन यह वार जोग समुदाई ।  
 चर अचर भूमिसुर तनुरुह पुलकि जनार्द्र ॥ २ ॥  
 विबुधनिकर कुसुमावलि नभ दुंदुभी बजाई ।  
 मातु सब हरपित यह सुप वरनि न जाई ॥ ३ ॥  
 सुनि सुत जन्म लिए सब गुरजन विप्र बुलाई ।  
 वेद विहित क्रिया परम सुचि आनंद उरं न समाई ॥ ४ ॥  
 वेदधुनि करत मधुर मुनि बहुविधि बाजु बधाई ।  
 प्रियनाथ हेतु निज निजसंपदा लुटाई ॥ ५ ॥  
 मनि बहु कीतु पताकनि पुरी रुचिरकरि छाई ।  
 मागध सु वंदीजन जहँ तहँ करत बडाई ॥ ६ ॥  
 सहज सिंगार वनिता चलि मंगल विपुल बनाई ।  
 गावहिं देहिं मुदित चिरजियो तनय सुषदाई ॥ ७ ॥  
 वीथिन्ह कुमकुम अरगजा अगसु अवीर उडाई ।  
 नाचहिं पुर नर नारि प्रे देहदसा बिसराई ॥ ८ ॥  
 अमित धेनु गज तुरग बसन जातरूप अधिकारि ।  
 दैत भूप अनुरूप जाहि जोइ सकत

८६ पाई ॥ ८ ॥ सुयो भए सु मंत भूमिसुर पलंगनमः  
 मन्दिनाई । सवहि सुमन विक्रमत रवि निकसत कुमुटविपि  
 दिन्पाई ॥ १० ॥ जो सुपसिंधु महत सौकर तें सिध विं  
 प्रभुताई । मोइ सुप उमगि खवध रछो द्मदिमि कवन सत  
 फहीं गाई ॥ ११ ॥ जो रघुवीरचरन चिन्तक तिन्ह को गति  
 प्रगट देपाई । अदिरन कमल अनूप भगति दृष्ट तुलसिदार  
 सब पाई ॥ १२ ॥ १ ॥

गयी मनि गयी फरति है आजु सुंदर दिन औ सुंदर सुभ पर  
 में रूप शील औ गुन के घाम श्री राम महागज दशरथ के गृह में आ  
 के प्रगट भए । भवन प्रगट भए आइ फरिने को यह भाव कि अपन  
 इच्छा करि परघाम ने आइके प्रगटे, गर्भ ने नाहीं ॥ १ ॥ अति पवि  
 चेत्रमाम फर्के लगन पांच ग्रह उच्च, मेष के मूर्धे, मकर के मंगल, तुल  
 के जनिश्रर, फर्के के वृहस्पति, मीन के शुक औ श्रीरामजन्म दिन 'मेरुतंत्र'  
 औ 'रामसुधा' में सोमवार औ 'शृंगगार' में बुधवार औ गोसाई ज  
 मंगलवार एहि ग्रंथ में लिखे सो कर्णांतर करि व्यवस्था करना औ यां  
 समुदाय पुष्कर्मादि हैं । चर जंगम अचर स्थावर औ भूमिसुर ब्राह्म  
 दर्पवन्त हैं सो कैसे जानि परची तैदि हेतु लिखत हैं कि तनुरुह क  
 रोम सों पुलक करि जनाय दिए । शंका । अचर की पुलकावली कौ  
 जानि परी । उचर । अचर पर्वत वृक्षादि तिन के रोम रूप तृण पत्रा  
 हैं ते लहलहाय उठे सोई पुलकना है । चर अचर से भूमिसुर को पृथ  
 लिखिबे को यह भाव कि श्रीरघुनाथ कौ ब्रह्मण्य जानि ब्राह्मणन क  
 सब तें अधिक आनेइ भयो अतएव भागवत में लिखा । "ब्रह्मण्यः सत्य  
 सन्धश्च रामो दाशरथि र्यथा ।" मधुमास को अति पुनीत कहिबे को य  
 भाव कि वर्ष का आदि मास है अतएव श्रीदशरथ महागज अश्वमे  
 याग चेत्रही में आरम्भ किए । वाल्मीकीय रामायण में लिखा ॥ २  
 देवतन के समूह आकाश में नगारा वजाइ पुष्पसमूह वरपत हैं । नगर  
 वजाइबे को यह भाव कि रावण के भय तें छिपे छिपे फिरत रहे



आजु नगारा, बजाइ प्रगटे औ श्रीकौशल्या जू आदि सब माता इर्षित हैं यह सुख वरनि नहीं जात है जाते चौथे पुन में पुत्र पाए याते मातन का सुख अकथनीय ठहराये ॥ ३ ॥ दशरथ महाराज पुत्रजन्म मुनि सब कुलवृद्ध औ ब्राह्मणों को बोलाय लिए । वेदविहित नांदीमुख श्राद्धादि परम शुचि क्रिया करि जो आनंद भयो सो उर में नहीं समात है । गुरुजन विप्र दोऊ विप्र बोलाइवे को यह भाव कि लौकिक क्रिया गुरुजन औ वैदिक क्रिया ब्राह्मण सम्हारैं ॥ ४ ॥ मधुर स्वर तें मुनि गृह में वेदधुनि करत औ बहु प्रकार ते बधाई वाजति है । पुरवासीप्रिय जो नाथ हैं तिन के हेतु अपनी अपनी संपदा लुटाई । प्रियनाथ कहिवे को यह भाव कि महाराज के पुत्र होए विना जो अनाथ रहे सो सनाथ भए ॥ ५ ॥ तोरन वंदनवार केतु ध्वजा पताका फरहरा वा केतु सचिन्ह जैसे विष्णु की ध्वजा में गरुड़चिन्ह औ शिव की ध्वजा में वृषचिन्ह औ पताका चिन्हरहित, मागध कथक, मृत पौराणिक, वंदी भाट ॥ “सूताः पौराणिकाः प्रोक्ता मागधा-वंशशंसकाः । वंदिनस्त्वमलप्रज्ञाःप्रस्तावसदृशोक्तयः” ॥ ६ ॥ सहज शृंगार जेहि भांति तें किए रहीं तैसहीं उठि धाई । मंगल विपुल हरदी दूर्वादि । सहज शृंगार को यह भाव कि मंगल बनाइवे के आनंद में शृंगार सजना भूलिगई ॥ ७ ॥ गलिन में केसर औ अरगजा को कीच है औ अगर का धुआं औ अवीर उड़त है औ देहदसा बिसराइ प्रेम में भरि पुर के नर नारि नाचत हैं ॥ ८ ॥ गज हाथी, तुरंग घोड़ा, जातरूप सोना, सिद्धि आणियादिक ॥ ९ ॥ देवता संत औ ब्राह्मण सुखी भए औ खलगण के मन में मलिनाई आई अर्थात् दुखी भए जैसे सूर्य के निकसत सब फूल फूलत है पर कोई को यन विलखात अर्थात् संपुटित होत है । भाव सपेदी भीतर जात स्याही ऊपर आयजात है ॥ १० ॥ जो मुख रूप समुद्र की एक बृंद ते शिव ब्रह्मा की मभुताई है सो मुख अयोध्या जी के दशो दिशा में उमांग रह्यो वा अयोध्याजी तें उमांगि के दशो दिशा में जाय रह्यो ताको कवन जतन तें गाइ कहाँ, भाव बृंद को जो भली भांति न जानै सो समुद्र को कैसे बखानै ॥ ११ ॥ जे रघुनाथ के चरन के चिन्तक हैं तिन की गति प्रगट देखि परति है

अर्थात् ज्ञानिन हों कहीं प्रगट न भए औ भक्तन के पुत्र है प्रगट-भए  
भाव जो स्वयं रथा सो परवदा भयो, अंतरालरहित निर्मल औ  
उपमारहित दृढ़ भक्ति तब तुलसीदास ने पाई । भाव केवल भक्ति करि  
रघुनाथ के प्रगटे तें कर्मज्ञान को भरोसा छोड़ि केवल भक्ति ही दृढ़  
करि लियो ॥ १२ ॥ १ ॥

राग जयतथी—सहेली सुनु सोहिलोरे सोहिलो सोहिलो  
सोहिलो सोहिलो सब जग आजु । पृत सपूत कौसिला जायो  
अचल भयो कुलराजु ॥ १ ॥ चैत चारु नौमोसिता मध्य गगन  
गत भानु । नपत जोग ग्रह लगन भले दिन मंगल सोदनि-  
धानु ॥२॥ व्योम पवन पावक जल थल दिसि दसहु सुमंगल-  
मूल । सुर दुंदुभी वजावहिं गावहिं हरपहिं वरपहिं फूल ॥३॥  
भूपतिसदन सोहिलो मुनि वाजे गहगहे निसान । जहं तहं  
सजहिं कलस ध्वज चामर तोरन केतु वितान ॥ ४ ॥ सींचि  
सुगंध रचे चौके गृह आंगन गली बजार । दल फल फूल दूब  
दधि रोचन घरघर मंगलचार ॥ ५ ॥ मुनि सानंद उठै दस-  
खंदन सकल समाज समेत । लिये बोलि गुर संचिव भूमिसुर  
प्रमुदित चले निकेत ॥ ६ ॥ जातकर्म करि पृजिं पितर सुर  
दिये महिदेवन दान । तेहि अवसर सुत तीन प्रगट भए मंगल  
मुद कल्याण ॥ ७ ॥ आनंद महं आनंद अवध आनंदवधावन  
होइ । उपमा कहे चारिफल की मोकीं भलो न कहै कवि कोइ  
॥ ८ ॥ सजि आरती विचित्र धार कर जूय जूय वरनारि ।  
गावतचली वधावन लैलै निजनिजकुलअनुहारि ॥९॥ असही  
दुसही मरहु मनहिमन वैरिन बढहु विपाद । नृपसुत चारि  
प्राक् चिरजीवहु संकरगौरिप्रसाद ॥ १० ॥ लैलै टोय प्रजा

प्रमुदित चलि भांतिभांति भरिभार । करहिं गान करि चान  
 राय की नाचहिं राजटुपार ॥ ११ ॥ गज रघ वाजि वाहिनी  
 वाहन सवनि संवारे साज । जनुरतिपति रितुपति कोसलपुर  
 विहरत सहितसमाज ॥ १२ ॥ घंटा घंटी पंपाठज भाउज  
 भांभू येनु डफ तार । नूपुरधुनि मंजीर मनोहर करकंकन  
 भानकार ॥ १३ ॥ नृत्य करहिं नटनटो नारिनर अपने अपने  
 रंग । मनहुं मदन रति विविध वेपधरि नटत मुदेस मुधंग ॥ १४ ॥  
 उघटहिं छंदप्रवध गीतपद रागतानबंधान । सुनि किन्नर  
 गन्धर्व मराहत विधके हैं विबुधविमान ॥ १५ ॥ कुंकुम अंगर  
 अरगणा छिरकहिं भरहिं गुलाल अवीर । नभ प्रसून भरि  
 पुरी कोलाहल भइ मनभावति भीर ॥ १६ ॥ बडौ वयस विधि  
 भयो दाहिनो गुरसुर आसिर्वाद । दसरथमुकृतसुधासागर सव  
 उमगे हैं तजि मरजाद ॥ १७ ॥ ब्राह्मण वेद बंदि विरुदावलि  
 जयधुनि मंगलगान । निकसत पैठत लोग परस्पर बोलत  
 लगि लगि कान ॥ १८ ॥ वारहिं मुकुता रतन राजमहिप्रो  
 पुर सुसुधि समान । वगरे नगर नेवछावरिमनिगन जनु जुवार्ति  
 जवधान ॥ १९ ॥ कौन्दि वेदविधि लोकरौति नृप मंदिर  
 परमहुलास । कौसल्या केकई सुमित्रा रहसविवसु रनिवास  
 ॥ २० ॥ रानिन दिण वसन मनि भूपन राजा सहनभंडार ।  
 मामध सूत भाट नट जाचक जहं तहें करहिं कवार ॥ २१ ॥  
 विप्रवधू सनमानि सुआसिनि जनपुरजन पहिराइ । सनसाने  
 अवनौस असीसत ईस रमेस मदाइ ॥ २२ ॥ अष्टसिद्धि नव-  
 निधि भूति सव भूरतिभवन कामाहिं । समउ समाज राजदंग-  
 रथ की लोकन सकल सिद्धाहिं ॥ २३ ॥ को कहि सकै अवध-

वासिन को प्रेम प्रमोद उच्छाहं । सारद सीस गनेस गिरीसहिं  
 अगम निगम अवगाह ॥२४॥ सिव विरंचि मुनि सिद्ध प्रसंसत  
 वडेभूप के भाग । तुलसिदास प्रभु सोहिलो गावत उमगि २  
 अनुराग ॥ २५ ॥ २ ॥

सहेली प्रति सहेली की उक्ति है । सहेली सखी वा सहेली सहेवाली  
 जेहि को यह उत्सव सोहात अर्थात् असही दुसही नाहीं । सोहिलो  
 कहैं उत्सव सष जगत में सोहिला है याते बहुवार लिखे वा पांच घेर  
 लिखे तें पांचो देवतन को उत्सव युक्त जनाए वा पंचभूत सब हर्षित  
 भए जे पहिले रावणादि करि दुखी रहे ताते पांचवार वा पहिले  
 सोहिलो रे जो लिखे सो मुनिवे में है फेरि चारि बार लिखे जातें  
 चारि भाइन का जन्मोत्सव है वा आनंद तें बहुवार लिखे । सपूत कहिबे  
 को यह भाव कि जन्मतै तीन भैयन को और बोलाए वा दिन ग्रहादि  
 भले तें जाने कि सपूती करैगे । अचल भयो कुलराज कहिबे को यह  
 भाव कि पुत्र भए बिना जो चल होत रखौ सो अचलभयो ॥१॥ शुक्ल  
 पक्ष पच्यान्ह काल औ बार मंगल आनंद को निधान है ॥२॥ आकास  
 वायु अग्नि जल औ थल करि पृथ्वी लेना औ दशोदिशा में सुमंगल  
 का मूल है आकाशादि पांचो लिखे तें पांचो भूतन को हर्ष जनाए ॥३॥  
 निसान नगारा चामर कहैं चमर वितान सामिआना ॥ ४ ॥ सुगंध  
 अतर गुलाबादि दल तुलसी विल्वपत्रादि फल सुपारी नारिअर आदि  
 रोचन गोरोचन वा रोरी ॥ ५ ॥ दशस्यंदन दशरथ महाराज निकेत  
 महल ॥ ६ ॥ जातकर्म नांदीमुखश्राद्ध जेहि में दही अक्षत से श्राद्ध  
 औ दुर्वादि जल से तर्पण होत है ताको करि पितर सुर पूजि ब्राह्मणन  
 को दान दिए । शंका । सूतक में पूजा औ दान कैसे किए । उत्तर ।  
 जब लौ नार नहीं छैना जाय तबलौ सूतक नाहीं लगत है । तेहि अवसर  
 में तीन पुत्र और प्रगट भए मंगल मुद कल्याण अर्थात् मंगल रूप  
 भरत जी मुदरूप लक्ष्मण जी औ कल्पान रूप शत्रुघ्न जी हैं ॥ ७ ॥  
 श्रीरघुनाथ के जन्म के आनंद महं तीनों भैयन के जन्म भयो ताते  
 आनंद महं आनंद लिखे । अजोध्या जी में आनंद युक्त वधाया होत है

चारों फल सम चारो भयन को कहे ते हम को कौज कवि भलों न  
 कहैगो अर्थात् जाको जन मोक्षादि दाता है जात तेहि को मोक्षादि की  
 उपमा कैसे संभवै ॥ ८ ॥ विचित्र धार अद्भुत धार वरनारि अहिवाती  
 कुलअनुहारि कुल के योग्य, भाव ब्राह्मणी सतोगुणी ठाठ से औ क्षत्रिया  
 रजोगुनी ठाठ से इत्यादि ॥ ९ ॥ असही कहे जो और की वंती  
 न सहि सकै दुसही कहैं दुख करि परवदती सहै वा दुसही दृष्ट ए सच  
 मन ही मन अर्थात् कुट्टि के मरहु औ घेरिन को विपाद् बढ़ौ ॥ १० ॥  
 ढोव कहैं भेंट की सामग्री अर्थात् अपने अपने जाति के अनुरूप जैसे  
 अहीर दही, वरई पान इत्यादि आन कहैं दोहाई ॥ ११ ॥ वाहिनी जो  
 सेना ताको वाहन जो नायक तिन ने हाथी रथ घोड़ा सवनि के साज  
 संचारे "वाहयतीति वाहनः" इस व्युत्पत्ति ते नायक को वाचक  
 संचारे "वाहयतीति वाहनः" इस व्युत्पत्ति ते नायक को वाचक  
 अयोध्या जी में समाज सहित विहरत है इहां समाज भूषण वसनादि हैं  
 बा-गजरथ औ सुरंगरथ औ वाहिनी वाहन अर्थात् घोड़ी घोड़ा  
 हथनी हाथी आदि सवनि के साज संचारे अपर पूर्ववत् ॥ १२ ॥ घंटा  
 हाथी आदि के घंटी हाथिन के झेला की औ सादनी पायक आदि की  
 आज कहैं तासा अरबी में तासा को आज कहत हैं, तार करताल  
 मंजीर पावजेय ॥ १३ ॥ अपने अपने रंग कहैं चाल तें अर्थात् संगीत  
 नाचनेवाले संगीत की चाल तें औ तांडव नाचनेवाले तांडव की चाल  
 तें इत्यादि । नट नटी नारि-नर नृत्य करत हैं मानौ काम रति बहुत  
 वेप धरि सुदेश कहैं सुंदर औ सुधंग कहैं सूपे अंग तें नाचत हैं अर्थात्  
 हाथ मुंह टेढा नाहीं होए पावत है वा सुधंग शुद्ध अंग नृत्य के ॥ १४ ॥  
 छंद औ प्रबन्ध औ गीत के पद राग तान वंधान पूर्वक उपदर्हि अर्थात्  
 गावहि जैसे ध्रुपद तिलाना है तैसे छंद प्रबन्ध गीत भी है संगीत ग्रंथन  
 में स्पष्ट वंधान कहैं लय अर्थात् गीत समाप्त पर्यन्त तान ताल बराबर  
 चला जाय वार बराबर भी भेद न पड़े सुनि के गंधर्व किन्नर सराहत  
 हैं कि अस हम नहीं गाय सकते औ देवतन के विमान विशेष थकि  
 गण अर्थात् अचल है गण भाव जो स्वर्ग में नहीं सुने रहे सो सुने तातें  
 मोहि रहे ॥ १५ ॥ तीसुर आदि से अति मेही औ अति लाल जो बनत

ताको गुलाल कहत हैं औ तेहि से कम लाल औ मोटा जो जोन्हरी आदि के पिसान से बनत है ताको अवीर कहत है । कोलाहल अधिक शब्द । मनभावती भीर जो भीर बहुत दिन से चाहत रहे सो भई ॥ १६ ॥ बड़ी बयस साठि हजार बरिस की अवस्था में गुरु औ देवता के आर्शिर्वाद ते विधाता दाहिनो भयो “ पाष्टि वर्षसहश्राणि जातस्य मम कौशिक ” इति श्रीमद्रामायणे । महाराज दशरथ के भ्रुकृत रूप जे अमृत के सब समुद्र हैं अर्थात् चारो समुद्र, ते मर्याद कर्हें किनारा छोड़ि उमगै भाव जैसे समुद्र जो किनारा छोड़ि उमगै तो सब जग डूबि जाय सो एक को को कहे सब सुकृत समुद्र उमगे एहि तें यह व्यंजित किए कि सब ब्रह्माण्ड आनंद में डूबि गयो ॥ १७ ॥ विरदावली यश । लगि लगि कान कहिवे को यह भाव कि वेदादि धुनि तें जो महाशब्द भयो तातें सुनात नार्हौ कान में लगि जब जोर सें बोलत हैं तब सुनात है ॥ १८ ॥ मोती जवाहिर आदि श्री महाराज की पटरानी औ पुर की स्त्रीगन समान नेवछावर करहि । एहि तें यह जनाए कि पुरवासिनिनि को भी आनंद महारानिन के तुल्यै भयो नेवछावर करत में जो गिरे मनिसमूह ते बगरे कर्हें छितिराने नगर में ज्वार जोन्हरी औ जब धान के समान ॥ १९ ॥ मंदिर में परम हुलास पूर्वक वेद लोक रीति महाराज कीन्हे अर्थात् वेदरीति जातसंस्कार अभ्युदयिक श्राद्धादि पूतना रक्षणदि, लोकरीति नार गाड़व औ राई नोन वारव औ चौकी हेतु आगि आदि राखव, सब रनिवास कौशल्य कर्केई सुमित्रा आदि रहसविवश कहिए हर्ष के विशेष बस भई ॥ २० ॥ सहन कर्हें संपूर्ण कवार कर्हें यश ॥ २१ ॥ पुआसिनि कर्हें सावित्री कन्यार्वर्ग, जन दासादि, पुरजन पुरवासी, अवनशि दशरथ महाराज ईश शिव रमेश विष्णु ॥ २२ ॥ आठो सिद्धि औ नवो निधि सब ऐश्वर्य युक्त महाराज के भवन में कर्माहि कर्हें परिचर्या करत हैं । लोकप इन्द्रादि । “अणिमा महिमा चैव गरिमा लघिमा तथा । भास्तिःभाकाम्यमीशित्वं वशित्व-श्चाष्टिसिद्धयः ॥ पद्मो स्त्रियां महापद्म शङ्खोमकरकच्छपी । सुकृन्दुकृन्दीलाथ खर्वथ निधयोनव ॥ इति शब्दार्णवे” २३ गिरीश शिव अगम शास्त्र निगम वेद इन्ह को अथाह है व शिवादि को अगम वेद को अथाह है २४।२५।२

राग विलावल—आजु महामंगल कोसलपुर सुनि नृप  
 के सुत चारि भये । सदन सदन सोहिलो सुहावन नभ अरु  
 नगर निसान हये ॥ १ ॥ सजिसजि जान अमर किन्नर मुनि  
 जानि समयसम गानठये । नाचहिं नभ अपहरा मुदित मन  
 पुनिपुनि वरपहिं सुमनचये ॥ २ ॥ अति सुष वेगि वीलि गुर  
 भूसुर भूपति भीतर भवन गये । जातकर्म करि कनक वसन  
 मनि भूपित सुरभिसमूह दये ॥ ३ ॥ दल रोचन फल फूल  
 दूव दधि जुवतिन्ह भरिभरि थार लये । गावत चलीं भीरु भद्र  
 वीधिन्ह वंदिन वांकुरि विरद वये ॥ ४ ॥ कनककलस चामर  
 पताक ध्वज जहंतहं वंदनवार नये । भरहिं, अवीर अरगजा  
 छिरवाहिं सकललोक एकरंग रये ॥ ५ ॥ उमगि चलयो आनंद  
 लोक तिहुं देत सबनि मंदिर रितये । तुलसिदास पुनि भरेइ  
 देपियत रामकृपाचितवनि चितये ॥ ६ ॥ ३ ॥

हये कहैं वजे ॥ १ ॥ समैसम गान ठये अर्थात् सोहरादि गान  
 ठाने, चये समूह ॥ २ ॥ सुरभी धेनु ॥ ३ ॥ वांकुरिविरद उत्कृष्ट यश,  
 घये कहैं घदे ॥ ४ ॥ रए रंगे ॥ ५ ॥ रितये खाली किये ॥ ६ ॥ टिप्पणी—जान  
 विमान । अमर देवता । सुमनचये सुमन के समूह । भूसुर ब्राह्मण ।  
 जातकर्म नंदीमुख शार्द । दल तुलसी । रोचन हलदी । फल सुपारी  
 नारियल । जुवतिन्ह युवा स्त्रीगण । वीधिन्ह गलियों में । घये कहे वा  
 किये । कनककलस सोने का फलस । तीनों लोक में आनंद उमड़ चला ।  
 सभी अपना २ घर खाली करके दान देने लगे । तुलसी दास जी  
 कहते हैं कि श्री रामचन्द्र की कृपा दृष्टि से फिर भरे के भरे देख पड़ते  
 हैं ।

राग शयतत्री—गायें विमल विद्युध वरयानी । भुयन कोटि  
 कन्धुान कंटु जायो पुत कोसिलारानी ॥ १ ॥ मास पाप

तिथि धार नपत यह योग लगन सुभ ठानी । छल धल  
 गगन प्रमन्न साधु मन दमदिसि द्विय हुलमानी ॥ २ ॥ वर  
 पत मुमन वधाय नगर नभ हरप न जात वपानी । ज्यौं  
 हुलास रनिवांसनरेमहिं त्यों जनपद रजधानी ॥ ३ ॥ अमर  
 नाग मुनि मनुज सपरिजन विगतविषाद गलानी । मिलिहि  
 सांभ रावन रजनीवर लंकसंक अकुलानी ॥ ४ ॥ देवपितर  
 गुरुविप्र पृजि नृप दिवेदान रुचि जानी । मुनि वनिता पुर-  
 नारि मुधासिनि सहसभांति सनमानी ॥ ५ ॥ पाद अघाद  
 असीसत निकसत जाचकजन भए दानी । यों प्रसन्न केकई  
 मुमिबहिं हीहुमहिस भवानी ॥ ६ ॥ दिन दूसरे भूप भामिनि  
 दोड भई मुमंगलपानी । भयो सोहिलो सोहिलो मो जनु सधि  
 सोहिले सानी ॥ ७ ॥ नाचत गावत भो मनभावत सुप  
 सुअवध अधिकानी । देत लेत पहिरत पहिरावत प्रजा प्रमोद  
 अघानी ॥ ८ ॥ गान निसान कीलाहल कीतुक देपत दुनी  
 सिधानी । हरि विरेचि हरपुर सोभाकुलि कोसलपुरी लुभानी ॥  
 आनंद अवनिराजरवनी सव मागहु कोपि जुडानी । आसिप  
 दैद्रे सराहहिं सादर उमा रमा ब्रह्मानी ॥ १० ॥ विभवविलार  
 वाठि दसरथकी देपि न जिनहिं सोहानी । कीरति कुसल भूति  
 जय रिधि सिधि तिन्ह पर सवै कीहानी ॥ ११ ॥ छठी बारहौ  
 लोकवेदविधि करि सुविधानविधानी । राम लपन रिपुदमन  
 भरत धरे नाम ललित गुरज्जानी ॥ १२ ॥ सुकृत सुमन तिल  
 मोद वासि विधि जतन जंत्र भरि धानी । सुपसनेह सव  
 दियो दसरथहिं परि पल्लि धिर धानी ॥ १३ ॥ अनुदिन  
 उदय उकाह उमग जग घरघर अवधकहानी । तुलसी



रामजन्मजस गावत सो समाज उर पानी ॥ १४ ॥ ४ ॥

विबुध देवता कल्याण कंद कल्याण के मूल वा मंत्र जायो उत्पन्न कियो ॥ १ ॥ सुभ ठानी शुभस्थानी । जल थल आकाश आ साधुन के मन प्रसन्न होत भयो औ दशो दिशा को हृदय हुलसत भयो । शंका । जलादि प्रसन्न कैसे भए । उत्तर । जल निर्मल भयो पृथ्वी कृपी संपन्न भई, गगन मेघादिरहित भयो, सोई प्रसन्न होना है ॥ २ ॥ जनपद देश राजधानी अयोध्या ॥ ३ ॥ देवता नाग मुनि मनुज परिवार सहित, विपाद गलानि रहित भए औ रावण राक्षसों के मिलेहिं माझा अर्थात् फुट बिना लंका शंका तै अकुलात भई 'मिलेहिं माझाविधि वात विगारी' जैसे यह चौपाई में मिलेहिं माझ का अर्थ है तैसे इहां जानना । वा जब देवता आदि विपाद गलान रहित भए सो विपाद गलानादि रावन रजनीचर के माझ मिलेहिं ते अर्थात् डेरा किए ते लंका शंका तै अकुलात भई ४।५।६ दूसरे दिन महाराज की दोऊ भामिनी कैकेयी जू सुमित्रा जू सुमंगल की खानि भई अर्थात् श्री राम जी के दूसरे दिन दशमी को पुष्य नक्षत्र मीन लग्न में श्री भरत जी को प्रादुर्भाव भयो । भरत जी के दूसरे दिन एकादशी को श्लेषा नक्षत्र कर्क लग्न में लक्ष्मण जी शत्रुघ्न जी को प्रादुर्भाव भयो । उत्सव में उत्सव भयो मानो सृष्टि उत्सव में सानी है श्री मद्रामायणे "पुष्येजातस्तु भरतो मीनलग्ने प्रसन्नयोः सार्षे जातौ तु सौमित्री कुलीर भ्युदिते रवौ । पाञ्चऽन्येद्युःपाञ्चजन्यात्मा कैकेय्यां भरतोऽभवत् । तदन्येद्युःसुमित्राया मनन्तात्मा च लक्ष्मणः । सुदर्शनात्मा शत्रुघ्नो द्वौ जातौ युगपत्प्रिये ॥" अतएव श्री गोसाईजी छठी तीन दिन में स्पष्ट लिखे त्यों आजु कालि हूं परों जागर होहिंगे नेवते दिए । शंका । पहिले तेहि अवर सुत तीन प्रगटभए मंगल मुद कल्याण एहि पद में एकै दिन सब भाइन का जन्म जनाए औ इहां तीन दिन में कहे सो कैसे । उत्तर । कल्पांतर करि याको व्यवस्था जानना ॥ ७ ॥ प्रमोद आनंद ॥ ८ ॥ दुनी संसार, कुलि सब ॥ ९ ॥ पृथ्वीपति की रानी आनंदित भई माग कोख ते जुड़ात भई । भाव माग तो पति ते जुड़ाने रह्यो पर पुत्र भए ते कोखिउ करि जुड़ानी वा आनंद की भूमि जे सब महाराज की रानी ते भाम आ कोखि ते जुड़ात भई । रमा उमा ब्रह्मानी

सराहिंसे को यह भाव कि विश्व के पिता को पुत्र बनाए ताते धन्य ॥ १० ॥ विभव का विस्तार औ बंग की वृद्धि दशरथ महाराज देखि कै तिन को न सोहानी निन्द पर यज्ञ मंगल ऐश्वर्य जय रिद्धि औ अणिमादिक सिद्धि सर्व काहानी भाव ए सब ताको त्याग किए ॥ ११ ॥ कृष्ण ज्ञानी विधानी जो श्री बशिष्ठ जू सो छटी औ बरही की लोक वेद विधि को सुंदर विधान नै करि राम लपन रिपुद्वन भरत सुंदर नाम करे । इहां छन्दोनुसंध ते क्रमपूर्वक नाम न लिखे ॥ १२ ॥ पहिले तिल फूल में घासा जात है फेर पेरा जात है तत्र फुलेल होत है ताको रूपक कहत हैं ब्रह्मा ने मुकृत रूप सुगंध दार फूल में आनंद रूप तिल को आसि कै यन्न रूप फोल्ह में घानी भरि पेरिके मुख रूपी फुलेल दशरथ महाराज को दिए औ खरी औ खलेल फई फोकट जो सो धिरधानी फई देवता तिन को दिए ॥ १३ ॥ प्रति दिन उछाह को उदै औ उमंग है औ जगत में घर घर अयोध्या जी की कहानी है रही है सो समाज उर में आनि कै तुलसी रामजन्मयश गावत है । भाव जाते हमारे हृदय में भी उछाह को उमंग उदय होय ॥ १४ ॥ ४ ॥

टिप्पणी—महाराज ने देव पितर गुरु और ब्राह्मणों को पूजि कै रुचि जान अर्थात् रुचि अनुकूल दान दिये । मुनिपतनियों को और पुर की नारियों और सुआसिनियों का अनेक प्रकार से सम्मान किया याचकों को इतना दान दिया कि वे लोग आशीर्वाद देते हुए दानी होकर राजद्वार से निकलते हैं अर्थात् इतना अधिक दान मिला और ऐसा आनन्द कि वे लोग भी दानी हो गये । आशीर्वाद में कहते हैं कि हे महेश भवानी ! ऐसेही केकई और सुमित्रा पर प्रसन्न होहु ।

रागवीदारा—अवध बधावने घर घर मंगल साज समाज । सगुन सोहावने मुदित करत सब निज निज काज ॥ छंद ॥ निजकाज सजत संवारि पुर नर नारि रचना अनगनी । गृह अजिर अटनि बजार वीधिन्ह चारुचौके विधिघनी ॥ चामर पताक वितान तोरन कलस दीपावलि वनी । सुष सुकृत सोभामयपुरी विधि सुमति जननी जनु जनी ॥ दो०—चैत

चतुरदश चांदनी, अमल उदित निसिराजु । उडंगन चतु  
 लसी दस दिसि, उमगत आनन्द आनु ॥ छन्द । आन  
 उमगत आनु विबुध विमान विपुल बनायकै । गावत बना  
 नटत हरषत सुमन वरपत आडकै ॥ १ ॥ नर निरधि क  
 सुर पेधि पुर छवि परस्पर सजुपाडकै । रघुराज साज सरा  
 लोयनलाहु लेत अघाडकै ॥ २ ॥ दो०—जागिय राम हठी  
 सजनोरी, रजनी रुचिर निहारि । संगल मोद मठी मूरति  
 जहं नृपबालक चारि ॥ छंद—मूरति मनोहर चारि विरति  
 विरंचि परमारथमई । अनुरूप भूपहि जानि पूजन योग विरि  
 संकर दई । तिन की छठी मंजुल मठी जगसरस जिन्ह की  
 सरसई । किए नींद भामिनि जागरन अभिरामिनी जामिनि  
 भई ॥ ३ ॥ दो०—सेवक सवांग भये समय, सुसाधनसवि  
 सुजान । सुनिवर गुरु सिपये लौकिक, वैदिक विवि  
 विधान ॥ छंद । वैदिकविधान अनेक लौकिक आचरत सु  
 जानिकै । बलिदान पूजा मूलिकामनि साधिराषी आनिकै ।  
 जे देव देवी सेइयत हितलागि चितसनमानिकै । ते तंत्रसं  
 सिपाइ रापत सवन सो पहिचानिकै ॥ ४ ॥ दो० । सकल  
 सुआसिनि गुरजन, पुरजन पाहुगे लोग । विबुध बिलासिनि  
 सुरमुनि, जाचक जो जेहि जोग ॥ छंद । जेहि जोग जे तेहि  
 भांति ते पहिराइ परिपूरन किए । जे कहत देत असीस  
 तुलसीदास ज्यौं हुलसतहिए ॥ ज्यौं आनुकालिहु परंव जागर  
 होहिने नेवते हिए । ते धन्य पुन्यपयोधि जे तेहिसमै सुपजीवन  
 जिए ॥ दो० । भूपतिभागवलो सुरनर, नाग सराहि सिहाहि  
 तिशवरवेप अक्षी संपति, सिधिननिमादिक माहिं ॥ छंद ।

प्रनिमादि सारद सैलनंदिनि वाख लालहि पालहीं । भरि  
जनम जी पाये न ते परितोष उसा रमा लही ॥ निजलोक  
विसरे लोकपनि घर कौन चरचा चालहीं । तुलसी तपत  
तिहुताप जग जनु प्रभु छठी छाया लही ॥ ६ ॥ ५ ॥

अब छठी लिखत हें, कवि की उक्ति है । अबध में मंगल साज  
समाज औ वधावा घर घर है औ निज निज काज करत सधुन सोहा-  
वने होत ताते सब मुदित हें । पुर नर नारि अगनित रचना संवारि  
कै जाको जो काज ताको सजत हें । गृह आंगन अटारिन बजार औ  
गलिन में घनी विधि ते सुंदर चाँकें औ चवंर पताका चंदवा बंदनवार  
फलश औ दीपावली बनी है । सुख सुकृत सोभामय पुरी जो श्री  
अयोध्या जू तिन को ब्रह्मा जू की सुंदर मति रूपा जननी ने माने  
उत्पन्न करी है ॥ अब सखी प्रति सखी की उक्ति है । आज उजेरी  
चैत चतुर्दशी को निर्मल अर्थात् धूम मेघ आदि रहित निशिराज कहें  
चन्द्रमा प्रकाशमान हें औ तारागण की पंक्ति सोभित भई है औ दशो  
दिशा में आनंद उमगत है आजु देवता अनेक बिमान बनाय के आनंद  
उमगत गावत बजावत नाचत हर्षित होत आय के सुमन चर्पत हें ॥१॥  
नर आकाश देखि औ देवता पुरछवि देखि परस्पर आनंद पाय रघु-  
राज को साज सरादि अघाय कै लोचन लाभ लेत हें ॥२॥ री सखी  
राम छठी की राति सुंदर निहारि के जागिए । मंगल औ मोद सोई  
मंदिर है मंदिर में भूरति रहति है, इहां महाराज के चारों बालक सोई मूर्ति  
हैं परमार्थ रूप मनोहर चारि मूर्ति ब्रह्मा सुंदर रचिके ताके अनुरूप  
महाराज दी को पूजन योग्य जानि ब्रह्मा शिव मिलि दई तिन की  
छठी सुंदर मंदिर में है वा तिन की छठी मंजुल कहें सुंदर मंदिर है  
औ जिन्ह की सरसई करि जगत सरस है सो नौद किए औ भामिनि  
जागरन किए ताते रमणीया रात्रि भई वा जिन्ह की सरसई ते जगत  
सरस है तिन्ह की छठी रूप सुंदर मदी में आर को को कहें नौद  
रूपा भामिनि भी जागरन किये ताते रमणीया रात्रि भई ॥३॥ सबक  
समय के सुंदर सापनहारि औ साचिब मुजान सब सजग भए तिन के

मुनिवर जे गुरु ते लौकिक वैदिक अनेक प्रकार के विधान सब मुनि जानि के अनेक वैदिक लौकिक विधान को आचरन हैं वलिदान पूजाहंतु औ जड़ी औ मणि आनि के साधि हित लागि चित ते सनमानि के जे देव देवी सेइयत है ते देव तंत्र मंत्र सवनि सो पहिचानि के सिखाय राखत । पहिचानि के को यह भाव कि जेहि देवता में जाकी प्रीति है वा ते देव देवी मुनिवरन सो पहिचान करि के अपना २ जंत्र मंत्र सिखाय राख सिखाइवे को यह भाव कि जो एहिवार न पूजे जाहिगे तो कोऊ पूजैगो ॥४॥ संपूर्ण सोहागिनि श्रेष्ठवर्ग पुरजन पाहुन विलासिनि कहैं देवपत्नी देवता मुनि औ याचक लोग जो जेहि के हैं तेहि को तेहि भांति बस्त्र भूषणादि पहिराय परिपूरण किए तुलसीदास को हृदय हुलसत है तैसे हुलसत हिए जय कहत असी देत हैं औ नेवता दिए कि ज्यों आजु जागरन भयो है अर्थात् राम की छठी को तैसे काल्ह श्री भरतकी छठी को औ परी श्रीलक्ष्म शत्रुहन की छठी को जागरन होहिगे, अब गोसाईं जी कहत हैं ते पुन हैं औ पुन्य के समुद्र हैं जे तेहि समय में सुखपूर्वक जीवन ते वि अर्थात् वहि उत्सव में जे रहे ॥५॥ संपति कहैं लक्ष्मी औ सिद्धि अणि मादि ते स्त्री सखी को श्रेष्ठ वेप करि कमाति हैं अर्थात् दासीपना कराति हैं औ अणिमादि सिद्धि औ सरस्वती औ पार्वती श्री बालराज को छालत पालत हैं जन्म भरि में जे परितोष न पाए ते परितोष जग रमा लहत भई अर्थात् पुत्र खेलायवे को सुख न पाए रही सो पाई औ इंद्रादिक अपने लोक को भूले, जावे को को कहैं घर की चरचा तब नहीं चलावत हैं । गोसाईं जी कहत हैं मानो तीनों ताप में तपत संसार मसुछठी की छाया पाई है ॥ ६॥५ ॥

राग जयतश्री—वाजत शवध गहागहे आनंद बधायै ।  
 नामकरन रघुवरनि के नृप सुदिन सोधाए । माय रजायस  
 राय को रिपिराज बोलाए ॥ सिध्य सचिव सेवक सया  
 सादर सिरनाए । साधु सुमति समरथ सवै सानंद

हल दल फल मनि मूलिका कुनि काज लिपाए ॥ १ ॥  
 गनप गौरि हर पृजिकै गोहृष्ट टुहाए । घर घर मुद मंगल  
 महागुनगान सुहाए । तुरित मुदित जहं तहं चले मन के  
 भए भाए । सुरपति मामनु घन मनो मारुत मिलिधाए ॥२॥  
 गृह पांगन चौष्ट गली वाजार बनाए । कलस चनर तोरन  
 ध्वजा मुदितान तनाए ॥ चित्र चारु चौकै रची लिपि नाम  
 जनाए । भरि भरि सरवर वापिका अरगजा सनाए ॥ ३ ॥  
 नर नारिन्ह पल चारि मै मव साल सजाए । दशरथपुर छवि  
 आपनी मुरनगर जजाए ॥ विद्युध दिमान बनाइके आनंदित  
 पाए । हरपि सुमन वरपन लगे गये धनु जनु पाए ॥४॥ वरे  
 विप्र चहुं वेद के रविकुल गुर ज्ञानी । आपु वशिष्ठ अथर्वनी  
 सहिमा जग जागी ॥ लोकरीति विधिवेद की करि कछी  
 सुवानी । मिनु मनेत वेगि कोलिये कौसल्या रानी ॥ ५ ॥  
 सुनत मुधासिनि लै चलीं गावत बडभागी । उमा रमा  
 सारद सची देपि सुनि अनुरागी । निज निज रुचि वेप  
 विरचियेँ छिजि मिलि संग लागीं । तेहि अवसर तिहुंलोक  
 की मुदसा जनु जागीं ॥ ६ ॥ चारु चौक बैठत भईं भूप  
 भामिनि सोहैं ॥ गोद मोद मूरति लिये मुकती जन जोहैं ।  
 सुप सुपमा कौतुक कला देपि सुनि मुनि मोहैं । सी समाज  
 कहै वरनिकै ऐसी कवि कोहैं ॥ ७ ॥ लगे पठन रचारिचा  
 रिपिराज विराजे । गगन सुमन भरि जय जये बहु वाजने  
 वाजे ॥ भए अमंगल लंक मै संक संकट गाजे । भुवन चारिदस  
 की वडे दुप दारिद भाजे ॥ ८ ॥ बाल बिलोकि अथर्वनी

इति हरि 'वनायो । मुम को मुम मोद मोद को रामना  
 मुनायो ॥ आन वाल कल कोमिजा दद वरन सुहायो  
 दंद नन्दन आनंद को जनु चंकुरि पायो ॥ ८ ॥ ओहि वारि  
 वपि जोरि कै करपुट सिर राये । जय जय त्रय कर्णानि  
 सादर सुर माये ॥ सत्यसंध सांचे सदा जे आयर आये ॥ प्रनत  
 पात्र पाये सही जे फल अभिलाये ॥ १० ॥ भूमिदेव दे  
 देपि कै नरदेव सुधारी । गोवि सचिव सेवक सषा पठधरि  
 मंडारो ॥ देहु दाहि तेहि चाहिए नन नानि संभारी । कर्  
 देन हिय हरिकै हेरि हेरि इंचारी ॥ ११ ॥ राम नेवकावलि  
 लेन को इठि होत मिधारी । बहुरि देत तेहि देपिये मानपु  
 धनधारी ॥ भरतलपनरिपुद्गनहूं धरे नाम विचारी । फल  
 दायक फल चारि के दसरय सुतचारी ॥ १२ ॥ भये भूप  
 शालज्ञानि के नाम निरुपम नीके । गये सोच संकट मिटे त  
 तें पुरती के ॥ सुफल मनोरय विधि किये सब विधि सबहीके ।  
 अब छैहैं गाये मुने सब की तुलसी के ॥ १३ ॥ ६ ॥

कवि की लक्ति । आनंद बधावा अवध में गहागह वाजत है । गहागह  
 यह अतुकरण है चारो भाइन के नामकरण के हेतु । महाराज सुंदर दिन  
 सोभावत भए । महाराज की आज्ञा पाय भी बसिष्ठ जू के शिष्य औ  
 महाराज के मंत्री दास सत्वा बोलवावत भए ते आइ सादर शिर नवाप  
 ते सब साधु समर्थ को बसिष्ठ जू आनंद सहित सित्वावत भए । भाव  
 वस्तु आनै की विधि समुद्रादि जल वृलसी दुर्वा चित्वादि दल सोपारी  
 आदि फल पंच रत्न आदि मणि सतावरी आदि जड़ी और जे संपूर्ण  
 क्षान के वस्तु लिखाइ दिए ॥ १ ॥ गनेश गौरी भी शिव जी को पूजि  
 कै गाइन को दुहाए । घर घर में महा आनंद मंगल औ गुन के गान सुंदर  
 ५ । मन के भाए भए ते सचिव सेवकादि जहां तहां हरित हर्षित

चले मानो इंद्र की आज्ञा तें मेघ पवन मिलि करिधाए । २। यह आदि सुगम ।  
 विचित्र सुंदर चौकें रचि कै नाम लिखि जनावत भए, अर्थात् यह चौक  
 श्री राम की है यह श्री भरतादि भैयन की है औ तलाव वावली में  
 अरगजा भरि भरि के सनाए ॥ ३ ॥ एतना बड़ा काज सो चारि पल  
 में नर नारि सब मजाए । दशरथपुर ने अपनी छवि तें इन्द्रलोक को  
 लज्जित किए अतएव देवता विमान बनाय के आनंदित आए । भाव  
 लजीली पुरी में रहना उचित नहीं । हर्षि के फूल बरखन लगे, मानो गए  
 धन पाए ॥४॥ वशिष्ठ जी ने बरे कहैं नेवता दिए चारो वेद के ब्राह्मणों  
 को औ आप वशिष्ठ जो अथर्वनी हैं जाकी महिमा जगत जानत है सो  
 लोकराति औ वेद की विधि करि सुन्दर बानी ते कहे । सिसुइ० सु० ॥५॥  
 सुनत मात्र सुआसिनी बडिभागिनी गावत ले चली । पार्यती लक्ष्मी  
 सरस्वती इन्द्रानी स्वरूप देखि गान सुनि कै अनुरागत भई । अपनी २  
 रुचि अनुसार बेख बनाय हिलि मिलि संग लागत भई तेहि अवसर में  
 तीनों लोक की मानो सुंदर दशा जागी । भाव चौकठ के बाहर होते  
 सुंदर दसा जागी तो जब घर के बाहर निकसैगे तब क्या जानै क्या  
 होयगो, बरही के दिन आगन में निकालवे की रीति है ॥ ६ ॥ सुंदर  
 चौके में भूपभाभिनी बैठत भई गोद में आनंद की मूर्ति लिए सोभत  
 हैं जेहि मूर्ति को मुकृतीजन देखत हैं, सुख औ परम शोभा औ कौतुक  
 की कला देखि सुनि के मुनि मोहत हैं । सो इ० सु० ॥७॥ विराजे शोभे  
 संक संकट गाजे कहैं संका औ संकट गाजत भए ॥ ८ ॥ बालक को  
 देखि अथर्वणी ने शिव को जनायो जो शुभ को शुभ मोद को मोद राम  
 नाम है, सो हंसि के सुनायो माता पिता आदि को सुनायो, हंसने को  
 यह भाव कि, इन का नित्य नापें जो है, ताको अब धरत हौं । पाद्ये-  
 “श्रियः कमलवासिन्याः रमणोऽयं पतो हरिः । तस्मात् श्रीराम इत्यस्य  
 नाम सिद्धं पुरातनम् ॥ सहस्रनामसदृशं स्मरणान्मुक्तिदं नृणाम् ॥ ”  
 वशिष्ठ को अथर्वनी रघुवंश में भी लिखा है । “अथाथर्वनिधेस्तस्य विजि-  
 तारिपुरः पुरः । अर्ध्यामर्धपतिर्वाच माददे वदतां वरः ॥ ” अथर्वनी  
 कहिवे ते, पुरोहित कृत्य के ज्ञाता जनाये, तथा च कामन्दके—“व्रथां  
 च दण्डनीत्यां च कुशलः स्यात्पुरोहितः । अथर्वविहितं कुर्यां दित्यं प्रांति-



कंपौष्टिकम् ॥” तीनों वेद में, औ राजनीति में, प्रवीन होय, सो पुरोहित अथर्वण वेद करि विहित शांतिक पाँष्टिक कर्म करै। थाल्हा रूप सुंदर श्री कौशल्या जू हैं, तिन में सकल आनंद को मूल, मानो अंकुर आयो है। इहां अंकुर के स्थान में बाल श्री राम हैं, अंकुर ते दुइ दल निकसत हैं, खो इहां राम नाग के सुंदर दोऊ अक्षर हैं ॥९॥ श्री रामजी को देखि के, औ वशिष्ठ जी के कहिये ते, नाम जानि के ताको जपि कै ब्रह्मपुट ज्वारि सिंर पर राखे, अर्थात् प्रणाम किए, हे करुणानिधे, हे सत्यसंध, हे प्रणतपाल, आप की जय होय जय होय, आदर सहित देवता भांषे, आप जे आपर आपे कहैं, कहे अर्थात् “जनिं ढरपहु मुनि सिद्ध सुरेसा । तुमहि लागि धरिहैं नरवेसा ॥” इत्यादि ते सदा सांचे, जे फल अंभिलापे रहे ते ठीक पाए, अर्थात् आप के अवतार के अंभिलापे रहे सो पाए ॥१०॥ ब्राह्मण औ देवतन को देखि कै सुखी जोनरदेव सो संचिन सेवक सखापटधारी बखन के अधिकारी, औ भंडारी अन्नादिक के अधिकारी घोलाय के आज्ञा दिए ॥ ११ ॥ धनधारी कुवेर ॥ १२ ॥ भूप के बालकन के उपमा रहित नीके नाम भए, तब ते पुरातियन के सोच गये, ओ संकट मिटे, भाव सूतिकाग्रह में अनेक विघ्न को भय रहत है, औ खियन को भीरु सुभाव भी होत है, ताते डरी रहैं सो वरही कुशलपूर्वक समाप्ति भई, ताते सोच गयो, वा शुभ को शुभ मोद को मोद राम नाम मुनि सोच रहित भई ॥ १३ ॥ ६ ॥

राग बिलावल—सुभग सेव सोइति कौशल्या रुचिर राम सिमु गोद लिये । वार वार विधु वदन विलोकति लोचन चारु चकीर किये ॥ १ ॥ कबहुं पौंठि पय पान करायति कबहुं रापति लाय हिये । बालकलि गावति हलरावति पुलकित प्रेम पियूप पिये ॥ २ ॥ विधि महेस मुनि सुर सिंघात सब देपत अंबुद ओट दिये । तुलसिदास ऐसी रुप रघुपति पै काहूं तो पायो न किये ॥ ३ ॥ ७ ॥

कवि की उक्ति । विधु चंद्र ॥१॥ श्री राम प्रेम रूप अमृत को पिए,

तो श्री कौमल्या जूने वाल्मीक्या के पद गावति, औ श्री रघुनाथ को हाथ पर गुलाबनि, औ रामांचिन हांति हैं, भाव हरे ते ॥ २ ॥ बादर के अंड देड देखिने को यह भाव कि, मत्वध होय देखिने ते माता हम लोगों के ओर दृष्टि करैगी, तो यह मुख जान रहैगो, ऐसा मुख रघुपति से बिये कहैं, दूमेरे ने न पायो ॥ ३ ॥ ७ ॥

राग सौगठ — छै छी लाल कवहिं बडे बलि भैया । राम लपन आवत भरत रिपुदहन चारु चाख्यो भैया ॥ १ ॥ घाण विभूपन बसन मनोहर अंगनि विरचि बनैहीं । सीमा निरपि निछावरि करि उरलाय वारने जैहीं ॥ २ ॥ छगन मगन अगना पेलिही मिलि ठुमुकि ठुमुकि कव धैहीं । कलवल वचन तोतरे मंजुल कहि मा मोहि बुलैहीं ॥ ३ ॥ पुरजन सचिव राउ रानी सब सेवक सपा सहेली ॥ लैहै लोचनलाह सुफल लपि ललित मनोरथ भेली ॥ ४ ॥ छी सुप को कालसा छटू सिव मुका सनकादि उदासी । तुलसी तेहि सुप सिम्बु कोसिला मगन पै प्रेम पिपासी ॥ ५ ॥ ८ ॥

भैया बलिजाय, हे लाल, कव बडे है हो। भाषते कहैं सोहाते ॥१॥ घाल विभूपन कटला जामे बजर बट्ट बघनहा आदि रहत है, औरो पदिक दारादि अनेक, औ बसन झिगुलिया चौतनी आदि मम के हरैया अंगन में विरचि के बनावौंगी, वा अंगनि को भी विशेष रचि धरै हैं भाव चोटी गांठि उधटि टिठौना आदि दै शोभा देखि नेयछावर करि उरलाय फिरि आपे नेयछावरि होय जैहो ॥ २ ॥ छगनमगन एक खेल विशेष है, कल बल जो बुद्धि के बहुत कला औ बल से बुझाय तोतरे आंध और के और कहे सोई स्पष्ट करत हैं, कहि मा मोहि बुलै हो अर्थात् माय स्पष्ट न कहि मा कहि बोलैहो ॥ ३ ॥ पुरजन सचिव आदि सुंदर मनोरथ रूप लता में सुंदर फल देखि लोचन लाहु लैहैं हैं, इहां सचिव पद से आगे मंत्री जानना, वाल्मीकीये—

“ धृष्टि र्जयंतो विजयः सुराष्ट्रो राष्ट्रवर्द्धनः । अशोको धर्मपालश्च  
सुमंत्रश्चाष्टमो महान्” ॥४॥ लालसा मे लटू हैं, भाव जैसे एकें ठांव घूमत  
धूमत लटू अचल रहत ॥ ५ ॥ ८ ॥

पञ्चनि कव चलिहो चारो भैया । प्रेम पुलकि उर लाइ  
सुभन सव कहत सुमित्रा भैया ॥ १ ॥ सुंदरतन सिसुवसन  
विभूषन नय सिध निरधि निकैया । दलिचिन प्रान नेछावनि  
करि करि लैहै मातु वलैया ॥ २ ॥ किलकनि नटनि चलनि  
चितवनि भजि मिलनि मनोहर तैया । मनिपंभनि प्रतिविंब  
भलककवि छलकिहि भरि अंगनैया ॥ ३ ॥ बाल विनोद  
मोद मंचुल विधु लीला ललित जुन्हैया । भूपति पुन्य पयोधि  
उमगि घर घर आनंद बधैया ॥ ४ ॥ हूँ हूँ सकल सुकृत  
सुप भाजन लोचन लाहु लुटैया । अनायास पाइ हूँ जनम-  
फल तोतरै बचन सुनैया ॥५॥ भरत राम रिपुदमन लपने के  
चरित सरित चन्हवैया । तुलसी तब के से अजहुं जानिवे  
रघुवर नगर बसैया ॥ ६ ॥ ९ ॥

निकैया सुंदरई । तुन तोरिवे को यह भाव कि अपनी नजर न  
लगे ॥२॥ नरनि नाचनि भजि मिलनि भागि के मिलना मणिखंभनि  
में जो प्रतिविंब परेंगे तिन की छवि की झलक भरि अंगनाई छलकिहि,  
भाव प्रतिविंब का प्रतिविंब भरि अंगनाई परिहि वा अवहीं जो घर में  
रहिवे ते मणि खंभनि में प्रतिविंब के झलक की छवि है, सो जब बाहर  
खोलिई, तब भरि अंगनाई झलकहि, भाव आंगन भरि बालक बालक  
देखि परेंगे ॥ ३ ॥ चारो भयन के लरिकखेल जो आनंद, सो चन्द्रमा  
औ सुंदर खेलमा जो है, सो तेहि चंद्र की चांदनी, तेहि चन्द्र प्रकाश  
युक्त को देखि के पुण्य के समुद्र जे भूपति ते उमगिहैं, जव समुद्र  
उमगत है, तब चन्द्र फरत है, इहां घर घर में आनंद ने जो बधाई

तीना है, सो शब्द है ॥ ४ ॥ तोतरे वचन के सुननहारे वेपरिश्रम जन्म  
 क फल को पावेंगे, भाव वेद वेदांत के श्रवण मनन निदिध्यासन बिना  
 जन्म को फल अर्थात् मोक्ष पावेंगे, इहां माधुर्यपक्ष में स्पष्ट है ॥ ५ ॥  
 श्री गोसांई जी कहत हैं, भरत राम रिपुदहन लपन के चरित्र रूपी  
 नदी के स्नान करैया जे हैं तिन को तव के सरिस अबो रघुवरनगर  
 वसैया जानना ॥ ६ ॥ ६ ॥

राग केदार—चुपरि उवटि चन्हवाय कौ नयन चांजीरचि  
 रुचि तिलक गोरोचन को कियो है । भू पर अनूप मसिविंदु  
 वारे वारे वार विलसत सीसपर हरिहरै द्वियो है ॥१॥ मोद  
 भरि गोदलिये जालति सुमित्रा देपि देव कहैं सबको सुकृत  
 उपवियो है । मातु पितु प्रिय परिव्रजन पुरजन धन्य पुन्यपुंज  
 पेपि पेपि प्रेम रसपियो है ॥ २ ॥ लोहित ललित लघु चरन  
 कर कमल चाल चाहि सो छवि सुकवि जियजियो है । बाल  
 कैलि वातवस भलकि भलमलत सोभा की दीयटि मानो  
 रूपदीप दियो है ॥ ३ ॥ राम सिसु सानुज चरित चारु गाय  
 सुनि सुजननि सादर जनमलाहु लियो है । तुलसी विद्याद्व  
 दसरथ दसचारिपुर जैसे सुप योग विधि विरच्यो न वियो  
 है ॥ ४ ॥ १० ॥

उवटन लगाय तेल चुपरि नहवाय के नेत्र में फाजर दिये औ रुचि  
 पूर्वक रूचि के गोरोचन को तिलक कियो औ भौंह पर उपमा रहित  
 स्पाम बिंदु दियो, अर्थात् टिठौना औ छोटे छोटे धार सिर पर शोभित  
 हैं, देखे से हृदय हरि लेत हैं ॥ १ ॥ आनंद में भरि के गोद में जिये  
 सुमित्रा जू को दुलारत देखि देवता कहत हैं, कि सय को सुकृत उदै  
 भयो है, औ माता पिता प्रिय परिवार के जन औ पुरजन धन्य औ  
 पुन्य के पुंज हैं, फाहे ते कि देखि देखि के प्रेम रस को पी जियो है ॥२॥  
 सुंदर लाल छोटे २ चरन औ कर कमल का चाल कहैं चलावना जो

सो छावि देखि कै सुंदर कवि को जीव जी उठ्यो है, इहां चाल शब्द ते हाथ पैर का चलावना लेना क्योंकि बंकंडां चलना अयहीं आगे कहे मानो सोभा रूप दीवट पर रूप रूपी दीया धरयो है सो बाल केरि रूप वायु के बस झलकि के झलमलात है ॥ ३ ॥ गोसाईं जी कहत है कि चौदहो भुवन में ऐसे सुख के योग्य महाराज दशरथ को छोड़ि के ब्रह्मा ने दूसरे को नहीं बनायो है ॥ ४ ॥ १० ॥

राम सिसु गोद महामोद भरे दशरथ कोसिलहु ललकि खषन लाल लिये है । भरत सुमित्रा लये कैकई सनुसमत तन प्रेम पुलकि मगन मन भये है ॥ १ ॥ सेठी लटकन मति कनक रचित बाल भूपन बनाइ आछि अंग अंग ठये है । आहि चुचुकारि चूबि लालत लावत उर तैसी फल पावत जैसे सुवीज बये है ॥ २ ॥ धन थोट विवुध बिलोकि वरषत फूख अनुकूल वचन कहत नेह नये है । ऐसे पितु मातु पूत पुर परिजन विधि जानियत आयुभरि एई निरमये है ॥ ३ ॥ अजर अमर होहु करो हरि हर छोहु जरठ जठरिन्ह आसिर्वाद दिये है । तुलसी सराहे भाग तिन्ह के जिन्ह द्विये डिंभ राम रूप अनुराग रंग रये है ॥ ४ ॥ ११ ॥

बालराम गोद में हैं, ताते दशरथ महाराज महामोद में भरे हैं औ श्री कौशल्या जू भी ललकि कै लपन लाल को लिये हैं, भरत जू को श्री सुमित्रा जू औ शत्रुहन जू को कैकई जू लिये हैं, प्रेम तें तन पुलकि करि कै सब के मन मगन भये हैं ॥ १ ॥ भालपर के बाल कों चोटी सरिस दूनो ओर से गूंधि के पीछे के ओर ले जात हैं, ताको मेठी कहत हैं, तीमे लटकने लटकत हैं, और मणि सोना ते रचित, अर्थात् जड़ाऊ बाल समयके भूपन आछे बनाय के अंग अंग में ठाने हैं, अर्थात् पहिराये हैं, देखि चुचुकारि चूमि के दुलारन, औ हृदय में लगावत हैं तैसे फल पावन जैसे सुंदर बिन बोए हैं, इहां सुंदर बिन सुंदर कर्म

हैं ॥ २ ॥ मेघ के ओट ने देवता देवि के फूल वर्षत हैं औ नये नेह  
से अनुकूल वचन कहत है वा नेह से देव नम्र है गए हैं वा अनुकूल  
वचन कहत हैं कि इन के नेह नयीन हैं अर्थात् अस न देखे । पिता माता  
नगर परिचय को जानियत हैं कि विधाता आयुष भरि में ऐसे इनहीं  
को बनाए हैं ॥ ३ ॥ जरठ जठेरिन्ह नृद औ वृद्धिया डिंभ बालक रये  
रंगे ॥ ४ ॥ ११ ॥

राग अमावसी—आजु अनरसे हैं भोर के पय पियत न  
नीके । रहत न वैठे ठाठे पालने भूलतहु रोअत राम मेरो सो  
सोचु सबछो के ॥ १ ॥ देव पितर यह पुजिअै तुला तीलिअै  
घी के । तदपि कबहु कबहु के सपी ऐसही अरत जब  
परत दृष्ट दुष्ट ती के ॥ २ ॥ वेगि बोलि कुलगुरु कुश्रै माथे  
हाथ चमीके । सुनत आइ रिपि कुशदरे नरसिंहमंत्र पठि  
जो सुमिरत भय भी के ॥ ३ ॥ जासु नाम सर्वस सदा सिव  
पारवती के । ताहि भरावति कौसिला यह रीति प्रीति की  
दिये हुलसति तुलसी के ॥ ४ ॥ १२ ॥

अनरसे हैं खनमनाए हैं ॥ १ ॥ घृत को तुला दान मुख कारक  
रोगहारकहै, अरत छैलात ॥ २ ॥ शीघ्र बोलाइये कुलगुरु को कि  
माथ को अमृत रूप हाथ ते कुश्रै सुनत मात्र में ऋषि आय के नरसिंह  
मंत्र जो सुमिरत भय को भय होत सो पदि के कुशदरे कुश ते मार्जन  
किये ॥ ३ ॥ १२ ॥

माथे हाथ जब दियो ऋषि राम किलकन लागे । महि-  
मा समुझि लीला विलोकि गुरु सगल नयन तन पुलकि  
रोम रोम जागे ॥१॥ लिये गोद धाएं गोद ते मोद मुनि मन  
अनुरागे । निरपि मातु हरषीं दिये चाली घोट कहति मृदु-  
वचन प्रेम कीसे प्रागे ॥ २ ॥ तुम सुरतरु रघुवंस के दंत अभि-

मत भागे। मेरे विसेषगति रावरी तुलसी प्रसाद जाके सकल  
अमंगल भागे ॥ ३ ॥ १३ ॥

माता के गोद तें घाए तव मुनि गोद में लिए औ हर्ष ते  
मुनि मन में अनुरागे ॥ २ ॥ सुरतरु कल्पवृक्ष, अभिमत बांछित  
फल ॥ ३ ॥ १३ ॥

अमिअ विलोकनि करि कृपा मुनिवर जब जोए। तव ते  
राम अरु भरत लपन रिपुदमन सुमुषि सधि सवाल सुअन  
सुपसोये ॥ १ ॥ लाय सुमित्रा लिए हिए फनिमनि ज्यौ  
गोए। तुलसी नेवछावरि करति मातु अतिप्रेममगन मन  
सजल सुलोचनकोए ॥ २ ॥ १४ ॥

अपिय विलोकनि अमृत दृष्टि जोए देखे ॥ १ ॥ सुमित्रा जू हृदय  
में लगाय लिए जैसे सर्प मणि को छपावत कोय कहैं कोर ॥ २ ॥ १४ ॥

मातु सकल कुलगुरुवधू प्रियसधी सुहाई। सादर सब  
मंगल किए महि मनि महिस पर सवनि सुधेनु दुहाई ॥ १ ॥  
बोली भूपभूसुर लिये अति विनय बडाई। पूजि पायं सनमानि  
दानदिये लहि असीस मुनि वरपैं सुमन सुरसाई ॥ २ ॥  
घरघर पुर बाजन लगे आनंदबधाई। सुष सनेह तेहि समप  
को तुलसी जानै जाको चोरो है चित चहुंभाई ॥ ३ ॥ १५ ॥

सकल माता कुलगुरु वधू अरुंधती औ सुंदर प्रिय सखी आद  
सहित मंगल किए। भूमि में जो मणि कहैं श्रेष्ठ महेश तिन पै वा महि  
स्तोत्र ते सवनि ने सुंदर धेनु दुहाई। अयोध्या खंड में क्षीरेश्वर महादेव  
पर दूधदुहायना लिखा है ॥ १ ॥ ब्राह्मणों को महाराज बोलाय लि  
अति विनय बडाई ते पाय पूजि सनमानिके दान दिए तव आसी  
पाय सो मुनि के देवतन के स्वामी फूल वर्षत भए ॥ २ ॥ ३ ॥ १५ ॥

राग घनाश्री—या सिमु के गुन नाम बडाई । कीकहि  
 कै सुनहु नरपति श्रीपतिसमान प्रभुताई ॥ १ ॥ यद्यपि  
 अधि वय रूप शील गुन समै चारु चाखौ भाई । तदपि लोक  
 तोचन चकोर ससि राम भगत सुषदाई ॥२॥ सुर नर मुनि  
 करि अभय दनुजहति हरिहि धरनि गरुआई । कीरति विमल  
 विप्रबध मोचनि रहिहि सकल जगछाई ॥ ३ ॥ या की चरन  
 सरोज कपटतनि जो भजिहै मनलाई । सो कुल जुगुल-  
 सहित तरि है भव एह न कछू अधिकारी ॥४॥ सुनि गुरुवचन  
 पुलकितन दंपति हरप न हृदय समारी । तुलसिदास अव-  
 लोकि मातुमुष प्रभुसन में मुसुकाई ॥ ५ ॥ १६ ॥

समै वरावर ॥ ५ ॥ १६ ॥

टिप्पणी—राक्षसों को मार कर सुर नर मुनि को अभय करेंगे ।  
 और पृथ्वी की गरुआई कहें बोल उतारेंगे, सो अघ पाप को हरनेवाली  
 विमल कीर्ति संसार में छाये रहेगी ॥ १६ ॥

राग विलावल—अवध आजु आगमी एकु आयो । कर-  
 तल निरपि कहत सबगुनगन बहुतनि परिचो पायो ॥ १ ॥  
 बूढो बडो प्रमानिक ब्राह्मण संकर नाम मुहायो । संग सिमु  
 सिष्य सुनत कौसिल्या भीतर भवन बुलायो ॥ २ ॥ पाय-  
 पपारि पुनि दयो आसन असन वसन पहिरायो । मेले चरन  
 चारु चारों सुत भाये हाथ दिवायो ॥३॥ नयसिष्य वाल विलोकि  
 विप्र तनु पुलक नयन जल छायो । लैलै गोद कमल कर नि-  
 रपत उरप्रमोद अनमायो ॥ ४ ॥ जग्न प्रसंग कछो कौसिक  
 मिसि सोयस्त्रयंवर गायो । राम भरत रिपुदमन लपन को  
 जय सुष सुजन सुनायो ॥ ५ ॥ तुलसिदास रनिवास रहसवस



भयो सब को मन भायो । सनमान्यौ महिदेव बसोसत सानंद सदन सिधायो ॥ ६ ॥ १७ ॥

शिव जी जोतपी घनि कै संग में सुंदर शिष्य काग भशुंड जी के वनाय कै इष्ट दर्शन हेतु आए हैं । उर प्रमोद अनमायो हृदय में आनंद नहीं अमात है ॥ १७ ॥

टिप्पणी—आगम जानने वाले को आगमी अर्थात् ज्योतिपी करते हैं । करतल तलहथी । परिचो परिचय अर्थात् शिवरूपी ज्योतिपी जी ने जिन २ को जैसा फल कहा सो सच देख पड़ा । शिव जी बार बार राम जी को गोद में ले कर कमल समान कर देख देख कर इतने प्रसन्न हुए कि हृदय में आनन्द नहीं अंटा अर्थात् आनन्द हृदय से उमड़ गया ॥ १७ ॥

राग केदार—पौढिये लाल पालने हैं, भुलावों । कर पद मुख चप कमल लसत लपि लोचन भंवर भुलावों ॥ १ ॥ बालबिनोद मोद मंजुल मनि किलंकनि धानि फुलावों । तेइ अनुराग ताग गुहिवे कहुं मति मृगनयनि बुलावों ॥२॥ तुलसी भनित भली भामिनि उर सो पहिराड फुलावों । चारु चरित रघुवर तेरे तेहि मिलि गाइ चरण चित खावों ॥ ३ ॥ १८ ॥

हे लाल पालने पौढिए हम बुलावें । कर पद मुख नेत्र रूप कमल शोभित देखि कै अपने नेत्र रूप भ्रमर को बुलावें ॥ १ ॥ बालक्रीड़ा को आनंद सोई सुन्दर मणि है । मणि खानि ते निकसत है सो कहत हैं कि किलकनि रूपी खानि से बुलावों अर्थात् प्रगटावों तेहि मणि को अनुराग रूपी धागा में गुहिवे को मति रूपी मृगनैनी अर्थात् पटहारिन को बुलाय लेउं ॥ २ ॥ गोंसाई जी कहत हैं कि भनित भली रूपी भामिनी के उर में सो मणि का डार पहिराय के फुलावों अर्थात् आनंदित करों । हे रघुवर तेरे सुन्दर चरित्र को तेहि भनित रूपी भामिनी के संग मिलि गाइके चरण में चित लगानों ॥ ३ ॥ १८ ॥

सोइए लाल लाडिलेरघुराई । मगनमोद लिए मोद-  
 मुमिवा वारवार वलिजाई ॥१॥ हँसे हँसत अनरसे अनरसत  
 प्रतिबिंबनि ज्यों भाई । तुम्ह सब के जीवन के जीवन सकल  
 सुसंगलदाई ॥ २ ॥ मूलमूल मुरवीधि वेलि तमतोम सुदल  
 अधिकारै । नपत मुमन नभ विटप वोडि मानो छपा छिटकि  
 छविछाई ॥ ३ ॥ हौ जभांत अलसात तात तेरी वानि जानि  
 मै पाई । गाइ गाइ इलराइ वोलिहौं सुपनीदरौ सुघाई ॥४॥  
 वाहरु छवीले छौना छगन मगन मेरे कहति मल्हाइ मल्हाई ।  
 सानुजहिय हुलसति तुलसी के प्रभु कि ललित लरिकाई ॥५॥१८

हंसिये ते हंसत हैं औ उदास होवे ते उदास होत है बिंबनि प्रति  
 जैसे परिछाहीं । तुम सब के जीवन के जीवन औ सब सुसंगल देनिहार  
 हो ॥ २ ॥ मूल मूल नक्षत्र है सुरभीधी लता है औ तमसमूह सुंदर  
 दलों की अधिकारि हैं औ नक्षत्र कहें तारागण फूल हैं सो आकाश रूप  
 वृक्ष पर छिटकि औ वोडि कहें फैलि कै मानो रीति छवि छाई है । मूल  
 लिखिये को यह भाव कि जड़ में एक मुसरा रहत है तामें महीन महीन  
 बहुत सोर रहत है । मूल नक्षत्र के ग्यारह तारे हैं तेहि में से एक मुसरा  
 के स्थान है आँ दस महीन महीन सोरों के हैं ॥ ३ ॥ हे तात अलसात  
 जम्हात हौ, तुम्हारी वान हम जान पाई, भाव जब अस करत हौ तब  
 सो भत हौ हाथ पैर हिलाय गाय गाय मुखनिंदिया को वोलैहौं ॥ ४ ॥  
 मल्हाई मल्हाई रगिआय रगिआय ॥ ५ ॥ १९ ॥

ललनलोने लैरुआ वनि मैआ । सप सोइअै नीदवेरिआ  
 भइ चारु चरित चारुी भइआ ॥ १ ॥ वाहति मल्हाइ लाइ  
 उर छनछन छगन छवीले छोटे छैआ । मोदकंद गुलकुमुदचंद  
 मेरे रामचंद्र रघुरैआ ॥ २ ॥ रघुवरवाल केलि संतन की  
 सुभग सुभद सुरगैआ । तुलसी दुहि पीवत सुपजोवत पयसुपे-  
 मघनोवैआ ॥ ३ ॥ २० ॥

लेहआ घछरा चारु चरित सुंदर है चरित्र जेठि के ॥ १ ॥ छैपा  
वालक मोद कंद आनंद के मूल औ कुल रूप कुमुद के चंद्रमा ॥ २ ॥  
रघुवर की बालकेलि संतन की सुंदर शुभ देनिहारी कामधेनु है । तेहि  
कामधेनु ते सुंदर प्रेम रूप दूध जामे घना घीव है ताको तुलसी दुहि कै  
पीवत है ताते मुखयुत जीवत है ॥ ३ ॥ २० ॥

सुपनीद कहति आलि आइहैं । रामलपन रिपुदमन  
भरत सिसु करि सबसुमुप सोपाइहैं ॥ १ ॥ रोवनि धोवनि  
अनपानि अनरसनि डीठि मूठि निठुर नसाइहैं । इंसनि  
पेलनि किलकनि आनंदनि भूपतिभवन बसाइहैं ॥ २ ॥ गोद  
विनोद मोदमय मूरति हरपि हरपि हलराइहैं । तनु तिल  
तिलकरि वारि राम पर लैहैं रोगबलाइ हैं ॥ ३ ॥ रानी राज  
सहित सुत परिजन निरपि नयनफल पाइहैं । चारु चरित  
रघुवंसतिलक के तहं तुलसिहि मिलि गाइहैं ॥ ४ ॥ २१ ॥

अब माता फुसिलावति हैं कि मुखनीद कहति है कि हे आली में  
आइ हों, सुमुख प्रसन्न ॥ १ ॥ रोअनि धोआनि रुठि है रोइवे के अर्थ  
में अनखानि खनमनानि, अनरसनि उदासीनता, दीठि नजर, मूठि टोना  
ताको निठुरता ते नसाओंगी । भाव दया न करोंगी वा ए सब जो निठुर  
तिन्ह को नसाओंगी भूपति भवन बसाइवे को यह भाव कि जब बालक  
मुखपूर्वक सोअत है तब उठे पर आनंदपूर्वक खेलत है ॥ २ ॥ क्रीड़ा  
औ आनंदमय मूरति को गोद में लै कै हरखि हरखि के हलराओंगी  
तन को तिल तिल करि कै श्री राम पर नेवछावरि करि रोग बलाय हम  
लै हों ॥ ३ ॥ रानी राजा को पुत्र परिवार समेत देखि कै नैननि को  
फल पाओंगी सुंदर चरित रघुवंसतिलक के तहां तुलसी के संग मिलि  
गाओंगी ॥ ४ ॥ २१ ॥

राग असावरी—कनक रतनमय पालनो रच्यो मनहुं  
मारसुतहार । त्रिविध पेलौना किंकिनी लागे मंजुल सुकाहार ।

रघुवन मंदन रामलला ॥ १ ॥ जननी उदटि अरुवाइके  
 मनिभूपन मजि लिये गोद । पौढायि पटुपायने सिमु निरपि  
 मगन मनमोद ॥ दमरघनंदन रामलला ॥ २ ॥ मदनमोर  
 की चंद्रिका भलकनि निदरति तनजोति । नोन कमल मनि  
 जलद की उपमा कहै लघमति होति ॥ मातु सुकृतफल  
 रामलला ॥ ३ ॥ लघु लघु लोहित ललित है पद पानि अधर  
 एकरंग । को कवि जो छवि कहि सकै नपमिष सुन्दर सब  
 अंग ॥ परिजनरंजन रामलला ॥ ४ ॥ पगनूपर कटि किं-  
 फिनी करकंजन पहुंची मंजु । छिय हरिनप अद्भुत बन्धो  
 मानो मनमिज मनिगनगंजु । पुरजनसुरमनि रामलला ॥ ५ ॥  
 लोचन नीलसरोज से भूपर ममिधिंदु विराज । जनु विधुमु-  
 पकवि अमिष को रष्यक राख्यो रसरज ॥ सोभासागर राम-  
 लला ॥ ६ ॥ गभुपारी अलकावली लसे लटकन ललित  
 ललाट । जनु उड़गन विधु मिलन को चले तम विदारि करि  
 याट ॥ सहजसुहायन रामलला ॥ ७ ॥ देपि पेलवना किलकहिं  
 पद पानि विलोचन लोल । विचित्र विहंग अलि जलज ज्यों  
 सुपमासर करत यलोल ॥ भक्तकल्पतरु रामलला ॥ ८ ॥ बाल  
 बोलि विनु अरघ की सुनि देत पदारथ चारि । जनु इन  
 वचनन्हि ते भये सुरतरु तापस त्रिपुरारि ॥ नाम कामधुक  
 रामलला ॥ ९ ॥ सपी सुमित्रा वारहीं मनिभूपन वसन वि-  
 भाग । मधुर भुलाइ मल्लावई गावै उमगि उमगि अनुराग ।  
 है जग मंगल रामलला ॥ १० ॥ मोती जायो सीप में अरु  
 अदिति जन्यो जग भानु । रघुपति जायो कौसिला गुन  
 मंगल रूप निधानु । भुषनविभूपन रामलला ॥ ११ ॥ राम



सागर रामलला के नेत्र नील कमल सम हैं औ भौंह पर काजर  
 को बिंदु सोभत है सो मानो काजर को बिंदु नहीं है शृंगार रस है  
 ताको मुख चंद्र के छवि रूप अमृत को रक्षक राख्यो है ॥ ६ ॥ सहज  
 सोहावन रामलला के गभुवारी अलकावली औ सुंदर लटकन ललाट  
 पर लसत है मानो चंद्रमा के मिलन को तारागन तम बिदारि राह करि  
 चले । इहां लटकन उदगन हैं मुख शशी है तम अलकावली है दूनो तरफ  
 घाल अलगाए ते जो लकीर है गई है सो राह है ॥ ७ ॥ भक्तकल्पतरु  
 राम लला जो हैं सो खेलवना देखि कै किलकत हैं पग हाथ नेत्र चंचल  
 है मानो विचित्र पक्षी भ्रमर औ कमल परम सोभा रूप सर में कलोल  
 करत हैं इहां विचित्र विहंग बालकन के पग में महावराद से चिरई  
 लिखी जाति है सो है नेत्र भ्रमर कर कमल है ज्यों का मानो अर्थ किया  
 है सो भी होत है । कुवलयानंदे “मन्ये शंके भुवंप्रायो नूनमित्येवमादिभिः ।  
 उत्प्रेक्षा व्यज्यते शब्दैरिवशब्दोऽपितादृशः ॥” ज्यों इवपर्याय है ॥८॥ नाम  
 कामधेनु है जोहि के तेहि रामलला के विनु अर्थ के बालबचन जो सो सुने  
 से चारो पदार्थ देत है भाव आप तो बे अर्थ को है औ सब अर्थ देत  
 है वा बाल बोल विनु अर्थ को जो है ताको सुनि कै सुनैया चारो फल  
 देखे को सपर्य होत है मानो इन बचनन ते भए हैं कल्पवृक्ष औ तपस्वी  
 औ शिव जी भाव देखिवे में बेअर्थ के एऊ हैं पर सब अर्थ देत हैं सो  
 क्यों न होई कारण को गुन कार्य में रहतरी है ॥ ९ ॥ जगमंगल  
 जो रामलला हैं तिन को सखी औ सुमित्रा जू मणिभूषण घसन पृथक २  
 नेवछावर करत हैं धीरे २ गुलाय अनुराग ते उमगि २ रगिभाय गावत  
 हैं ॥ १० ॥ मोती सीप में जन्म्यो औ जगत में अदिति ने भानु को  
 जन्मायो औ गुन मंगल मोद के पात्र रघुकुल के पति औ सुवन के  
 विशेष भूषण करनेवाले रामलला को कौशल्या जू उत्पन्न किये ॥११॥  
 श्री राम प्रगट जब ते भए तब ते सब अमंगल के मूल गए मित्र आनं-  
 दित औ दित कई नातेदार उदय के प्राप्त भए हैं और बैरिन के उर  
 में नित ही शूल है सो क्यों न होय भव भय के भंजनिहार रामलला  
 हैं ॥ १२ ॥ रिपुगनगंजन रामलला जो हैं सो अनुज सखा मिमू  
 संग लै के जब चांगान खेलन जई जयापि जोहि दंडा से गंदा खेला

जात है ताको चौगान कहत हैं पर इस खेळ का भी नाम चौगान है। लंका में सरभर औ गुरपुर में नगरा बाजिये को यह भाव कि बान फाल में इतनी फुरती है तो आगे क्या जान कैसी होयगी ॥१३॥ जे श्रीराम हाथी रथ घोड़ा संवारि सिकार का चलेंगे तप दगकंपर के घर में धकधकी होयगी कि अब इसा भी धनुषारन करि के जनि दौड़े सो क्यों न होय, अरि रूषी हाथी के सिद्ध रामलला हैं ॥१४॥ मुनिना औ सखिन के गीत अनुकूल सुर मुनि मुनि के असीस देख जय जय कहत हर्षत हैं औ फूल बर्षत हैं सो क्यों न सुखी होंहि सुरन के सुत-दायक रामलला हैं। अनुकूल गीत को यह भाव कि जस चाहत रहे तस गीतो में सुनत हैं ॥१५॥ तुलसीजीवन रामलला जो हैं सो यह पौंड्र-कलानिधान बालचरितमय चंद्रमा है वा तुलसी के जीवन जे रामलला हैं तिन के पौंड्रकलानिधान बालचरित्रमय जो यह चंद्रमा है ताको तुलसी अपने चित्त को चकोर कियो सो प्रेम रूषी जो-अमृत रस ताको पान करत है। चंद्रमा के पौंड्र कला अमृतादि है तेहि के अनु-सार-रघुकुलमंडनादि पौंड्र विशेषण किए। चंद्रकला यथा—“अमृतामानदां तृष्टिपुष्टिभीतिरतिताया । लज्जांश्रियं स्वधां रात्रिज्योत्स्नां हंसवर्तातितः ॥ छायांचपूरणीवामाममंचंद्रकलाइगाः । स्वर्वाजाघानमेताश्च क्रमात्संपूजयेत्सुधीः ॥१॥” शारदातिलकादि तंत्र में शंखस्थापनप्रकरण में प्रसिद्ध है। रघुकुलमंडन रामलला को अमृत कला कहिये को यह भाव कि वंशविता मृतक सरीर सम जो रघुकुल भया रहा ताको जिआय लिए। दसरथ-नेदन को मानदा कला कहिये को यह भाव कि जो जगत के कारण सो पुत्र भए एहि ते अधिक कवन सन्मान देहिने। महिमा अवधि राम-पितृ-माता। औ। विधि हरिहर सुरपाति दिसिनाथा। वरनहिं सब दसरथ गुनगाथा ॥ मातृसुकृतफल रामलला को तुष्टिकला कहिये भाव कि अपने सुकृत को फल पाए तोष होत है सो सुकृत फल को पाय संतुष्ट भई। “आनंद अवनिराजरवनी सब मागहुं नी”। परिजन रंजन को पुष्टिकला कहिये को यह भाव कि के जन को पोषण करि रंजित किए कलकाल धीते सब बड़े भए परिजन सुखदाई। पुरजन सुरमाण रामलला को प्रीति-

कला कहिये को यह भाव कि प्रीति तें चिंतामणि सम सब कों मनो-  
 वांछित फल देत हैं । प्रणवों पुर नर नारि बहोरी । ममता जिन पर  
 प्रगुहि न थोरी ॥ सोभासागर को रति अर्थात् रमणोद्दीपनकारिणी  
 कला कहिये को यह भाव कि बालस्वरूपों में सखी देखि कै ठगि गई ।  
 अबलौकि हों शोचविमोचन कों ठगि सी रही जो न ठगे धिग से ।  
 सहज सोहावन रामलला को लज्जा अर्थात् लज्जादायिनी कला  
 कहिये को यह भाव कि जेतने सोहावने रहें सब लजाय गए । भुजनि  
 भुजग सरोज नयनानि वदन विधु जित्यौ लरनि ॥ औ ॥ लाजहिं तन  
 शोभा निरपि, कोटि कोटि शत काम । भक्त कल्पतरु को श्री  
 कला कहिये को यह भाव कि भक्तन को सब प्रकार की श्री देत  
 हैं । राम सदा सेवक खचि राखी ॥ औ ॥ राखत भले भाव  
 भक्तन को कलुक रीति पारथाहें जनाई । नाम कामधेनु है जाको  
 तेहि रामलला को स्वधा पितृगणतृप्तिजनि कला कहिये को यह  
 भाव कि संतान के नाम की बड़ाई सुनि के पितर लोग तृप्ति होत  
 हैं । रामरूप गुन शील सुभाऊ । प्रमुदिते होंहिं देपि सुनि राज ॥  
 जगमंगल रामलला को रात्रिकला अर्थात् विश्रामदायिनी कहिये को  
 यह भाव कि रात्रिउ विश्राम हेतु है औ एऊ है । सो सुप्रधाम राम  
 अस नामा । अपिललोक दायक विश्रामा ॥ भुवनविभूषण रामलला  
 को ज्योत्स्ना कला कहिये को यह भाव कि भुवन को विभूषण ज्योत्स्ना  
 कला है एऊ हैं । सहज भकास रूप भगवाना । औ । पुरुष प्रसिद्ध प्रकाश  
 निधि । भवभयभंजन रामलला को हंस कहिए सूर्य सो रहै जेहि में  
 सो हंसवति कला ताको कहिये को यह भाव कि सूर्य तमनाशक हैं  
 औ एऊ अज्ञानतमनाशक हैं वा हंस जो सूर्य ताको कला चंद्रमा में  
 रहत औ एऊ सूर्यवंदी हैं ॥ राम कस न तुम्ह कहहु अस, हंसवंश  
 अवतंस । रिपुगनगंजन रामलला को छायाकला कहिये को यह  
 भाव कि छाया ताप हरत औ एऊ रिपुगण के मारि भक्तन को ताप  
 हरत । शीतल सुपद छाह जेहि कर की भेटव पाप ताप माया । अरि-  
 करि केहरि राम लला को पूरणी कला कहिये को यह भाव कि राव-  
 णादि शत्रुन को मारि जगत् के मुख ते परि पूर्ण किए । जब रघुनाथ



समर रिपु जीते । सुर नर मुनि सब के मय दीते ॥ सुरमुखदायक रामलला को वामा कहैं सुंदरी कला कहिवे को यह भाव कि चंद्रमा की सुंदरी कला मुखदायक है एक देवतन के मुखदायक है । तुलसी को जीवन राम लला को अमा अर्थात् परिमाणरहित कला कहिवे को या भाव कि परिमाण रहित कला जीवनदात्री औ एक जीवनदाता ॥ भान भान के जीव के जिव सुप के सुप राम । चंद्रमा की चौदहकला प्रगट है अमावस परिवा की दुइ कला गुप्त है तेहि ते गोसाईं जी चौदह तुक से बाललीला प्रगट राखे दुइ तुक में गुप्त किए अर्थात् पहिले औ अंत में ॥ १६ ॥ २२ ॥

राग कान्हरा—पालने रघुपतिहि भुलावै । लैलै नाम सप्रेम सरस स्वर कौसल्या कल कीरति गावै ॥१॥ कैकिकंठ दुति श्यामवरन वपु बाल विभूषन विरचि बनाए । अलकै कुटिल ललित लटकन भू नीलनलिन दोउ नयन सुहाए ॥२॥ सिमु सुभाय सोहत जब कर गहि वदन निकट पदपल्लव ल्याए । मनहुं सुभग जुग भुजग जलज भरि लेत रुधा ससि सी सचु पाए ॥ ३ ॥ उपर अनूप विलोकि पिलौना किलकत पुनि २ पानि पसारत । मनहु उभय अंभोज अरुन सी विधु भय विनय करत अति आरत ॥४॥ तुलसिदास बहु बास विषस अलि गुंजत सो छवि नहिं जात वधानी । मनहु सकल श्रुति श्रवा मधुप द्वैविसद सुजस धरनत धरवानो ॥५॥२३॥

पालना में रघुपति को बुलावति हैं, कौसल्याजू प्रेम सहित मधुरस्वर से नाम ले ले के अर्थात् रघु मना तोना छगन मगन आदि कहि कहि के सुंदर कीर्ति गावति हैं ॥ १ ॥ मोर के कंठ की पुनि समान श्याम वरन गरीर है तामें बाल समय के विभूषण विशेष रचि के बनाये गए हैं टेरे अलक है भौंह पर सुंदर लटकन हैं औ नील कमल साम सुंदर दोऊ नयन हैं । “अलकाधूर्णकृत्या इत्यमरः” ट्रेटे पार को अलक कहत हैं ॥

बाल सुभाव ते जब कर तें गहि कै मुख के निकट पल्लव इव भर्षाव  
 पल्लवममकोमल आँ लाल पद को ले आवत भए तब अस सोहत  
 मनो सुंदर दुइ सर्प सचुपाय कई आनंदित चंद्रमा से कमल से भरि के  
 सुधा लेत हैं इहां दोऊ हाथ सर्प हैं, पद कमल हैं, मुख चंद्रमा हैं, छावि  
 सुधा है ॥ ३ ॥ ऊपर उपमा गहित खेलौना देखि कै किलकारी भारत  
 आँ पुनि पुनि हाथ पसारत हैं मानो दुइ कमल चंद्रमा के भय से आति  
 आति सूर्य से विनय करत हैं । इहां खेलौना सूर्य हैं लाल रंग से आँ  
 हाथ दोऊ कमल हैं आँ पुनि पुनि पसारना आर्तता है ॥ ४ ॥ गोसाई  
 जी कहत हैं कि बहुत सुगंध ते बिबस जो भ्रमर गुंजत है सो छवि  
 घरानी नहीं जाति है मानों सकल वेदन की ऋचा भ्रमर है के श्रेष्ठ  
 यानी ते उज्ज्वल सुयश रघुनाथ को घरनत हैं ॥ ४ ॥ २३ ॥

भूलत राम पालने सोहैं भूरि भाग जननी जन जोहैं ।  
 अधर पानि पद लोहित लोने सर सिंगार भव सारस सोने  
 ॥३॥ किलकत निरपि विलोख पिलौना मनहुं विनोद लरत  
 छवि छौना ॥ ४ ॥ रंजितअजन कांजविलोचन भाजत भाख  
 तिलकं गोरोचन ॥ ५ ॥ लसै मसिविंदु वदन विधु नीको  
 चितवत चित चकोर तुलसी को ॥ ६॥२४ ॥

जोहैं देखत हैं ॥ १ ॥ तन कोमल के सुन्दर श्यामता में बाल  
 समय के विभूषणन की परिछाही श्लकति है ॥ २ ॥ ओठ हाथ पद  
 सुंदर लाल हैं मानो शृंगार रूप तडाग में लाल रंग के कमलें उत्पन्न  
 भए हैं इहां लुप्तोत्प्रेक्षा है इहां सर शृंगार से श्याम शरीर लेना काहे  
 है कि शृंगार रस भी श्याम है ॥३॥ खेलौना देखि चंचल है किलकत  
 हैं मानो खेलवार में छावि के बालक लरत हैं । इहां हाथ पर हाथ पांव  
 पर पांव का फेकना सो लरना है कमलवत् नेत्र जो अंजन से रंजित  
 हैं आँ भाल में गोरोचन कै तिलक शोभत है ॥५॥ सुंदर विधु वदन  
 में टिठौना लसत है तेहि मुखचंद्र को चित रूप चकोर तुलसी को  
 चितवत ॥६॥२४॥

रागकल्याण—राजत सिमुरूप राम सकलगुननिकाय

धाम कौतुकी कृपाल ब्रह्म जानु पानिचारो । नीलकंज जल-  
 पुंज मरकतमणि सदृश स्याम कामकोटि सोभा अंग अंग  
 ऊपर वारी ॥ १ ॥ शटक मणि रत्नपचित रचित इन्द्र-  
 मंदिराभ इंद्रिरानिवास सदन विधि रच्यौ सँवारी । विहृत  
 नृपभ्रजिर अनुजसहित वाजकेलिकुसल नील वलजलोच-  
 हरि मोचन भय भारी ॥ २ ॥ अरुन चरन अंकुस ध्वज कं-  
 कुलिस चिन्ह रुचिर भाजत आति नूपुर वर मधुर मुपा-  
 कारो । किंकिनो विचित्र जाल कंबु कंठ ललित मा-  
 उर विसाल कैहरिनपकंकन कर धारी ॥ ३ ॥ चारु चिबु-  
 नासिका कपोल भालतिलक भृकुटि श्रवन अधर सुंदर द्वि-  
 ह्वि अनूप न्यारी । मनहु अरुन कांजकोस मंजुल जुग पांति  
 प्रसव कुंदकली जुगुल जुगल परम शुभ्र वारी ॥ ४ ॥ चिह्न  
 चिकुरावली मनो पडंघ्रिमंडली वनो विसेपि गुंजत लज-  
 वालक किलकारो । एकटक प्रतिविंब निरपि पुलकत हरि-  
 हरपि हरपि लै उलंग वननी रसभंग मन विचारी ॥ ५ ॥ वा-  
 कहं सनकादि संभु नारदादि शुक मुनिंद्र करत विविधि जोग  
 काम क्रोध लोभ जारी । दसरथ गृह सोइ उदार भंजन संसा-  
 भार लीलाभवतार तुलसिदासचास हारी ॥ ६ ॥ २५ ॥

सकल गुणसमूह के धाम कृपाल ब्रह्म कौतुकी शिशुरूप राम बर-  
 हैं हैं शोभते हैं । रूप पद से यह जनाए कि रूप मात्र से शिशु  
 सकल गुणनिधान से वात्सल्यादि सकल गुण संपन्न जनाए । अर्थात् केवल  
 निगुण नहीं, कौतुकी ते स्वतंत्र जनाए । कृपाल ते यह जनाए कि हैं  
 ब्रह्म पै लोगन के सुख देवे हेतु घुठुरुअन ते चलते हैं, नील कंज जल-  
 पुंज मरकत मणि सदृश स्याम, इहां तीन उपमा दिए ताते मालोप-  
 अलंकार है वा कमलवत् कोमल औ मेघवत् गंभीर मरकतवत् ।

औं श्यामता नीलिङ को, अपर युगम ॥ १ ॥ जेहि नृप को सदन सुवर्ण  
मणि ग्नन से जडित औ रचित इंद्र मंदिर के सदृश लक्ष्मी को वासस्थान  
विधाना ने संवारि के रर्या तेहि नृप के आंगन में अनुज सहित हरि  
विहरत हैं सो कैसे हैं बालकोलि में कुशल हैं औ नीलकमल सम  
लोचन हैं जिन को औ भारी भय के नाशनिहार हैं, मणि रत्न का  
भेद मणि नागादि ते होत हैं औ रत्न पर्यंत ते, वह रत्न शब्द श्रेष्ठ  
वाचक है “रत्नं स्वनातिश्रेष्ठजपि इत्यमरः” अर्थात् श्रेष्ठ मणि ॥२॥ लाल  
घरण है तामें अंकुश ध्वज कमल वज्र के सुंदर चिन्ह हैं औ मधुर शब्द  
करनिद्वारा श्रेष्ठ नूपुर अनिष्टा गोभत हैं औ कटि में विचित्र किंकिनिन  
को जाल कहें समूह औ शंखवत्कंठ वा “रेखात्रयान्विता ग्रीवा कंबुग्राशिवेति  
कथ्यते” । औ विशाल डर है तामें सुंदर माला औ वचनहा है हाथ में  
कंकन धारण किए हैं ॥ ३ ॥ टोटी नासिका कपोल भालतिलक भौंह  
फान औ ओष्ठ सुंदर हैं औ सुंदर उपमा रहित दांतन की छवि न्यारी  
हैं मानो लाल कमल के कोण में सुंदर दुइ पांति की प्रसव कहें उत्पत्ति  
हैं तिन्ह में परम शुभ्र वारी कहें छोटी कुंदकली दुइ दुइ हैं । इहां लाल  
कमल के कोश मुख है तामें ऊपर नीचे के दंतस्थान अर्थात् दाढ़ ते  
युग पांति हैं ता में छोटी छोटी दुइ दुइ जो दंतुली तेई कुंदकली हैं ॥४॥  
चिह्नन जे बालन की पांति हैं ते मानो विशेष बनी भई भंवरन की  
मंडली है औ जो बालक की किलकारी है सोई मानो तिन का शब्द  
है एक टरु ते प्रतिबिंब को देखि हरपि हरपि के पुलकत जो हरि तिन  
को माता रसभंग जिय में विचारि के गोद में लै लिए भाव अवहीं तो  
हरपत हैं अस न होय कि हरि उठै वा हरि तो हरपि हरपि पुलकत हैं  
पर माता ने दर ते पुलकना विचारा ताते उठाय लिए ॥ ५ ॥ लीला  
अवतार लीला के हेतु अवतार है जेहि को ॥ ६ ॥ २५ ॥

राम बान्हरा—आंगन फिरत सुठुक्वनि धाए । नील-  
जलद तनु स्वाम राम सिमु छगनि निरपि सुप निकट  
बुलाए ॥१॥ बंधुक सुमन अरुन पद पंक्तज शंकुश प्रमुप चिन्ह  
वनि धाए । नूपुर जनु सुनिवर कलहंसनि रचे नोड दै बांध-

वसाए ॥२॥ कटि मेखल वर हार शीव दर रुचिर बाहु भूपन  
 पहिराए । उर शीवत्स मनोहर हरिनप्र हेम मध्य मनिगन  
 घहु लाए ॥३॥ सुभग चिवुक द्विज अधर नासिका श्रवन  
 कपोल मोहि अति भाए । भू सुंदर करुनारसपूरन लोचन  
 मनहुं जुगल जलजाए ॥४॥ भाल विसाल ललित लटकन  
 वर बाल दसा के चिकुर सोहाए । मनो दोउ गुरु सनि कुज  
 खागे करि ससिहि मिलन तम के गन आए ॥५॥ उपमा  
 एक अभूत भई तव जव जननी पट पीत वोटाए । नील  
 जलद पर उडगन निरपत तजि सुभाव मानो तडित छपाए  
 ॥६॥ अंग अंग पर मारनिकर मिलि छदिसमूह ले ले जनु  
 छाए । तुलसिदास रघुनाथरूप गुन तौ कही जौ बिधि  
 होहि बनाए ॥ ७॥२६ ॥

पुटुरुयनि बकैयां ॥१॥ दुपहारिआ के फूल सम लालचरन है तामें  
 कमल अंकुश आदि चिन्ह बने हैं औ नूपुर है मानो रघुवर ने नूपुर  
 रूप खोता रचे तेहि में मुनिवर रूप कलहंसानि काँ बाँह दै वसाए ।  
 भाव इहां कोई भय नहीं होयगो इहां वसना ध्यान करना है अंकु-  
 शादि चिन्ह यथा महारामायणे । रेखोर्द्धावर्त्तते मध्ये दक्षिणस्यांघ्रिपंकजे ॥  
 पादादौ स्वस्तिकेज्ञेयमष्टकेणस्तथैवच ॥१॥ श्रियं हलं च मुशलं सपोवाणां व-  
 रेतथा । पद्ममष्टदलं चैवस्यंदनं वज्रमुच्यते ॥२॥ यवोंगुष्टे तथाप्येतारेखोर्द्धा-  
 वामतःस्थिताः । रेखोर्द्धादक्षिणे चैव स्वस्तिकाधोऽब्जपादपः ॥ ३ ॥ अंकु-  
 शं च ध्वजं चैव मुकुटं च क्रमेवच । सिंहासनं मृत्युर्दंडं चामरं छत्रमुद्यतं ॥ ४ ॥  
 नृचिन्हं यवमालं चेतुर्विंशतिलक्षणाः । क्रमेणैवमवर्तन्ते श्रीरामस्यांघ्रिदक्षिणे ५  
 ऊर्द्धरेखायथासव्येऽपसव्ये सरयूतथागोप्यदं पादमूले च तदधः सागरांवरा ॥६॥  
 कुंभं चैव पताकां च जम्बूफलमथोद्यतं । अर्द्धचंद्रांदरथैवपदकोणं चात्रिकोणकं  
 ॥७॥ गदा तथा च जीवात्मा बिंदुरंगुष्ठमध्यगः । सरयुश्चादक्षिणे कोणे लक्षणं त्रै-  
 यमुत्तमं ॥ ८ ॥ गोपदाधस्तथाशक्तिः मुथाकुंडमथोद्यतं । त्रिवलीकामपत्रं-

च पूर्णः सिधुमुत्तस्तथा ॥६॥ वीणा वंसी धनुस्नूणोमरालश्चांद्रिकेति च । चतुर्विंशतिरामस्य चरणेवामके स्थिता ॥१०॥ चतुर्विंशतिरामस्येति छान्दसो-दीर्घाभावः स्थितेति स्थितानीत्यर्थः । सुपांसुलुगिति सुपोडादेशः परमेव्यो-मन्सर्वाभूतानीत्यादिवत् । तानि सर्वाणि रामस्य पादे तिष्ठन्ति वामके । या-नि चिन्हानि जानक्यादक्षिणे चरणे स्थिता ॥११॥ यानि चिन्हानि रामस्य चरणे दक्षिणे स्थिता । तानि सर्वाणि जानक्याः पादे तिष्ठन्ति वामके ॥१२॥ ऊर्द्धरंखारुणा ज्ञेया स्वस्तिकंपीतमुच्यते । सितारुणंचाष्टकोणंश्रीश्च वालार्क-सन्निभा ॥ १३ ॥ हलंच मुशलंचैव श्वेतधूम्रमितिस्मृतं । सर्पोऽसितस्तथा वाणः श्वेतपीतारुणोहरित् ॥ १४ ॥ नभोवदंबरं त्रयमरुणं पंकजंस्मृ- । रथंविचित्रवर्णंच युक्तं वेददृश्यः सितैः ॥ १५ ॥ यज्जंतडिन्निभंज्ञेयं स्वैतरक्तं तथायवं । कल्पवृक्षं हरिद्वर्णमंकुशं श्याममुच्यते ॥ १६ ॥ लोहिता च ध्वजा तस्यां चित्रवर्णाभिधीयते । सुवर्णं मुकुटं चकरंरत्नसिंहा-सनाभकं ॥ १७ ॥ कांस्यवद्यमदंडं स्याचामरं धवलमहत् । छत्रंचिन्हं शिवंशुकं नृचिन्हं सितलोहितम् ॥ १८ ॥ वाणवज्रेच माला च वामे च सरयूमिता । गोप्पदश्च सितारक्तः पीतरक्तसिता मही ॥ १९ ॥ स्वर्णव-र्णोऽसितं किंचित्कुंभोऽप्येवं प्रवर्तते । चित्रवर्णा पताकाच श्यामंजंबूफलंतथा ॥ २० ॥ धवलश्चाद्धचद्रोऽतिरक्तइपत्तमितोदरः । पदकोणंच महास्वच्छं त्रिकोणोऽरुणएवच ॥२१॥ श्यामला तु गदा ज्ञेया जीवात्मा दीप्तिरूपकः । विंदुःपीतःनथा शक्तीरक्तस्यामसितापिच ॥ २२ ॥ सितरक्तं सुधाकुण्ड-त्रिवलीच त्रिवेणीच । वर्तते रांप्यवन्मीनोधवलःपूर्णाभिधुजः । २३ । पीतरक्तसिता वीणा वेणुश्चित्रविचित्रकः । हग्निपीतारुणश्च त्रिविधंभनु-रुच्यते ॥ २४ ॥ वेणुवद्वृतेत तूणोऽहंमईपतिमतारुण । सितपीतारुणा ज्यो-त्स्ना सर्वतोरंगमद्भुतं ॥ २५॥२ । कटि मे किंकिनी कंसु कंड मे मुंदर हार औ मुंदर बाहु मे भूपण पहिराए हं उर मे मनोहर श्रीवन्म औ षट् मणिगणयुक्त सुवर्न के मध्य मे जो हरिनख मो उर मे हं “पीतं प्रदक्षिणावर्तं विचित्रंगमराजिकं । विष्णोर्विष्णुमियहोमं श्रीवन्मंतन्वकी-तितम्” ॥३॥ करुणा रम पूर्न जो लोचन हं मो मानो दृइ कमल हं॥४॥ मुंदर विशाल भाल हं तामे मुंदर लटकन औ बाल दना के मुंदर हार हं मानो दोऊ गुरु अर्पात् रहस्पति शुक औ शंनथर मंगल भांगे करि

वसाए ॥२॥ कटि मेपल बर हार गीव दर रुचिर बाहु भूपन  
 पहिराए । उर श्रीवत्स मनोहर हरिनष हेम मध्य सनिगन  
 घहु लाए ॥३॥ सुभग चिबुक द्विज अधर नासिका श्रवन  
 कपोल मोहि अति भाए । भू सुंदर करुनारसपूरन लोचन  
 मनहु जुगल जलजाए ॥४॥ भाल विसाल ललित लटकन  
 बर बाल दसा के चिकुर सोहाए । मनो दोउ गुरु सनि कुज  
 आंगे करि ससिहि मिलन तम के गन आए ॥५॥ उपमा  
 एक अभूत भई तब जत्र जननी पट पीत वोटाए । नील  
 जलद पर उडगन निरपत तजि सुभाव मानो तडित छपाए  
 ॥६॥ अंग अंग पर मारनिकर मिलि छविसमूह ले ले जनु  
 छाए । तुलसिदास रघुनाथरूप गुन तौ कही नौ विधि  
 होहि बनाए ॥ ७॥२६ ॥

घुदुरुवनि वकैयां ॥१॥ दुपहारिआ के फूल सम लालचरन है तामे  
 फमल अंकुश आदि चिन्ह बने हैं औ नूपुर है मानो रघुवर ने नूपुर  
 रूप खोता रचे तेहि में मुनिवर रूप कलहंसानि कों बांह दै वसाए ।  
 भाव इहां कोई भय नहीं होयगो इहां वसना ध्यान करना है अंकु-  
 शादि चिन्ह यथा महारामायणे । रेखोद्धर्विर्त्तते मध्ये दाक्षिणस्यांघ्रिपंकजे ॥  
 पादादौ स्वस्तिकंक्षेयमष्टकोणस्तथैवच ॥१॥ श्रियं हलंचमुशलंसर्पोवाणां व-  
 रेतथा । पश्मष्टदलंचैवस्यंदनंचजमुच्यते ॥२॥ यत्रोष्ठे तथाप्येतारेखोद्धर्-  
 वामतःस्थिताः । रेखोद्धर्दाक्षिणेचैवस्वस्तिकाधोवजपादपः ॥ ३ ॥ अंकु-  
 शंचध्वजंचैवमुकुटंचक्रमेवच । सिंहासनंमृत्युदंडंचामरंचत्रमुद्यतं ॥ ४ ॥  
 मृचिन्हंयवमालेमेचतुर्विंशतिलक्षणाः । क्रमेणवर्तन्तेश्रीरामस्यांघ्रिदक्षिणे ५  
 ऊर्द्धरेखाययासव्येऽपसव्येसरयूतयागोप्यदंपादमूलेचतदधःसागरांचरा ॥६॥  
 कुंभंचैवपताकांचजम्बूफलमथोद्यतं । अर्द्धचंद्रांदरार्थेवपदकोणंचाघ्रिकोणकं  
 ॥७॥ गदातथाचजीवात्माविदुरंगुष्टमध्यगः । सरयुच्चादक्षिणेकोणेऽक्षगंजे-  
 यमुत्तमं ॥ ८ ॥ गोपदाधस्तथाशक्तिःगुथाकुंडमथोद्यतं । त्रिवलीकामपत्रं-

रघुवर की बालछवि वर्नन करि कहन हों सो छवि कैसी है कि  
 मय मुख की मयादा है औ कांठि काम की शोभा हरनिहारी है ॥ १ ॥  
 मानो अरुनता मय को छोड़ि के चरण कमलन में आय बसी औ सुंदर  
 नृपुंग औ किंकिनी की मनझन करनि मन हरनि है ॥ २ ॥ सुंदर श्याम  
 कामल तनु के योग्य भूषणन की भगनि है अर्थात् भगव है मानो सुंदर  
 शृंगार रूप बाल तरु अट्टन फगनि से फग्या है इहां । शृंगार रूप छोटा  
 तरु रघुनाथ है औ भूषण जे शरीर में भरे हैं ते फल हैं अनुहरति कहिये  
 को यह भाव कि श्याम तन में जो रंग शोभा पावै । शृंगार तरु कहिये  
 को यह भाव कि शृंगार का रंग भी श्याम है । अट्टन कहिये को यह  
 भाव कि छोटा तरु फगन नाहीं कटापि फगन भी है तौ अनेक रंग का  
 फल नहीं ॥ ३ ॥ भुजों ने सर्प को औ ननों ने कमल को औ मुख ने  
 चंद्रमा को मपर में जाल्या ते मय विल, जल औ आकाश में रहे अर्थात्  
 विल में सर्प औ जल में कमल, आकाश में चंद्रमा रहे और अपर जेती  
 उपमा ते डरनि से छवि रहीं भाव हमारी भी न दुर्दशा होय ॥ ४ ॥  
 गुडुरुभनि चल्नि से मनि आंगन में हाथ को प्रतिविंब सोहन है सो  
 प्रतिविंब नहीं है कमल को संपुट है तेहि में सुंदर छवि भरि भरि के  
 मानो धरनी अपने उर में धरति है । इहां बाल प्रति जो परिछाहीं मेटात  
 आवत है सोई उर में धरना है ॥ ५ ॥ श्री कांशल्या जू पुत्र को देखि  
 के अपने पुन्य फल को अनुभव कराति हैं औ तेहि समय की किल-  
 कनि औ लखरनि प्रभु की तुलसी के हृदय में बसति है ॥ ६ ॥ २७ ॥

नेकु विलोकु धौ रघुवरनि । चारि फल त्रिपुरारि तोको  
 दिये कर नृप घरनि ॥ १ ॥ बाल भूषन बसन तनु सुंदर  
 रुचिर रज भरनि । परस्पर पैलनि अजिर उठि चलनि गिरि  
 गिरि परनि ॥ २ ॥ भुक्कनि भांक्कनि छांह सों किलकनि  
 नटनि हठि लरनि । तोतरी बोलनि विलोकनि मोहनी मन  
 हरनि ॥ ३ ॥ सपि वचन मुनि कौसिला जपि सुठर पास  
 टरनि । लित भरि भरि अंक रैतति पैत जनु टुहुकरनि ॥ ४ ॥



कै चंद्रमा के मिलवे को तम के समूह आए हैं इहां पोखराज हीर  
नीलम मानिक के जो चारो लटकन हैं सोई वृहस्पति शुक्र शनि मंगल  
हैं मुख चंद्र है बिखरे बार जे मुख पर परे हैं ते तमगन हैं आगे करि  
आइवे को यह भाव कि अंधकार से चंद्रमा से बर है ताते चंद्रमा के मान्य  
वर्ग को आगे करि लिये अर्थात् वृहस्पति गुरु हैं शुक्र उपकारी हैं ज  
गुरुपत्नी से चंद्रमा ने कुचाल किया रहा तब शुक्र सहाय किए रहे भारत  
में ख्यात है औ शनि ग्रहराज जे सूर्य तिन के पुत्र हैं ताते एक मान्य  
हैं औ मंगल मित्र हैं ॥ ५ ॥ जब जननी पट पीत ओढ़ाए तब एक  
अद्भुत उपमा भई अब सो उपमा कहत हैं कि मानो- श्याम मेघ पर  
तारागुण को देखत मात्र चंचलता सुभाव छोड़ि कै विजुरी ने  
छिपाय लिए अर्थात् तारागुण को भाव तारागुण की अयोग्यता  
करना देखिबे ते विजुरी ने भी अयोग्यता किया ॥ ६ ॥ माने  
अनेक काम मिलि कै छवि समूह को लैलै कै अंग अंग पर छावत भए  
गोसाईं जी कहत हैं कि रूप गुण रघुनाथ को तौ कहों जाँ ब्रह्मा के  
बनाए होंहि वा जाँ रघुनाथ ब्रह्मा के बनाए होंहि तौ रूप गुण कहों  
॥ ७ ॥ २६ ॥

राग केदारा । रघुवर बालछवि कछौ बरनि । सकल सुप  
की सीव कोटिमनीजआभाहरनि ॥ १ ॥ वसी मानहु चरन-  
कमलनि अरुनता तजि तरनि । रुचिर नूपुर किंकिनी मनु  
हरनि रुनभुन करनि ॥२॥ मंजु गेचक मृदुल तनु अनुहरति  
भूपन भरनि । जनु सुभग सिंगार सिमुतरु फग्यौ है अद्भुत  
फरनि ॥३॥ भुजनि भुजग सरोज नयननि वदन विधु जित्यौ  
लरनि । रङ्गै कुहरनि सलिल नभ उपमा अपर टुरि डरनि ॥४॥  
लसत कर प्रतिविंद मनि आंगन घटुरुचनि चरनि । जलज  
संपुट सुकवि भरि भरि धरति जनु उर धरनि ॥५॥ पुग्यफल  
अनुभवति सुराडि विलोकि दमरघघरनि । बसत तुलसी हृदय  
प्रभु किलकनि ललित लरपरनि ॥ ६ ॥ २७ ॥

रघुवर की बालछवि वर्नन करि कहत हौं सो छवि कैसी है कि  
 सब सुख की मर्यादा है औं कांठि काम की शोभा हरानिहारी है ॥ १ ॥  
 मानो अरुनता मूर्ध को छोड़ि कै चरण कमलन में आय बसी औं सुंदर  
 नूपुर औं किंकिनी की रुनझुन करानि मन हरति है ॥ २ ॥ सुंदर श्याम  
 कोमल तनु के योग्य भूपणन की भरनि हं अर्थात् भराव है मानो सुंदर  
 शृंगार रूप बाल तरु अद्भुत फरनि से फरचौं है इहां । शृंगार रूप छांटा  
 तरु रघुनाथ हैं औं भूपण जे शरीर में भरे हैं ते फल हैं अनुहरति कहिवे  
 को यह भाव कि श्याम तन में जो रंग शोभा पावै । शृंगार तरु कहिवे  
 को यह भाव कि शृंगार का रंग भी श्याम है । अद्भुत कहिवे को यह  
 भाव कि छांटा तरु फरत नाहीं कदापि फरत भी है तौ अनेक रंग का  
 फल नहीं ॥ ३ ॥ भुजों ने सर्प को औं ननों ने कमल को औं मुख ने  
 चंद्रमा को समर में जीतौं ते सब बिल, जल औं आकाश में रहे अर्थात्  
 बिल में सर्प औं जल में कमल, आकाश में चंद्रमा रहे और अपर जेती  
 उपमा ते डरनि से छवि रही भाव हमारी भी न दुर्दशा होय ॥ ४ ॥  
 घुटुरुभनि चलनि मे मनि आंगन में दाय को प्रतिविंब सोहन है सो  
 प्रतिविंब नहीं है कमल को संपुट है तेहि में सुंदर छवि भरि भरि के  
 मानो धरनी अपने उर में धरति है । इहां चाल प्रति जो परिछाहीं मेदात  
 आवत है सोई उर में धरना है ॥ ५ ॥ श्री काशल्या जू पुत्र को देखि  
 कै अपने पुन्य फल को अनुभव करति हैं औं तेहि समय की किल-  
 कनि औं लरखरनि प्रभु की तुलसी के हृदय में बसति है ॥ ६ ॥ २७ ॥

नेकु बिलोकु धौ रघुवरनि । चारि फल त्रिपुरारि तोको  
 दिये कर नृप घरनि ॥ १ ॥ बाल भूपन वसन तनु सुंदर  
 रुचिर रज भरनि । परम्पर पैलनि अजिर उठि चलनि गिरि  
 गिरि परनि ॥ २ ॥ भुक्कनि भ्रांक्कनि छांह सां किलक्कनि  
 नटनि हठि लरनि । तोतरी बोलनि बिलोक्कनि मोहनौ मन  
 हरनि ॥ ३ ॥ सपि यवन मुनि कौमिला सपि सुटर पामे  
 टरनि । सित भरि भरि अंक कैतति पैत जनु टुटुकरनि ॥ ४ ॥

चरित निरपत विबुध तुलसी ओट दे जल धरनि । चहत सुर  
सुरपति भयो सुरपति भयो चह तरनि ॥ ५॥२८ ॥

कौशल्या जू को और काम में लगी देखि सखी कहति है हे नृप-  
घरनि चारो भैअन को नेकु देखु तौ मानो त्रिपुरारि ने चारो फल  
तोको हाथ पर दिए हैं इहां लुप्तोत्प्रेक्षा है ॥ १ ॥ अजिर आंगन-॥ २ ॥  
नटनि नाचनि ॥ ३ ॥ सखी के वचन सुनि कै औ सुंदर पासे की  
दरनि लखि के अर्थात् सुकृत को फल जानि कै कौशल्या जू चारो  
भैअन को गोदी में उठाय उठाय लेत है मानो उठाय नहीं लेत हैं पैत  
कहें दाव ताको दोऊ हाथ से बटोरत हैं । भाव जीत के जब पामा  
देखत है तब खेलारी जां दांव पर द्रव्य धरा रहत है ताको दूनो हाथ  
से बटोरि लेत है ॥ ४ ॥ देवता इंद्र भयो चाहत है औ इन्द्र सूर्य भयो  
चाहत हैं । भाव देवता हजार नेत्र तें देखिये हेतु इन्द्र भयो चाहत है  
औ इन्द्र विश्व भरि के नेत्र तें देखिये हेतु सूर्य भयो चाहत है अर्थात्  
सूर्य सब के नेत्र मे रहत हैं ॥ ५॥२८ ॥

रागजैतथी—भूमितल भूप के बडे भाग । राम लपन रिपु-  
दमन भरत सिमु निरपत अति अनुराग ॥१॥ वान्त विभूपन  
लमत पाइ मृटु मंजुल अंग विभाग । दसरथ सुकृत मनोहर  
धिरवनि रूप फरइ जानु जाग ॥ २ ॥ राज मराल धिराजत  
विहरत जे हरइटय तडाग । ते नृपअजिर जानु कर धायग  
धरन अटक अल काग ॥३॥ मिह मिहारा मराहता मुनि मन  
कहै सुर किन्नर नाग । छैं वरु विहग विनोकिये धानक यमि  
पुर उपवन धाग ॥४॥ परिश्रम सहित राय रानिन्ह कियो  
मज्जन प्रेम प्रयाग । तुलसी फल चाणो ताके मनि मरकत  
पंकज राग ॥ ५॥२८ ॥

सुंदर कौशल्या अंगन के विभाग पाइ के वाक मलय को विभूपन

नाभत है मानों श्री दशरथ महाराज के सुकृत रूपी मनोहर विरवानि में रूप रूपी करदा लगा । विरवा बाल तरु को कहत हैं ॥२॥ जे राज मराल हर के हृदय रूपी तडाग में विहरत विराजत ते दशरथ महाराज के आंगन में चंचल काग के धरन को धकैयां ते शीघ्र धायत हैं । इहां चंचल काग भुगुंडी जी हैं “ किलकल मोहि धरन जब धावहि । चलों भागि तब पूष देपावहि ” वा चटक गंवरा आँ चंचल काग के धरन को धायत हैं ॥ ३ ॥ सिद्धि सिद्धात हैं, भाव अस भाग हमारो न भयो आँ मुनिगन सराहत हैं, भाव कहत हैं कि महाराज सब ते धन्य हैं आँ सुर किन्नर नाग कहत हैं घर पुर के उपवन आँ वाग में विहंग हँ वसि बालकानि को विलोकिए । पुर के समीप सो उपवन दूरि सो वाग ॥४॥ परिवार सहित राजा आँ रानिन्ह ने प्रेमरूपी प्रयाग में मज्जन कियो तेहि मज्जन के फल चारिउ बालक हैं । मरकत मणि आँ पद्मराग मणि के सम अर्थात् नीलमणि सम श्री राम जू आँ भरत जू, पंकज राग सम लक्ष्मण जू आँ शत्रुघ्न जू हैं ॥ ५॥२९ ॥

राग असावरी—छगन भगन आंगन पेलत चारु चाख्यौ भाई । सानुज भरत लाल लपन राम लोने लोने लरिका लपि मुदित मातु समुटाई ॥१॥ बाल वसन भूपन धरे नष सिष छवि छाई । नील पीत मनसिज सरसिज मंजुल मालनि मानो इन्ह देहनि ते दुति पाई ॥ २ ॥ ठुमुकि ठुमुकि पग धरनि नटनि लरपरनि सोडाई । भुजनि मिलनि रुठनि टूठनि किलकनि अबलोकनि बोलनि वरनि न जाई ॥ ३ ॥ जननि सकल चहुं वोर आल बाल मनि अंगनाई । दसरथ सुकृत विबुध विरवा विलसत विलोकि जनु विधि वर वारि वनाई ॥ ४ ॥ हर विरंचि हरि हेरि राम प्रेम परवसताई । सुष समान रघुराज के वरनत विमुह मन सुरनि सुमन भरिलाई ॥ ५ ॥ सुमिरत शोरघुबरनि की लोला लरिकाई ।

तुलसीदास अनुराग अथवा आनंद अनुभवत तब को सो  
अजहू अघाई ॥ ६॥३० ॥

सुगम ॥ १ ॥ काम को नील पीत कमल की मालों ने मानहुं इन  
देहन ते सुति पाई है ॥२॥ दृवनि प्रसन्न होनि ॥ ३ ॥ मणि का आंगन  
नहीं है थाटा है चागे भया नहीं है दशरथ सुकून के बाल कल्पवृक्ष हैं  
ताको बिलसत देखि के ब्रह्मा ने माना रूपी श्रेष्ठवारि चारो ओर बनाई  
हैं वारि स्थानि ॥ ४ ॥ शिव ब्रह्मा विष्णु राम की प्रेम ते परबसनाई  
देखि के दशरथ महागन के सुख समाज को बिभूद मन ते बर्नत हैं  
आ देवतो ने फूलनि की झरिकाई है ॥ ५ ॥ श्री मान् चारों भयन की  
लरिकाई की लीला सुमिरत मात्र तुलसीदास अनुराग रूप अवय में  
तब के ऐसा आनंद अजहू अघाय के अनुभव करत हैं ॥ ६ ॥ ३० ॥

राग विलावल - आंगन पैलत आनदकांदा । रघुकुल  
कुमुद सुपद चारु चंदा ॥१॥ सानुज भरत लपन संग सोहै ।  
सिमु भूपन भूपित मन सोहै ॥२॥ तनु टुति मोर चंद जिमि  
भलकै । मनहुं उमगि अंग अंग छवि छलकै ॥ ३ ॥ कंठि  
किंकिनी पाय पैजन वाजै । पंकज पानि पहुचिया राजै ॥४॥  
कठुला कंठ बघनहा नीकै । नयन सरोज मयन सरसीके ॥५॥  
लटकन लसत ललाट लटूरी । दमकत है हैदंतुरिआ रूरी ॥६॥  
मुनिमन हरत मंजु मसि बुंदा । ललित बदन बलि बाल  
मुकुंदा ॥ ७ ॥ कुलही चित्र विचित्र भंगूली । निरपत मातु  
मुदित प्रतिफूली ॥ ८ ॥ गहिमनिपंभ डिंभ डगि डोलत ।  
कलबल बचन तोतरे बोलत ॥ ९ ॥ किलकत भुंकि भांकत  
प्रतिबिंबनि । देत परम सुष पितु अरु अंबनि ॥१०॥ सुमिरत  
सुषमा हियहुलसी है । गावत प्रेम मगन तुलसी है ॥११॥३१॥

१ । २ । ३ । पंकज पाणि कर कमल ॥ ४ ॥ मानों नेत्र काम के

तद्भाग के कमल है वा काम रूप तद्भाग के ॥ ५ ॥ रूरी भली ॥६॥७॥  
कुलही टोपी औ झंगुली अंगरखी, मातु बलिहारी जात संते हर्षहिं बलि  
जो पूर्व पद में है ताको अन्वय इहां करना ॥ ८ ॥ डिंभ बालक ॥९॥१०  
मुपमा परमा शोभा ॥ ११ ॥ ३१ ॥

राग कान्हरा—ललित सुतहि लालति सचुपाये । कौ-  
सल्या कल कनक अजिर महं सिपवत चलन अंगुरिया  
लाये ॥ १ ॥ कटि किंकिनो पैजनिचा पायेन वाजत रुनभुन  
मधुर रिंगाण । पहुंची करनि कंठ कठुला बन्धौ केहरिनप  
मनि जरित जराये ॥ २ ॥ पीत पुनौत विचित्र भंगुलिया  
सोहत स्याम सरीर मोहाये । दंतिया है है मनोहर मुप-  
छवि अरुन अधर चित लित चुराये ॥ ३ ॥ चिबुक कपोल  
नासिका सुंदर भाल तिलक मसिदिंदु वनाये । राजत नयन  
मंजु अंजनयुत पंजन कंज मीन मटुनाये ॥ ४ ॥ लटकन चारु  
भृकुटिचां टेट्टी सेट्टी सुभग सुदेस सुभाये । किलकि किलकि  
नाचत चूटकी मुनि डरपति जननि पानि छुटकाये ॥ ५ ॥  
गिरि घुटुनि टिकि उठि अनुजनि तोतरि वीलत पृष देपाये ।  
बालकेलि अवलोकि मातु सब मुदित मगन आनंद अनमाये ॥ ६ ॥  
देपत नभ घन बोट चरित मुनि जोग समाधि विरति विम-  
राये । तुलसिदास जे रसिक न येहि रस ते जन लड लीयत  
जग जाये ॥ ७ ॥ ॥ ३२ ॥

लालतिहं दुन्दरति, मचुपाए आनंद पाए, कल सुंदर ॥ १ ॥ मधुर  
रिगाए धीरे धीरे चलाए आ इहां जो जहाए शब्द है ताको रूढ़ि लक्षणा  
फारि पहिराये अर्थ करना ॥ २ ॥ ३ ॥ अंजन कमल मीनो के पद को  
नीचे किए अंजन युत सुंदर नयन शोभत हैं ॥ ४ ॥ सेट्टी आदि को  
अर्थ पहिले लिखि आए, पानि छुटकाए हाथ छोड़ाए में जननी दरपति

ह या आप श्री राम दग्गत हैं ॥ ५ ॥ पूष देखाए माता के मालपूषा  
देखाए से तोनर बोलन अर्थात् तोनराय के मागत बालकेलि देखि के  
माता सब दर्पित हैं औ अनमाए कहे जो न अमाय अर्थात् अपार  
आनन्द तेहि में मगन हैं ॥ ६ ॥ विरति वैराग्य जाए वृथा ॥७॥३२ ॥

राग ललित । छोटो छोटो गोड़िभा, अंगुरिषां छोटी  
छवीनी । नय जोति मोती मानो कमल दलनि पर । ललित  
आंगन पैलै ठुमुकि ठुमुकि चलै भुंभुन भुंभुन पाय पैजनी  
मृदु मुपर ॥ १ ॥ किंकिनी कलित कटि हाटक रतन जटि  
मंजु कर कंजनि रहचिआ रुचिरतर । पिअरी भीनी भंगुली  
सांवरे मरीर पुलौ बालक दामिनि चोटो मानो वारे वारि-  
घर ॥२॥ उर वघनहा कंठ कठुला भंगुले केस मेठी लटकन  
मसिबिंदु मुनिमन हर । अंजन रंजित नैन चित चोरै चित-  
वनि मुष शोभा परवारों अमित असमसर ॥ ३ ॥ चुटकी  
बजावति नचावति कौसल्या माता बालकेलि गावति  
मल्हावत प्रेम सुभर । किलकि किलकि हंसै द्वै द्वै दंतुरिआं  
लसै तुलसी के मन बसै तोतरे वचन बर ॥ ४॥३३ ॥

मृदु मुखर कोमल शब्द से ॥ १ ॥ कटि में किंकिनी शोभित है  
औ सोना रत्न से जड़ी अतिशय सुंदर पहुंचियां सुंदर कर कमलानि  
में हैं औ बालक के सांवरे शरीर में खुलै वाली पीत रंग की शीनी  
झंगुली है मानो बालक नहीं है छोटे मेघ हैं झिंगुली नहीं है दामिनि  
है ताको ओढ़ि लई है ॥ २ ॥ झंगुले केश बिखरे वार असमसर कहे  
पंचवाण अर्थात् काम ॥ ३ ॥ प्रेम सुभर प्रेम में सुंदर भरि ॥ ४॥३३ ॥

सादर सुमुषि विलोकि राम सिसु रूप अनूप भूप लिये  
कनियां । सुंदर स्याम सरोज बरन तन सब अंग सुभग  
सकल सुष दनियां ॥ १ ॥ अरुन चरन नय जोति जग-

सगति रुनभुन करति पांय पंजनियां । कनक रतन मनि  
 जटित रटति कटि किंकिनि कलित पीतपटतनियां ॥ २ ॥  
 पद्मिनी करनि पदिक हरि नप उर कठुला कंठ मंजु गज-  
 मनियां । रुचिर चिबुक रद अधर मनोहर ललित नासिका  
 लसति नयुनियां ॥ ३ ॥ विकट शुकुटि सुप्रमानिधि आनन  
 कल कपोल कानन नगफनियां । भाल तिलक मसिविंदु  
 विराजत सोहत सीम लाल चौतनियां ॥ ४ ॥ मन मोहनी  
 तोतरौ बोलनि मुनिमन हरनि हसनि किलकनियां । बाल  
 सुभाय विलोल विलोचन चोरति चितहि चारु चितवनियां  
 ॥ ५ ॥ मुनि कुलवधु भरोपनि भांकाति रामचंद्रछवि चंद्र  
 वदनियां । तुलसिदास प्रभु टपि मगन भई प्रेमविवस कछु  
 सुधि न अपनियां ॥ ६ ॥ ३४ ॥

हे सुमुखि रूप है अनूप जेहि को तेहि राम शिशु को भूप गोद  
 में लिए हैं ते देखु, सखी को उक्ति है ॥ १ ॥ पीत पटतनियां करिके  
 कलित कहें युक्त जो कटि तेहि में रतन मणिन से जड़ित जो कनक-  
 मयी किंकिनी सो रटति है । पीतपट तनियां कहें पीत रंग के बख की  
 कछनी, मारवाड़ में लंगोटी को तनियां कहत हैं पर इहां राजकुमार हैं  
 ताते कछनी जानना ॥ २ ॥ पदिक धुकधुकी गजमनियां गजमुक्ता  
 रद दांत ॥ ३ ॥ विकट टेढ़ कल सुंदर नगफनियां कान को भूपण  
 मसिद्ध है जाको कारी आदि देश में दुर्वचा भी कहत हैं, चौतनियां  
 टोपी ॥ ४ ॥ विलोल चंचल ॥ ५ ॥ यह सखी को वचन मुनि चंद्र-  
 वदनी कुलवधु शरोखनि तें ज्ञाकति हैं । यह कथा सत्योपाख्यान  
 में स्पष्ट है ॥ ६ ॥ ३४ ॥

राग विलावल । सोहत सहज सोहाये नयन । पंजन  
 मीन कामल सकुचत तव जय उपमा चाहत कवि दिन ॥१॥  
 सुंदर सब अंगनि सिमुभूपन राजत जनु सोभा आये लैन ।



बडो लाभ लालची लोभवस रहि गए लपि रुपमा बहु  
सैन ॥२॥ भोर भूप लिए गोद मोद भरे निरपत वदन सुनत  
कल दैन । वाल रूप अनूप राम छवि निवसति तुलसिदास  
उर छैन ॥ ३।३५ ॥

सहज सोहाए अर्थात् अंजनादि विना ॥ १ ॥ सुंदर सब अंगन में  
वालभूषण शोभत हैं । मानो भूषण नहीं हैं बहु काम हैं ते शोभा लेवे  
को आवत भए पर मृपमा रूप बड़ा लाभ लखि लालची काम लोभ  
वस रहि गए ॥२॥ निवसति उर अन हृदय रूपी गृह में वसति ॥३॥३५

राग विभास—भोरभयो जागहु रघुनंदन गतव्यलीक  
भगतनि उरचंदन । ससिकर छीन छीन टुतितारे तमचर सुपर  
सुनहु मेरे प्यारे ॥ १ ॥ विकसत कांजकुमुद विलपानि । लै  
पराग रस मधुप उडानि । अनुज सपा सब वोलनि आए ।  
वंदिन्ह अतिपुनीत गुनगाए ॥ २ ॥ मनभावतो कलेऊं कौजे ।  
तुलसिदास कहं जूठन दोजे ॥ ३ ॥ ३६ ॥

माता की उक्ति है । हे रघुनंदन भोर भयो जागहु । तुम कैसे हो कि  
व्यलीक कहें कपट तेहि करि रहित जो भक्त तिन के उर के चंदन हो  
अर्थात् शीतल करनिहारे ॥ १ ॥ चंद्रमा किरन रहित भए औ तारन  
की धुति छीन भई औ मुसगा बोलि रहे हैं तेहि शब्द को सुनहु ॥ २ ॥  
कमल फूले औ कोई सम्पुटित भई औ कमलन की धूरी रस लैके भ्रमर  
उड़त भए ॥ ३ ॥ ३६ ॥

प्रात भयो तात वलि मातु विधुवदन पर मदनवारी कीटि  
उठो प्राणप्यारे । सूत मांगध वंदी वदत विरदावली द्वारसिसु  
अनुज प्रियतम तिहारि ॥ १ ॥ कोकगत सोक अवलोकि ससि  
छीन छवि अरुनमय गगन राजत रुचिर तारे । मनहु रवि  
पाल मृगराज तमनिकर करि दलित अति ललित मनिगन

विद्यारे ॥२॥ सुनहु तमचर सुपर कीर कलहंम पिक कीकि रव  
 कलित वोलत दिहंगवारि । मनहुं, सुनिवृन्द रघुवंसमनि  
 रावरे गुनतगुन आश्रमनि सपरिवारे ॥ ३ ॥ सरनि विकसति  
 कंजपुंज मकरंट वर मंजुतर मधुर मधुकर गुंजारि । मनहुं  
 प्रभुजन्म सुनिचयन अमरावती इंदिरानंद मंदिर संवारि ॥४॥  
 प्रेम संमिलित वर वचन रचना अकनिराम राजोव लोचन  
 उधारि । दाम तुलसी मुद्रित जननि करि आरती सहज सुंदर  
 अजिर पांड धारि ॥ ५ ॥ ३७ ॥

हे तान ! प्रात भयो, मैं माता बलि जाउं औ तुम्हारे सुख चन्द्र पर  
 कोटि मदन वारों । हे भानुप्यारे उठो, पौराणिक कथक भांड धिरदावली  
 कहत हैं औ तुम्हारे अतिशय प्रिय बालक और अनुज द्वार पर खड़े  
 हैं । १॥ चंद्रमा की छवि छीन देखि कै चक्र वाक शोक रहित भए औ  
 लाल रंग मय आकाश में सुंदर तारे राजत हैं । मानो बाल रवि रूप सिंह  
 ने तमममूह रूप हाथिन को विदारित करि अति सुंदर मणि गणन  
 को छितिराय दिये । इहां मणिगण तारा हैं मुरगा बोलत हैं औ सूगा औ  
 राजहंस औ कोइलि औ मोर रव कलित कहें शब्दयुक्त हैं औ वचो  
 पच्छिन के बोलत हैं सो सुनहु । पक्षी औ पक्षिन के बच्चा नहीं बोलत  
 हैं हे रघुवंशमणि मानो सुनिगन परिवार सहित आश्रमन में आप के  
 गुण वर्णत हैं, इहां आश्रम खोता है । ३ । तड़ागन में कमलन के समूह  
 प्रफुल्लित हैं तिन में श्रेष्ठ रस है तापर भ्रमर भति सुंदर मधुर गुंजार  
 करत हैं मानो भ्रमर गुंजार नहीं करत हैं प्रभु को जन्म सुनि के इन्द्र  
 के पुरी में चयन है अर्थात् देवता लोग नृत्यगान करत हैं प्रफुल्लित कमल  
 नहीं हैं लक्ष्मी ने आनंद को मंदिर बनायो है ॥ ४ ॥ प्रेमयुक्त श्रेष्ठ  
 वचन रचना सुनि श्रीगम कमल सम नेत्र उधारत भए । गोसाईं जी  
 कहत हैं कि हरपित जननी आरती करनि हैं औ सहज सुंदर जो रघु-  
 नाथ सो आंगन में पधारत भए ॥ ५ ॥ ३७ ।

जागिये कृपानिधान जानि राध रामचन्द्र जननी कहै



जान अर्थात् शोभाहीन और मय तारन की श्रुति मन्थीन मानो सूर्य  
 नहीं उए पूर्ण ज्ञान को प्रकाश भयो और रात्रि नहीं घेती भव का  
 वेलास अहंता ममतादि वीर्यो और आज त्राम रूप अंधकार को तोप  
 रूप सूर्य के तेज ने जगाय दिये ॥ २ ॥ हे प्राण जीवन धन मेरे वारे  
 सधुर शब्द ते पक्षीन के समूह बोलत हैं, हमारे वचन को विश्वास करि  
 श्रवण ते नुम सुनहु मानो पक्षी नहीं बोलत हैं वेद रूप बंदी और मुनि-  
 वृंद रूप मृत मागधादि जय जय जय जय जयति कैट भारे कहि यम  
 कहत हैं ॥३॥ कमल समूहों के फूलन मात्र कमलन के त्वागि के पृथक हे  
 भंवरन के समूह मुंदर कोमल धुनि ते गुंजत चले भाव सायंकाल में  
 कमलन के संपुटित होने ते भीतर पड़ि गए रहे ते उड़ि चले ते भ्रमर  
 कमल विहाय गुंजार करत नहीं उड़त हैं मानो वेगम्य पाय सब शोक  
 रूप गृह कूप छोड़ि के तिहार मेवक गुण को गुणन प्रेम में मत्त फिरत  
 हैं । संपुटित कमल का गृह कूप में उत्प्रेरणा करने का यह भाव कि  
 संपुटित कमल से भी निकलना कठिन है और गृह कूप से भी निकलना  
 कठिन है और संपुटित भए पर भ्रमर को केवल कमल देखि परत है  
 तैसे गृहकूप में जे पड़े हैं तिन को केवल घर देखि पड़त है । इहां  
 कमल के प्रफुल्लित होए से भ्रमर छुट्टी पावत है इहां प्रभु कृपा करि  
 जब निकाल तब छुट्टी पाव ॥ ४ ॥ रसाल प्रिय वचन सुनत मात्र  
 अतिशय दयाल जे श्री राम ते जागे । जंजाल भागत भए और अनेक  
 दुःखन के समूहन के टारत भए । गोसाईं जी कहत हैं कि दास मुखार-  
 विंद देखि के अति अनंद भए ताते माया के परम मंद भारे भ्रम फंद  
 छूटे ॥ ५ ॥ ३८ ॥

बोलत धवनिपकुमार ठाठे नृप भवन द्वार रूप सील  
 गुन उदार जागहु मेरे प्यारे । विलपित कुमुदिनि चकोर  
 चक्रवाक हरप भोर करत सोर तमचर पग गुंजत अलि  
 न्यारे ॥ १ ॥ रुचिर सधुर भोजन करि भूपन सजि सकल  
 अंग संग अनुज बालक सब विविधिविधि मंत्रारे । करतल  
 गहि ललित चाप भंजन रिपुनिकरदाप कटितट पटपीत

तून भायक अनियारे । २ ॥ उपवन मृगया विहार क  
 गयने कृपाल जननी मुप निरप पुन्य पुंज निज विचारे ।  
 तुलसिदास मंग लीजै जानि दीन धमै कौजै दोजै ।  
 विमल गावै चरितवर तिहारि ॥ ३॥३८ ॥

राजभवन के दरवाने पर राजन के बालक बाड़े भए बोलत  
 अपान् तुम्हारे जागिने को मत्स्यना देखत हैं । हे रूपशील पुन ५४  
 मेरे प्यारे जागहू, भोर भएने कोई भौ चकोर बिलखान हैं औ चक्र  
 को हरप है दुर्गा औ और पक्षी जोर करत हैं और अमर न्यारे  
 करत हैं, एतना सुनि जागे रह गेप है ॥१॥ अनुज औ बालक सब  
 बिबिधि बिधि मंत्रारे भए हैं तिन के संग सुंदर मधुर भोजन करि  
 औ सकल अंगन में भूयन औ कटिदेश में पीतपट औ तरकस च  
 सायक मुक्त नाजि के औ रिपु समूहन के अहंकार भंजन क  
 सुंदर चापस्तत्राल में गाहे के डबन में सिंकार खालि के हेतु  
 गवने । जननी ने दुख देखि के अपने पुन्य का समूह विचारा । हारा  
 काहे को भाव मानस रानायन में ररट है । जे मृग राम धान के भां  
 ने तनु मरि सुखके निधारे । गोसाई जी कहत हैं कि हम को लं  
 लीजै औ दीन जानि के धमै कौजे औ निर्मल मति दीजै जाते देहो  
 अरु करिबन को गावै । इहां गोसाई जू आवेस मे देहाध्यास भूलि प्रलय  
 मरु ह्ये ॥ ३९ ॥

रागनट—पेलन चलिचै आनदकांद । सया प्रिय नृप हार  
 ताहे विपुल बालक वृन्द ॥१॥ टपित तुम्हरे दरस कारन  
 वातक दास । वपुष वारिद वरपि छवि जल हरहु लोचन  
 ॥२॥ बंधु वचन विनीत सुनि उठे मनहु केहरि वान ।  
 सर चाप वार उर नथन बाहु विमाल ॥३॥ चलत  
 प्रतिविं राजत अजिर सुपमापुंज । प्रेमवस प्रतिचान  
 नै नने देति सासन कांज ॥ ४ ॥ निरपि परम विचि

सोभा चकित चितवर्षितात । हरप त्रिवस न जात कहि  
निजभवन विहरहु तात ॥ ५ ॥ देखि तुलसीदास प्रभुछवि  
रहे मय पल रोकि । यकित निकर चकोर मानहु सरद डंडु  
विलोकि ॥ ६ ॥ ४० ॥

सखा औ मिय जे बालकन के अनेक युत्यों ते, नृपद्वार में खड़े हैं वा  
सखा औ मिय औ बालकन के अनेक युत्यों नृपद्वार में खड़े हैं, तुम्हारे  
दरस के कारण, चतुरदास रूप चातक जे त्रिपित हैं तिन को सररीर रूप  
मेघ ते छवि रूप जल वरपि के नेत्रन की प्यास हरहु ॥२॥ विनीत नम्र  
केहरी बालक कहें सिंह को बालक ॥३॥ परम शोभा पुंज जो आंगन  
है तेहि में चलत संते पद की परिछाहीं शोभति है सो परिछाहीं नहीं  
है मानो मेघवस चरण प्रति पृथ्वी कमलन के आसन देति  
है ॥ ४ ॥ हर्ष के विशेष वस हैं ताते नहीं कहिजात है कि हे तात निज  
भवन में विहरहु अर्थात् बाहर न जाहु ॥ ५ ॥ गोसाई जी कहत हैं कि  
प्रभुछवि देखि के सब पलक रोकि रहे मानो चकोरन के समूह सरद  
पूनों के चंद्र को देखि यकित भए ॥ ६ ॥ ४० ॥

विहरत अवध वीधिन्ह राम । संग अनुज अनेक सिसु  
नव नील नीरद स्याम ॥ १ ॥ तरुन अरुन सरोजपद बनि  
कनकमय पद चान । पीत पट कटि तून बर कार ललित जघु  
धनुवान ॥ २ ॥ लोचननि को लहत पाल छवि निरपि पुर-  
नरनारि । वसत तुलसी दास उर अवधेस के सुत चारि ॥३॥४१

नवीन स्याम मेघ सम रयाम श्रीराम अनुज औ अनेक शिशुन के  
संग अवध की गलिन में विहरत हैं ॥ १ ॥ तरुण जो लालकमल तद्रत  
चरण हैं तामें सुवर्ण मयी पनही बनी है अर्थात् पहिरे हैं, पीतपट औ  
तरकस कटि में है, श्रेष्ठ करनि में सुंदर छोटे धनुष औ वान हैं ॥ २ ॥  
लोचन इ० मु० ॥ ३ ॥ ४१ ॥ करतल सोहत वान धनुहिया । यह पद  
छेपक है ताते न लिखा

जैसे राम ललित तैसी लोने लपन लालु । तैसई भात  
 सोल सुपमा सनेहनिधि तैसई सुभ प्रसंग सनुसालु ॥१॥  
 धरें धनु सर कर कसे कटि तरकसी पीरे पट वोढि चहैं  
 चारु चालु । अंग अंग भूपन जराय की जगमगत हरत जन  
 की जी को तिमिर जालु ॥२॥ पिलत चौहटा घाट वीधी  
 वाटकनि प्रभु सिव सुप्रम मानस मरालु । सोभा दान दैदें  
 सनमानत जाचक जन करत लोक लोचन निहालु ॥ ३ ॥  
 रावन दुरित दुप दलै सुर कहै आजु अवध सकल सुख को  
 सुकालु । तुलसी सराहै सिद्ध सुकृत कौसल्या जू की भूरिभाग  
 भाजन भुआलु ॥ ४॥४२ ॥

ललित सुंदर, लोने सुंदर, सील सुखमा सनेह निधि सील  
 औ परम सोभा औ स्नेह के समुद्र, शत्रुशालु शत्रुहन जी ॥ १ ॥  
 तरकसी तरकस जराय के जड़ाऊ के तिमिर जाल अंधकार समूह । २।  
 शिव जी के सुंदर प्रेम रूप मानस सर के हंस जो प्रभु हैं सो चौहटा  
 औ घाट गली औ फुलवारिन में खेलत हैं औ लोक के लोचन रूप  
 जाचक जन के सोभा दान दै दै के सनमानत हैं औ निहाल करत  
 हैं ॥ ३ ॥ देवता कहत हैं कि अवध में सकल सुख को सुकाल है पर  
 रावन पाप रूप दुख को आजुए मारैं, भाव अवध के सुख में न भूलैं  
 हमारे दुख को देखि शीघ्रता करैं वा देवता कहत हैं कि आजु कहैं वा  
 समैं में रावन पाप रूप जो दुख है ताको मारैं तो अवध में सकल सुख  
 को सुकाल होय । भाव फेर दुकाल का भै न रहि जाय । गोसाईं जी  
 कहत हैं कि बड़े भाग्य के पात्र जो महाराज दशरथ औ कौशल्या जू  
 तिन के सुकृत को सिद्ध सराहत हैं । ४। ४२ ॥

राम ललित । ललित ललित लघु लघु धनु सर कर  
 तैसि तरकनि कटि कसे पट पिअरे । ललित पनहि पांथ  
 पैजनी किंकिनि धुनि मुनि सुप लहै मनु रहै नित निअरे ॥१॥

पहंचो अंगद चारु हृदय पदिक हारु कुंडल तिलक छवि  
गडो कवि जिअरे । सिर सिटे पारो लाल नीरज नयन विसाल  
सुंदर वदन ठाढ़े सुरतरु सिअरे ॥ २ ॥ सुभग सकल अंग  
अनुज बालक मंग टेंपे नर नारि रत्नै ज्यौ कुरंग दिअरे ।  
पिलत अवध पोरि गोली भंगरा चकडोरि मूरति मधुर वसै  
तुलसी के हिअरे ॥ ३ ॥ ४३ ॥

ललित० इ० मु० ॥ १ ॥ अंगद विजायठ पदिक धुकुधुकी हार  
माला वा सात पदिक के माला का नाम पदिक हार है सिर सिटे  
पार लाल गिर में लाल टापी है नीरज कमल । सुरतरु सियरे कल्पवृक्ष  
के छाया में ॥ २ ॥ ज्यों कुरंग दियरे जैसे मृगा दीपक को देखि के ।  
संका । मृगा तो गान मुनि मोहित होत है दीपक ने कैसे लिखे ? उत्तर ।  
व्याधा दीपक धारि के कुछ गान करत हैं तब मृगा उहां आवत है  
यह प्रसिद्ध है चकडोरी चकई ॥ ३ ॥ ४३ ॥

छोटि ऐ धनुहिआ पनहिआ पगनि छोटो छोटि ऐ  
कछौटी कटि छोटि ऐ तरकमी । लसत भंगुली भोनी  
दासिनि की छवि छोनो सुंदर वदन सिर पगिआ जरकमी ॥ १ ॥  
यय धनुहरत विभूषन विचित्र अंग जोहै जिय आवति मनेह  
की सरकमी । मूरति की मूरति कही न परै तुलसी पै  
जानै मोई जाकि उर कामकै करकमी ॥ २ ॥ ४४ ॥

कछौटी कछनी ॥ १ ॥ अवस्था के अनुहार विचित्र भूषण अंग  
में हैं देखिये नें जिय में स्नेह की प्रवृत्ताई आवति है तुलसी पै मूरति  
की मूरति नहीं कटि परै है जा के हृदय में करक ऐसी कामकै है अर्थात्  
मूरति मोई जानै ॥ २ ॥ ४४ ॥

राग टोड़ी राम लपन एक घोर भरत रिपुदहन लाल  
एक घोर भए । सरजू शीर मन सुपट भूमिधल गनि गनि



गोइया वांठि लये ॥ १ ॥ कांटुक केलि कुसल ह्य चटि चटि  
मन कस कसि ठोकि ठोकि पये । करकमलनि विचित्र  
चौगानै पेलन लगे पेल रिभये ॥२॥ व्योम विमाननि विदुष  
विलोकत पेलक पेपक छांइछये । सहित समाज सराहि  
दसरघहि वरपत निज तरु कुमुमचये ॥ ३ ॥ एक लै वटत  
एक फेरत सब प्रेम प्रमोद विनोद मये । एक कहत भइ  
हाल राम जू को एक कहत भइया भरत जये ॥ ४ ॥ प्रभु  
वकसत गज वाजि वमन मनि जय धुनि गगन निसान ह्ये ।  
पाइ सपा सेवक जाचक भरिजीव न दूसरे द्वार मये ॥ ५ ॥  
नभ पुर परति निळावरि जहँ तहँ सुरसिद्धनि वरदान दये ।  
भूरिभाग अनुराग उमगि जी गावत मुनत चरित नितये ॥६॥  
हारे हरप होत हिय भरतहि जिते सकुचि सिर नयन नए ।  
तुलसी सुमिरि सुभाव सील सुकृती तेइ जी एहि रंग रए॥१४॥

राम इ० सु० ॥ १ ॥ गेंदा के खेल में जे कुशल हैं ते घोड़न पर  
चढ़ि चढ़ि कै मन को ठोकि ठोकि मजबूत करि करि के खड़े भए ठोकि  
ठोकि मजबूत करिबे को यह भाव कि हम हारंगे नहीं अवश्य जीतंगे  
अस निश्चै करि करि वा मन को फेरि फेरि के अर्थात् मिलाप छांड़ि  
छोड़ि के ताल ठोकि २ के खड़े भए वा मन भरि घोड़न को कसि कसि  
के याल ठोकि ठोकि के चढ़ि चढ़ि खड़े भए हस्त कमलन में विचित्र  
दण्डा है रिझावनवाले खेल खेलन लगे यह खेल या भांति ते खेला  
जात है दूनो ओर गोइया खड़े होत हैं बीच में एक सीवां बनावत हैं  
जमीन में गेंदा को धरि घांड़े पर से दंडा मारि मारि के गेंदा को सीवां  
के ओर बढ़ावत हैं औ दूसरे ओर से दंडा मारि मारि के गेंदा को  
फेरत हैं जेहि ओर से सीवां पार होय तेहि की हाल होय अर्थात् जीत  
ये ॥ २ ॥ आकाश में विमानन पर देवता देखत हैं खेलनेवाले और  
खनेवालों की छाया छाय रही वा खेलनेवालों पर देखनेवालों की

छाया छांय रही वा खेलनेवालों की छाया सम देखनेवाले अर्थात् देवता छाजे समाजसहित राजा दशरथ को सराहि के अपना तरु जो कल्पवृक्ष ताको पुष्प समूहें वर्षत भए ॥ ३ ॥ सब प्रेम अनन्द औ कौतुक में जे हें तिन में से एक गेंदा कों लै बढत औ एक रोकि कै फेरत एक कहत है कि राम जू की जीत भई औ एक कहत है कि भैया भरत जीते ॥ ४ ॥ हये कहें हने अर्थात् बजाए ॥५॥ जहं तहं पुर तें औ आकाश तें नेवछावरि परति है अर्थात् आकाश तें देवता औ पुर तें पुरवासी नेवछावर करत देवता औ सिद्ध वरदान देत भए अनुराग में उमगि के जे ए चरित नित्य सुनत गावत हें तिन के बड़े भाग हें ॥६॥ सिर नैन नए सिर औ नैन नीचे के नवावत भए रए कहें रंगे ॥७॥४५॥

पेलि पेलि सुपेलनिहारे । उतरि उतरि चुचुकारि तुरंगनि सादर जाइ जाहारे ॥१॥ बंधु सखा सेवक सराहि सनमानि सनेह संभारे । दिए वसन गज वाजि साजि सुभ साजि सुभांति संवारे ॥२॥ सुदित नयन फल पाइ गाइ गुन सुरसानंद सिधारे । सहित समाज राज मंदिर कहं रामराउ पग धारे ॥ ३ ॥ भूपभवन घर घर घमंड कल्याण कोलाहल भारे । निरपि हरपि आरती निच्छावरि करत सरौर बिसारे ॥ ४ ॥ नित नये मंगल मोद अवध सब विधि सब लोग सुपारे । तुलसी तिन्ह सम तीउ जिन्ह के प्रभु ते प्रभुचरित पियारे ॥ ५॥४६ ॥

सुंदर खेलनेवाले खेल खेलि के ॥ १ ॥ बंधु सखा सेवक कों सराहि सनमानि के फिरि सनेह को सम्हारे अर्थात् सनेह में आप जो विदल हें गए रहे ताको सम्हारे पुनि वसन औ घोड़ा हाथी साजि कै औ सुंदर भांति ते संवारे जे सुभ साज भाव सुंदर पोसाक ते दिए वा कल्याण साजि के सुंदर भांति ते संवारत भए औ वसनादि दिए वा सनेह सम्हारे यह सब दिए भाव जेहि की जेतनी प्रीति तेतनी दिए वा

सनेहको सम्हारे भए जो बंधु आदि हैं तिनको सराहि सनमोनि के वसनादि दिए सनेह सम्हार भए कहिये को यह भाव कि सनेह को न सम्हारें तो देहाध्यास रहित है जाहिं ॥२॥ मुदित इ० सु० ॥३॥ भूपति के भवन में औ घर घर में कल्याण को घमंड है अर्थात् कल्याण पूरि रहा है वा कल्याण को अहंकार है ॥ ४ ॥ गोसाईं जी कहत हैं कि तिन्ह अवध वासी सम तेऊ हैं जिन्ह के प्रभु तें प्रभु का चरित पिआरा है ॥५॥४६॥

राग सारंग—चहत महामुनि जाग जयो । नीच निसाचर देत दुसह दुष कसतन ताप तयो ॥ १ ॥ सापे पाप नये निदरत पल तव यह मंत्र ठयो । विप्र साधु सुर धेनु धरनि हित हरि अवतार लयो ॥२॥ सुभिरत श्रीसारंगपानि छन मै सब सोचु गयो । चले मुदित कौसिक कोसलपुर सगुननि साथ दयो ॥ ३ ॥ करत मनोरथ जात पुलकि प्रगटत आनंद नयो । तुलसी प्रभु अनुराग उसगि मग मंगलमूल भयो ॥ ४ ॥ ४७ ॥

महामुनि जे विश्वामित्र जू ते यज्ञ औ जय दोऊ चाहत हैं । महामुनि कहिये को यह भाव कि तपबल याही देह भए क्षत्री ते ऋषिपति अस कोऊ मुनि नहीं भयो । नीच निसाचर दुःसहदुःख देत हैं ताते तन तापन ते तयो आ कृश भयो ॥ १ ॥ अब विश्वामित्र जू का विचार कहत हैं साप देइये में पाप है आ नवनई किए में बल निरादर करत है अस विचारि के तव यह मंत्र टान्यो कि विमादि के हित हरि अवतार लियो है इहां और नाम न कहे हरिहीं कहे ताको यह भाव कि या काल में भपना दुःख दगाइये पर दृष्टि है अर्थात् हरतीति हरिः ॥ २ ॥ सारंगपानि कहिये को यह भाव कि सारंग भय धनुष हाथ में है तो क्यों न हमारे शत्रु को नाशिये । सगुननि साथ दयो कहिये को यह भाव कि राह भरि सगुन होत आयो ॥ ३ ॥ पुलकि करि के मनोरथ प्राप्त जात है आ नयो जो कबहूँ न भयो आनंद गो प्रगटत है गोसाईं जी

कहत हैं कि प्रभु अनुगत के उगत करि कै मग मंगलमूल भयो । भाव  
नयताई दस के ओर घर में लगे रहे तवताई न भयो-ओ प्रभु के ओर  
चलन राह मे भयो आगे क्या जान केतना होयगो ॥ ४ ॥ १७ ॥

आजु सकल सुहातफल पाइहीं । सुप की सीधे धविधि  
आनंद की चवथ विलासिही जाइहीं ॥ १ ॥ सुताई सहित  
दसरथाहि टैपिही गेस पुनकि उर लाइहीं । रामचन्द्रमुप  
चन्द्र मुधा छवि नयन चकारनि प्याइहीं ॥ २ ॥ सादेर समा  
चार नृप वृक्षिहैं हीं सब कथा सुनइहीं । तुलसी है कृत  
हाव्य चाश्रमाह राम लयन लै आइहीं ॥ ३ ॥ ४८ ॥

अब विश्वागित्र जी का मनोरथ कहत है सुख की सीमा औ आनंद  
की सीमा ऐसी जो अयोध्या जी हैं निज को जाय में देखिहैं ॥ १ ॥  
श्रीरामचंद्र के मुख रूप चन्द्र को जो छवि रूप अमृत है ताको नैन रूप  
चकारन को पिआइ हैं ॥ २ ॥ सादेर इ० सु० दो० । बहुविधि करत  
मनोरथ, जान न लागी वार । करि मज्जन सरजू जल, गण-भूप दरवार ॥  
चौ० । मुनि आगमन मुना जव राजा । मिलन गण्ड लै विप्र समाजा ॥  
करि दंडवत मुनिहि मनमानी । निज आसन बैठारिन्हि आनी ॥ चरन  
पपारि कीन्ह अति पूजा । मांगम आजु धन्य नहि दूजा ॥ विविधि  
भांति भांजन करवावा । मुनिवर हृदय हरप अनिपावा ॥ पुनि चरनन  
मेले नृत चारी । राम देपि मुनि देह विमारी ॥ भये मगन देपत मुप  
सोभा । जनु चकोर पूरन शशि लोभा ॥ इहां यतनी कथा छांड़ि दिण  
प्रसंग मिलाइवे हेतु हम लिखि दिया ॥ ३ ॥ ४८ ॥

राग नट—टैपि मुनि रावरि पट्टे चाजु । भयो प्रथम  
रनती में अब तहां जहां लो साधु समाजु ॥ १ ॥ चरन चंदि  
करजोरि निहारत कहिय कृपा करि काजु । मेरे कछु न च्छेद्य  
राम विनु टैह गेह सध राजु ॥ २ ॥ भली कही भूपति चि-  
मुचन मे को मुहूर्ती सिरताजु । तुलसी राम जनन लै जनि-  
अत सकल मुहूर्त को साजु ॥ ३ ॥ ४९ ॥

देखि ३० पद सुगम ॥ ३ ॥ ४९ ॥

राजन रामलघन जौ दोजै । जस रावरो लाभ टोटनिह  
मुनि सनाथ सब कीजै ॥ १ ॥ डरपत हौ सांचेहु सनेहवस  
सुत प्रभाव विनु जाने । वृभिये वामदेव अरु कुलगुरु तुम  
पुनि परम सयाने ॥ २ ॥ रिपुरन दलि मघ राषि कुसल अति  
अल्प दिननि घर ऐहैं । तुलसिदास रघुवंसतिलक कौ  
कवि कल कौरति गैहैं ॥ ३ ॥ ५० ॥

राजन ३० पद सुगम ॥ ३ ॥ ५० ॥

रहे ठगि से नृपाति सुनि मुनिवर के बैन । कहिन सकत  
कछु राम प्रेमवस पुलकगात भरे नीर नैन ॥ १ ॥ गुरु बसिष्ट समु-  
भाय कछौ तव हिय हरषाने जानि सेषसयन । सौपे सुत गहि  
पानि पांय परि भूसुर उर चले उमगि चयन ॥ २ ॥ तुलसी  
प्रभु जोहत पोहत चित सोहत मोहत कोटि मयन । मधु-  
माधव मूरति दोउ संग मानो दिनमनि गमन कियो उत्तर  
अयन ॥ ३ ॥ ५१ ॥

रहे ठगि सु० ॥ १ ॥ विश्वामित्र जू चैन कहैं आनन्द में उमगि  
चले ॥ २ ॥ गोसाईं जी कहत हैं कि कोटि काम के मोहत जो प्रभु  
सोभत हैं सो देखत मात्र चित्त कों पोहि लेत हैं अर्थात् अपने में लगाइ  
लेत हैं मानो चैत्र वैसाख रूप दोउ मूरति संग लै विश्वामित्ररूप सूर्य  
उत्तर दिसा को गवन कियो भाव चैत्र वैसाख पाय सूर्य अति प्रताप-  
युक्त होत हैं तैसे इन दोऊ भैयन को पाय विश्वामित्र जू भण ॥३॥५१॥

राग सारंग । रिपि संग हरषि चले दोउ भाई । पितु पद  
वंदि सीस लियो आयसु सुनि सिप आसिप पाई ॥ १ ॥ नील  
पीत पायोज बरन धपुवयकिसोर धनि आई । सर धनु पानि  
पीत पट कटितट कसे निर्यग बनाई ॥ २ ॥ कलित कंठ

मनिमाल कलिवर चंदन पौरि सुजाई । सुंदर वदन सरोरुह  
लोचन मुख छवि वरनि न जाई ॥ ३ ॥ पल्लव पंथ सुमन  
मिर मोहत क्यौ कही वेध लोनाई । मनो मूरति धरि उभय  
भाग भई त्रिभुषन सुंदरताई ॥ ४ ॥ पैठत सरनि सिलनि  
घट्टि चितवत पगमृग वन रुचिराई । सादर सभय सप्रेम  
पुलकि मुनि पुनि पुनि लेत बोलाई ॥ ५ ॥ एक तीर तकि  
इती ताडका विद्या विप्र पठाई । राष्यौ जज्ञ जीति रजनीचर  
भइ जग विदित वड़ाई ॥ ६ ॥ चरन कमल रज परसि  
अहल्या निज पति लोक पठाई । तुलसिदाम प्रभु के वूझे  
मुनि मुरमरि कथा सुनाई ॥ ७ ॥ ५२ ॥

पिताकी शिक्षा छानि आश शिर धरि लिए फिर पद कों बंदि आशिप  
पाई कै क्रापि के संग हरपि कै दोऊ भाई चले ॥१॥ श्याम पीत कमल  
के समान सरीर के वर्ण हैं आँ किशोर अवस्था बनि के आई अर्थात् भली  
भांति आई है वान धनुष हाथ में है आँ कटि देश में पीत पट है आँ तामें  
तरकस बनाय कै कसे हैं ॥२॥ कंठ में मणिमाल शोभित है आँ सरीर  
में सुंदर चंदन की खौरि है सुंदर मुख आँ कमल सम लोचन हैं मुख  
की छवि वरनी नहीं जाती है ॥३॥ अपर पद सु० ॥४॥५॥६॥७॥५२॥

राग नट । दोऊ राजसुवन राजत मुनि के संग । नप  
सिप लोने लोने वदन लोने लोयन दाभिनि वारिद्वर  
वरन अंग ॥ १ ॥ सिरसि सिषा सुहाई उपवीत पीत पट  
धनु सर करकुसे कटि निपंग । मानो मय रुज निसिचर  
हरिवी को सुत पावक के साथ पठये पतंग ॥ २ ॥ करत छाह  
घन वरपै सुर मुमन छवि वरणत अतुलित अनंग । तुलसी  
प्रभु विलीकि मग लोग पग मृग प्रेम मगन रंगे रूप रंग  
॥ ३॥५३ ॥

लौने सुंदर लोचन नेत्र दामिनि वरण अंग श्रीलक्ष्मण जी  
 औ मेघवरुण अंग श्री राम जी का है ॥ १ ॥ मानो मुख के  
 रूप निशाचर हरिवे को अग्नि के माथ पुत्र जो अश्वनी कुमार  
 को मूय पदण है उहां पावक विश्वामित्र जू है अश्वनी कुमार रूप  
 भाई है मूय चक्रवर्ती महाराज है ॥ २ ॥ मेघ छांह करत है देवता  
 वर्षत है औ अनेक अनेक सम छवि वरनत है वा छवि वरनत में काम  
 तुलित द्रोत है वा अनुलित जो छवि ताको काम वरनत है ॥ ३ ॥ ५३

राग कल्याण । मुनि के संग विराजत वीर । काकर  
 धर कर कोदंड सर सुभग पीत पट कटि तूनौर ॥ १ ॥ क  
 दंड अंभारुह लोचन स्वाम गौर सोभा सदन सरीर । पुल  
 रिपि अश्लोकि अमित कवि उर न समात प्रेम को मोर  
 प्रेलत चलत करत मग कौतुक बिलमत सरित मरोवर तो  
 तोरत लता सुमन सरसीरुह पिथत मुधासम सीतल नौर  
 दैठत विमल सिलनि विटपनि तर पुनि पेनि वरनत  
 समौर । द्रिपत नटत केकि काल गावत मधुप सराल कोकि  
 कीर ॥ ४ ॥ नयननि को फल लेत निरषि सृग पग सु  
 वज्रवधू अहोर । तुलसो प्रभुहि देत सख आसन निज  
 मन सृदु कामल कुटोर ॥ ५ ॥ ५४ ॥

काक पक्ष जुलुफ कोदंड धनुष तूनौर तरकस ॥ १ ॥ इंडु के  
 अंभोरुह कमल ॥ २ ॥ सरसीरुह कमल ॥ ३ ॥ नाचत जो मो  
 औ सुंदर गावत जो भ्रमर है औ हंस कोकिल सुआ जे है तिन  
 देखत है ॥ ४ ॥ मृग पक्षी गाँ औ पारिकन के रंजवाली जो सी  
 रि सा नयननि को फल लेत है गोसाई जी कहत है कि सब प्रभु  
 पायोजे मन रूप कुटी में कामल कमल को आसन देत है

ने अप... का को कटोर जानि अस भानना करत है । ५ । ५४ ।  
 नर भागन... नहरा—मोहत मग मुनि संग टोउ भाई । त

तमाल चारु चंपक छवि कवि मुभाय कहि जाई ॥ १ ॥ भूपन  
वसन अनुहरति अंगनि उमगति सुंदरताई । वदन मनोज  
सरोज लोचननि रही है लोभाइ लोनाई ॥ २ ॥ अंसनि  
धनु सर करकमलनि कटि कसे हैं निपंग वनाई । सकल  
भुवन सोभा सरवस लघु लागत निरपि निकाई ॥ ३ ॥ महि  
मृदु पथ घनछांछ सुमन सुर वरपि पवन सुपदाई । जल-  
धलरुह फल फूल सलिल सब करत प्रेम पहुनाई ॥ ४ ॥  
सकुच समीत विनीत साथ गुरु बोलनि चलनि सुहाई ।  
पग मृग विचित्र विनोक्त विच विच लसत ललित लरि-  
काई ॥ ५ ॥ विद्या दई जानि विद्यानिधि विद्यह लही  
बडाई । ग्यान दली ताडका देपि रिपि देत असीस अघाई  
॥६॥ वृक्षत प्रभु मुरसरि प्रसंग कहि निज कुल कथा सुनाई ।  
गाधिसुचन सनेह-मुप सम्पति उरयासम न समाई ॥ ७ ॥  
वन वासी बड जतो जोगि जन साधु सिद्धि समुदाई । पुजत  
पेपि प्रीति पुलकत तन नयनलाभ लुटि पाई ॥ ८ ॥ मप  
राप्यौ पलदल दलि भुजबल वाजत विबुध बधाई । नित  
पथचरितसहित तुलसांचित वसत लपन रघुराई ॥९॥५५॥

सुंदर तमाल के वृक्ष सम श्रीरघुनाथ की आँ चंपक सम  
श्रीलक्ष्मण की छवि यह कवि मुभाय ने कहि जात है । कविमुभाव  
कहिये को यह भाव कि प्रायः जो न घटे सो घटावना । कविन का  
मुभाय होत है ॥ १ ॥ अंगनि के अनुरूप भूपन वसन है अर्थात्  
श्रीरामजी को पीत वसन आँ पीत मणि आदि को भूपन है आँ  
श्रीलक्ष्मणजी को नीलवसन आँ नीलमणि आदि को भूपन है आँ सुंदर-  
ताई उमगति है आँ मुखन पर पाम की नैनन पर कमलन की शोभा  
लोभाय रही है ॥ २ ॥ अंसन कहें कांपन पर सरवस कहें सब ॥ ३ ॥





पूरनविधु वदन मदन मन मोहै ॥ ४ ॥ सिरनि सिपंड  
 मुमन दल मंडन वाल सुभाय बनाये । केलि अंक तनु रेनु  
 पंक जनु प्रगटत चरित चुराये ॥ ५ ॥ सप रापवे लागि  
 दमरघ सो मागि आश्रमहि आने । प्रेम प्रजि पाहुने प्रानप्रिय  
 गाधिमुअन सनमाने ॥ ६ ॥ साधन फलसाधक सिद्धनि के  
 लोचनफल भवही के । सकल सुकृतफल मातु पिता के  
 जीवन धन तुलसी के ॥ ७॥५६ ॥

सुंदर मंगल मय नृपालक हैं, मंजुल मंगल कहिवे को यह भाव  
 कि जेहि के नाम लेवे ते अमंगल नगि जात है, मुनि औ मुनि की पत्नी  
 आँ मुनि के बालक कोमल मनोहर जोड़ी देखि कै कहत हैं ॥ १ ॥  
 नाम औ रूप योग्य वेष औ अवस्था से श्रीराम लपन अति लोने हैं  
 मानो मेघ दामिनि काम मरकत मणि औ सोना ने इनही तें छवि लीं  
 है ॥ २ ॥ कमल सम चरण है कटिदेश में पीतपट औ तरकस औ  
 वान धनु धारन किए हैं । सिंघ सम कांध हैं, काम रूप हाथी के श्रेष्ठ सुंठ  
 सम विशाल भुजा औ पराक्रम भारी है ॥३॥ दूषणरहित जे समय सभ  
 भूषण ते सुअंगनि पाय सोभत हैं । दूषणरहित कहिवे को यह भाव कि  
 बहुत मणि दोष सहितो होत हैं । नवीन कमल सम नेत्र हैं पूर्णचंद्र  
 सम मुख है सो मदन को मन मोहत है ॥ ४ ॥ शिर पर मोरपंख औ  
 फूल दल को भूषण बाल सुभाय ते बनाए हैं । खेल कै चिन्ह जो तनु  
 में रेनु औ पंक सो मानहु चोराए चरित को प्रगटत है भाव विश्वामित्र  
 जी को जो आंख बचाय कै खेले कूदे हैं ताको प्रगटत हैं ॥५॥ विश्वा-  
 मित्र जू यज्ञ राखिवे के हेतु चक्रवर्ती महाराज सों मांगि के आश्रम में  
 ले आए प्रान ते भिय जो पाहुन दोऊ भाई तिन्ह को प्रेम ते पूजि कै  
 सन्मानत भए ॥६॥ साधन इ० सु० ॥७॥ ॥ ५६ ॥

राग सूडव । रामपद पटुम पराग परी । रिपितिय  
 त्यागि तुरत पाहनतन छविमय देह धरी ॥ १ ॥ प्रवल्ग पाप  
 पतिसाप दुसह दव दारुन जरनि जरी । कृपा सुधा सीधी

विवुध वेलिं ज्यौ फिरि सुप फरनि फरी ॥ २ ॥ निगम चगम  
मूरति महेश मति युवति वगय वरी । सोइ मूरति भइ जानि  
नयनप्रथ एक टक ते न टरी ॥ ३ ॥ वरनत हृदय सह  
शील गुण प्रेम प्रमोद भरी । तुलसिदास ऐसै केहि आत  
की आरति प्रभु न हरी ॥ ४ ॥ ५७ ॥

पराग धूरि पाहन पाखान ॥ १ ॥ प्रवल पाप से जो पानिशापहा  
दुःसह अग्नि तेहि करि कठिन जर्गन से जो जरी रही सो कृपारूपी अमृत  
से सींची गई फेरि कल्पलता के समान सुखरूप फरनि मे फरी । पां-  
“गच्छतस्तस्य रामस्य पादस्पर्शान्महाशिला । काचिद्योपाऽभवत्सद्योविस्मि-  
मुनिरब्रवीत् ॥ शापदग्धा पुरा भर्त्रा राम शक्रापराधतः । अहल्याख्या शिला  
जज्ञे शतलिंगीकृतः स्वराद् ॥ त्वदंघ्रिस्पर्शनात्तस्यै शापान्तं प्राह गोतपः  
तस्मादियं ते पादाब्जस्पर्शाच्छुद्धाऽभवत्प्रभो’ ॥ २ ॥ जो मूरति वेद को  
अगम अर्थात् वरनन में औ महेश की मतिरूप युवती ने चुनि कै वरी  
वराय वरी कहिये को यह भाव कि विष्णु नृसिंह वामनादि को तनि कै  
वरी सोई मूरति नयन गोचर भई जानि एक टक ते न टरी ॥ ३ ॥ हा  
शील गुण के हृदयमें वरनत मात्र प्रेम औ आनंद से भरत भई । गोसां-  
जी कहत हैं कि प्रभु यहि प्रकार ते केहि आरत की आरति नहीं हरी  
है । भाव सब की हरी है ॥ ४ ॥ ५७ ॥

परत पद पंखान रिधिरवनी । भई है प्रगट अतिदिव्य  
देह धरि मानो त्रिभुवन छविछवनी ॥ १ ॥ देयि बडी आचर  
पुलकि तन कहत सुदित मुनिभवनी । जो चलि है रघुनाथ  
पयाटे सिला न रहि है अदनो ॥ २ ॥ परसि जो पाय पुनीत  
सुरसरी सोहै तौनि पथ गवनी । तुलसिदास तेहि चरन  
रेनु की महिमा कहै मति कवनो ॥ ३ ॥ ५८ ॥

छवनी कन्या ॥ १ ॥ मुनिभवनी मुनिपत्नी ॥ २ ॥ तीनि प  
स्वर्ग मर्त्य पाताल लोक ॥ ३ ॥ ५८ ॥

भूरि भाग भाजन भई । रूपरासि अबल्लोकि वंधु दीउ  
 प्रेम सुरंग रई ॥ १ ॥ कहा कहै केहि भांति सराहै नहि  
 करतूति नई । विनु कारन करुनाकर रघुवर केहि केहि  
 गति न दई ॥ २ ॥ करि बहु विनय रापि उर मूरति मंगल  
 मोद मई । तुलसी ह्वै विसोक पतिलोकहि प्रभुगुन गनत  
 गई ॥ ३ ॥ ५६ ॥

भाजन पात्र, सुरंग रई सुंदर रंग में रंगी ॥ १ ॥ विनु कारन विनु  
 हेतु ॥ २ ॥ करि इ० सु० ॥ ३ ॥ ५९ ॥

राग कान्हरा—कौंसिक के मप के रपवारे । नाम राम  
 अरु लपन नल्लित अति दमरघराज दुलारे ॥ १ ॥ मैचक  
 पीत कमल कोमल बाल काकपछधरवारे । सोभा सकल  
 सकेलि मदन विधि सुकर सरोज संवारे ॥ २ ॥ सइस समूह  
 सुवाहु सरिस पल समर सूर भटभारे । केनि तून धनु बान  
 पानि रन निदरि निसाचर मारे ॥ ३ ॥ रिपितिय तारि  
 स्वयंवर पेपन जनक नगर पगधारे । मग नर नारि निहारत  
 सादर कहि बडभाग उमारे ॥४॥ तुलसी सुनत एक एकनि  
 सो चलात बिलोकनिहारे । मूकनि वचन लाहु मानो अंधनि  
 लहे हैं बिलोचन तारे ॥ ५ ॥ ६० ॥

अब मग के नर नारिन की उक्ति लिखत हैं कौंसिक इ० सु० ॥१॥  
 ए पालक इयाम पीत कोमल कमल सम हैं औ सुंदर जुनक धारन किए  
 हैं मानो सकल सोभा समेटि के काम रूप बिधाना ने अपने कर कपट  
 से मंगारें हैं, इहां लुभोन्नेक्षा हैं । २ ॥ समर में मूर बड़े योदा सुवाहु  
 सरिस खल अनेक सरस निशाचरन को खलबाहु के तरकम औ धनुष  
 पान जो हाथ में हैं तारी सो रण में निरादर करि के मारे ॥३॥ देगन  
 कहे देगन ॥ ४ ॥ मानो मूकनि ने वचन लाभ औ अंधनि ने नेत्रन  
 की पुतरी लहे हैं ॥ ५ ॥ ६० ॥

राग टोड़ी--आए सुनि कौसिकु जनक हरपाने हैं।  
 बोलि गुरु भूसुर समाज सो मिलन चले जानि बडे भाग  
 अनुराग अकुलाने हैं ॥ १ ॥ नाइ सीस पगनि असीस पाइ  
 प्रमुदित पांवडे अरघ देत आदर सो आनि हैं। असन वसन  
 वास कौ सुपास सब विधि पूजि प्रिय पाहुने सुभाय सनमाने  
 हैं ॥ २ ॥ विनय बडाई रिपि राजऊ परस्पर करत पुलकि  
 प्रेम आनद अधाने हैं। देये राम लपन निमिष विघकित भइ  
 प्रानहु ते प्यारे लागे विनु पहिचाने हैं ॥ ३ ॥ ब्रह्मानंद दृढय  
 दरस सुप लीयननि अनुभए उभय सरस राम जाने हैं। तुल-  
 सी विदेह की सनेह की दसा सुमिरि मेरे मनमाने राउ  
 निपट सयाने हैं ॥ ४ ॥ ६१ ॥

कौशिक को आगमन सुनि अपने बड़े भाग जानि अनुराग से  
 विहल भए हैं औ हरपाने हैं जे जनक महाराज सचिव आदि तिन के  
 सहित मिलिबे को चले। शंका। गुरु को कैसे बोलाए ? उत्तर। श्रीजनक  
 महाराज के गुरु जागवलक जी हैं सतानंद जी पुरोहित हैं पुरोहित को  
 भी गुरु कहत हैं ॥ १ ॥ प्रिय पाहुने विश्वामित्र जी ॥ २ ॥ विनय ३०  
 सु० ॥ ३ ॥ ब्रह्मानंद उर से औ रामदरसन सुख नेत्रन तें दूनों अनुभव  
 किए। तब सरस राम हैं यह जाने अर्थात् नेत्रसुख को अधिक माने।  
 गोसांई जी कहत हैं विदेह के स्नेह की दसा सुमिरि कै हमारे मन ने  
 मान लिया कि महाराज अत्यंत चतुर हैं भाव ज्ञान में न भूले। “श्रेयः  
 श्रुति भक्तिमुदस्य ते विभो क्लिश्यन्ति ये केवलबोधलब्धये । तेषामसौके-  
 वलएवशिष्यते नान्यद्यथास्थूलतुपावघातिनाम् ” ॥ ४॥६१ ॥

राग मलार—कौसल राय के कुंअरोटा। राजत रुचिर  
 जनकपुर पैठत स्याम गौर नीके जोटा ॥१॥ चौतनी सिरनि  
 कनककलि काननि कटि पट पीत सोहाए। उर मनिमाल  
 विसाल विलीचन सीय स्वयंवर आए ॥ २ ॥ वरनि न जात

मनहि मन भावत सुभग अर्वाहि वय घोरी । भद्र है मगन विधु  
 घटन विलोकत वनिता चतुर चकोरो ॥ ३ ॥ कहं सिवचाप  
 लरिक्वनि वृभक्त विहंमि चितै तिरछो हैं । तुलसी गलिन  
 भीर दरमन लगि लोग अटनि अवरोहैं ॥ ४ ॥ ६२ ॥

कुअरांदा कई कुअर जोड़ा जोड़ी ॥ १ ॥ चौतनी टोपी कनककली  
 सोना को कलिकाकार कुंडल वा पीत रंग के पुष्प की कली कान  
 पर खोसे हें ॥ २ ॥ घरनि इ० मृ० ॥ ३ ॥ अटनि अवरो है अटारिन  
 पर चढ़े हें ॥ ४ ॥ ६२ ॥

ए अवधिस के सुत दोऊ । चटि मंदिरनि विलोकात  
 सादर जनकनगर मय कोउ ॥ १ ॥ स्याम गौर मुंदर किसोर  
 तन तून वान धनु धारो । कटि पट पीत कंठ मुकुतामनि भुज  
 विसाल बल भारो ॥२॥ सुप मयंक सरसोरुह लोचन तिलक  
 भाल टोठी भीहैं । कल कुंडल चौतनी चारु अति चलत मत्त  
 गज गौहैं ॥३॥ विश्वामित्र हेतु पठए नृप इन्हहि ताडिका  
 मारो । मप राख्यौ रिपु जीति जानि जग मग मुनिबधू  
 उधारी ॥ ४ ॥ प्रिय पाहुने जानि नर नारिन्ह नयनन्हि अयन  
 दये । तुलसिदास प्रभु देपि लोग सब जनक समान भये ॥५॥६३

गजगौहैं गज गति से, अयन गृह, जनक समान भए विदेह भए,  
 अपर पद मुगम ॥ ५ ॥ ६३ ॥

राग टोड़ी—वृभक्त जनकनाथ ठोटा दोउ काके हैं ।  
 तरुन तमाल चारु चंपक वरन तनु कौने बडभागी के  
 सुकृत परिपाके हैं ॥१॥ सुप के निधान पाये छिय के पिधान  
 लाये ठग कैसे लाडूपाये प्रेम मधु छाके हैं । स्वारधरहित पर-  
 मारथी कहावत हैं भे सनेहविवस विदेहता विवाके हैं ॥२॥

शील मुधा के अगार मुपमा के पारावार पावत न पर पार  
 पैरि पैरि धाके हैं । लोचन ललकि लागे मन अति अनुराग  
 एकरस रूप चित्त सकल सभाके हैं ॥ ३ ॥ जिय जिय जोरत  
 सगाई राम लपन सो आपने आपने भाय जैसे भाय जाके हैं ।  
 प्रीति को प्रतीति को सुमिरवे को सिद्धवे को सरन को समर  
 तुलसीझ ताके हैं ॥ ४ ॥ ६४ ॥

जनक महाराज वृक्षत हैं कि हे नाथ ए दोउ बालक केहि के हैं । ए  
 जे नूतन तमाल औ सुंदर चंपा के वरन सम शरीर ते कौने बड़े भारी  
 के सुकृत के फल हैं ॥ १ ॥ अब कवि की उक्ति है सुख के रासि पाए  
 हृदय को पिधान कहैं ढपना लगावत भए भाव जब कोऊ धन पावत है  
 तब गुप्त और में तोपि कै धरत है, इहां गुप्त और हृदय है, ताको पिधान  
 देहाध्यास भूलना है, उग के लडुआ अस खात भए अर्थात् बिल हारिके  
 लडुआ उग खवावत हैं, तब खवइआ अचेत है जात है तस भए औ भ्रम  
 रूपी मदिरा में छकि गए हैं । कहावत तो रहे स्वारथरहित परमार्थी पर  
 सनेह के विशेष बस भए तें विदेहता रहित है गए हैं । भाव सनेहविवस भर  
 तातें स्वारथसहित औ विदेहता विवा के ताते परमार्थ रहित । इहां गोसाईं  
 जी यह जनाए कि परमार्थी के फल रूप राम है ॥ २ ॥ सकल सभा के  
 एकरस रूप में चित्त हैं ताते लोचन ललकि के लागे औ मन अति अनु-  
 रागे ते लोचन मन शील रूप अमृत के गृह परम शोभा के समुद्र को  
 पैरि पैरि धाके हैं पर पार नहीं पावत हैं । शील मुधा के अगार कहिये  
 को यह भाव कि समुद्र मुधा को भवन है । औ यह परम शोभा रूप  
 समुद्र शील रूप अमृत को भवन हैं । धाके हैं कहिये को यह भाव कि  
 अघाते नहीं हैं पारावार समुद्र का नाम है । “समुद्रो धिरकूपारः पारावारः  
 सरित्पतिः” जाके जेमे जैसे भाव है तेहि भाव के अनुकूल अपने अपने  
 निय में राम लपन सो नाना जोरत है । प्रीति कहिये को विश्वास करिये  
 गुमिरिये को संवन करिये को औ सरन जाइये को योग्य जो ताको  
 सिद्धु ने ताके हैं ॥ ४ ॥ ६४ ॥

राग मन्नार—ए कौन कहाँ ते आए । नील पीत पायो ज  
 वरन मनहरन सुभाय सुहाये ॥ १ ॥ मुनिसुत किधौ भूप-  
 वालक किधौ ब्रह्म जीव जग जाए । रूप जलधि के रतन  
 सुछवि तिय लोचन ललित ललाये ॥ २ ॥ किधौ रविसुअन  
 मदन रितुपति किधौ हरिहर वेप बनाए । किधौ आपने  
 सुकृत सुरतरु के सुफल रावरेहि पाये ॥ ३ ॥ भए विदेह  
 विदेह नेहवस देहदसा विसराए । पुलकगात न समात  
 हरप हिय सलिल मुलोचन छाए ॥ ४ ॥ जनकवचन मृदु  
 मंजु मधुर भरे भगति कौसिकहि भाये । तुलसी अति आनंद  
 उमगि उर राम लपन गुन गाये ॥ ५ ॥ ६५ ॥

श्यामपीत कमल सम वरन औ मन के हरनिहारे स्वाभाविक सुंदर  
 जे ए ते कौन हैं औ कहाँ ते आए हैं ॥ १ ॥ कैधौ मुनिसुत हैं कैधौ  
 राजा के बालक हैं । इहां मुनि के संग ते मुनिपुत्र का संदेह औ राज-  
 कुमार सम देखि राजपुत्र का संदेह वा विश्वामित्र जी के कोई पहिले  
 के संबंधी तो नहीं हैं याते क्षत्री का संदेह कदापि अब के सम्वन्धी  
 होहि याते ब्राह्मण का संदेह है कैधौ जीव औ जगत को जो उत्पन्न  
 किए जे सोई ब्रह्म हैं । मानसरामायन में स्पष्ट करि लिखा । ब्रह्म जो  
 निगम नेति कहि गावा । उभय वेप धरि की सोइ आवा ॥ इहां अत्यंत  
 शांत औ चमत्कार देखि ब्रह्म कहे । कोऊ अस अर्थ करत हैं कैधौ ब्रह्म  
 जीव ही तो नहीं जगत में जन्मे हैं कैधौ रूप रूपी समुद्र के मणि हैं  
 कैधौ ए लला सुंदर छवि रूप तिय के सुंदर लोचन हैं ॥ २ ॥ कैधौ  
 रविसुअन कहें हंस हैं, काऊ अस कहत कैधौ रविसुअन कहें अश्वनी-  
 कुमार सो तो नहीं हैं, कैधौ काम वसंत हैं रूप जलधि के रतन इहां से  
 औ मदन रितुपति किधौ इहां लो अत्यंत रूप देखि संदेह है । कैधौ  
 वेप बनाए भए हरि हर तो नहीं हैं । इहां अति तेजस्वी देखि हरि हर  
 का संदेह है, कैधौ अपने सुकृत रूप कल्पवृक्ष के सुंदर फल आप ही ने



पाए हैं अर्थात् दोऊ भाइन के इहां विश्वामित्र जी को सर्वोत्कृष्ट तपस्वी जानि तप के फल रूप में संदेह है ॥ ३ ॥ जेहवस देहदसा को विसराए ताते विदेह महाराज विदेह भए । इहां भए विदेह विदेह कहिये को यह भाव कि अवताई नाम मात्र रहा है सांचे विदेह आज भए हैं वा अव ताई जगत में विदेह रहे अव ब्रह्मानन्द हुंते विदेह भए । इसी स्वरूपानन्द की वड़ाई जानना, पुलकावली अंग में है, हृदय में हरप नहीं समात है औ नेत्रन ने आंसू छाए भाव जब हर्ष हृदय में न समायो तब नैन के राह बाहर भयो ॥ ४ ॥ जनक जी के सुंदर कोमल औ मीठे औ भगति भरे वचन कौशिक को भाए । गोसाईं जी कहत हैं अति आनंद जो सो हृदय ते उमगि के श्री राम लपन के गुन गावत भए अर्थात् जनक महाराज से सब कहि देत भए ॥ ५ ॥ ६५ ॥

कौसिक कृपालु हू को पुलकित तनु भो । उमगत अनुराग सभा के सराहे भाग देपि दसा जनक की कहिये को मनु भो ॥ १ ॥ प्रीति के न पातकी दिए हू साम पाप वडो मप मिसि मेरो तव अवध गवनु भो । प्रानहू ते प्यारे सुत मागे दिये दसरथ सत्यसंध सोच सहै सूनो सो भवनु भो ॥ २ ॥ काकसिपा सिरकर केलितूनु धनुसर बालक विनोद जातुधाननि सो रनु भो । वृकृत विदेह अनुराग पाचरज वस रिपिराज जाग भयो महाराज अनुभो ॥ ३ ॥ भूमि देव नरदेय सचिव परम्पर कहत हम को सुरतक शिवधनु भो । मुनत राजाकी रीति उपजी प्रतीति प्रीति भाग तुलसी के भनि साहेब को अनु भो ॥ ४ ॥ ६६ ॥

कृपालु जो विश्वामित्र निन हू को तन रोमांच युक्त भयो अनुराग सभा के भाग सराहे औ जनक जी की दसा देखि के मनु भो ॥ १ ॥ अथ वृत्तान्त करत हैं पातकी नेत्रन के नहीं है औ माप दिए हू में वडो पाप है तब मरत के

दधाने मे मेगे अत्रय मे गमन भयो । भवन मृनां सो भयो शोच सहे पर  
 मत्यमनिद्र जे दशरथ महाराज ने मान हू ते प्यारे मुन मांगिवे ते दिए ॥२  
 शिर विग्वे जुन्हा मात्र है अर्धान् कूँदी आदि नहीं तरकम आ हाथ में  
 जे धनु धान ते ग्वलवाह के है । भाव युद्ध के नहीं आ वालविनोद से  
 अर्धान् रोष मे नहीं आ युद्ध निशाचरन के नायकन में भयो, भाव  
 माधाग्न मे नहीं । “जानूनिरक्षांमि दधानिपुष्पातीनि जातुधानः ।  
 राक्षम नायक इत्यर्थः ॥ अनुराग आ आश्रय के यम है विदेह महाराज  
 वृषन है कि हे ऋषिराज यग्य भयो तव विश्वामित्र जू बोले कि हे  
 महाराज अनुभो अर्धान् सम्यक् भयो वा महाराज अनुभो हे महाराज  
 आप ही अनुभव करिए जाँ यग्य न पूर्ण होता तो हम आनंदपूर्वक  
 इहां फंस आयेते ॥ ३ ॥ मुनत मात्र रघुनाथ में राजा की रीति उपजी  
 भय निश्चय भयो कि राजकुमार हैं ताने उपजी आ प्रीति प्रतीति उपजी  
 भाव ऐसे राक्षसन के मार हैं तो क्यों न धनु तारंगे आ ब्राह्मण राजा  
 मंत्री परस्पर कहते हैं कि हम को शिवधनु कल्पवृक्ष भयो भाव यही  
 शिवधनु के प्रसाद से यह दर्शन पाए । राजा की रीति कहे व्यवहार  
 मुनत मात्र प्रतीति आ प्रीति उपजी कि भाग तुलसी के हैं कि भले  
 माहेय को गुलाम भयो । भाव जेहि साहब के पाए ते ब्रह्मज्ञ जे जनक  
 महाराज तेऊ अपने को कृतार्थ माने ॥ ५ ॥ ६६ ॥

चाग्यो भले बिटा देव दशरथ गाय के । जैसे राम लपन  
 भरत रिपुहन तैसे सौख सोभा सागर प्रभाकर प्रभाय के ॥१॥  
 ताडका संघारि मप रापे नौके पाने व्रत कोटि कोटि भट  
 किए एक घाय के । एक वान बिगही उडाने जातुधान जात  
 सूषि गए गात है पतउच्चा भये वाय के ॥ २ ॥ सिला छोर  
 कुवत अहल्या भई दिव्य देह गुन पेपे पारस के पंकरुह पाय  
 के । राम के प्रसाद गुन गौतम घसमु भये रावरेहु सतानंद  
 पूत भये माय के ॥ ३ ॥ प्रेम परिहाम पोपे वचन परस्पर  
 कहत सुनत सुप सवही सुभाय के । तुलसी सराहे भाग

कौंसिक जनक जू के विधि के सुठर होत सुठर सुदाय के । ४१६७

हे देव हे महाराज राजा दशरथ के चारो बेटा भले हैं जैसे राम लपन तैसे भरत शत्रुहन शील शोभा के समुद्र औ प्रताप के सूर्य हैं । इहां चारो भाइन को वर्णन करि यह जनाये कि आप को अन्यत्र वर न इंदनो परैगो ॥ १ ॥ ताड़कादि वध फेर कहत हैं ताड़क मारि कै यज्ञ राखे औ प्रतिज्ञा भले पाले कोटि कोटि भट एक एक चोट के किए तिन में एक चोट के जातुधानै वान के वेग से उड़ाने जात हैं ताते तिन के गात्र सूखि गए बवंडर के पत्ता सम भाव फिर भूतल में न आए ॥ २ ॥ शिला के कोर लुअत अहल्या दिव्य देह भई चरण कमल के पारस के गुण देखे भाव जैसे पारस के लुए लोहा सोना होत तैसे जड ते दिव्य भई श्रीराम के प्रसाद ते रावरे गुरु जो गौतम जी ते खसम भए । भाव रडुआपन छूटा औ सतानंद अपने माता के पूत भए । भाव वे महतारी के दुअर कहावत रहे सो लुटा ॥ ३ ॥ प्रेम औ परिहास तें पुष्ट भए जे सुंदर भाव के वचन परस्पर कहत हैं ते सुनत मात्र सब ही को सुख भयो । गोसाईं जी कहत हैं कि कौंसिक जनक जी को भाग सराहे औ कहे विधि अनुकूल से सुंदर दांव के पासा सुदार होत है इहां सुंदर पासा परना रघुनाथ का आगमन है ॥ ४॥६७ ॥

ए दोऊ दसरथ के वारे । नाम राम घनस्याम लपन लपु नप सिप अंग उज्यारे ॥ १ ॥ निज हित लागि मांगि आनि मै धरम सेतु रपवारे । धीर वीर विरुदैत वांकुरे महा बाहु वल भारे ॥ २ ॥ एक तीर तकि हती ताडका किय सर साधु सुपारे । जज्ञ रापि जग सापि तोपि रिपि निदरि निसाधर मारे ॥ ३ ॥ मुनितिय तारि स्रथंवर पेपन आए मुनि वचन तिहारे । राउ देपि है पिनाक नेक जिहि नृपति लाज जर जारे ॥ ४ ॥ मुनि सानंद सराहि सपरिजन वारहि वार निहारे । पूजि सप्रेम प्रसंसि कौंसिकहिं भूपति सदन

संधारे ॥ ५ ॥ सोचत सत्य सन्नेह विवस निसि नृपहि गनत  
 एतारे । पठये वोलि भोर गुर के संग रंगभूमि पगुधारे ॥६॥  
 अगर लोग सुधिपाद मुद्रित सबही सब काज विसारे । मनहुं  
 मघा जल उमगि उदधि रूप चले नदी नद नारे ॥ ७ ॥ ए  
 केसोर धनु घोर बहुत विलपाति विलोकनिहारे । टग्यौ न  
 वांप तिन्ह ते जिन्ह सुभटनि कौतुक कुधर उपारे ॥ ८ ॥ ए  
 जाने विनु जनक जानियत करिपन भूप हंकारे । नतरु मुधा-  
 सागर परिहरि कत कूप पनावत पारे ॥ ९ ॥ सुपमा सौल  
 सन्नेह सानि मानो रूप विरंचि मँवारे । रोम रोम पर सोम  
 काम सत कोटि वारि फेरि डारे ॥ १० ॥ कोउ कहै तेज  
 प्रताप पुंज चित ये नहि जात भियारे । कुञ्जत सरासन सलभ  
 जरे गो ये दिनकर वंस दियारे ॥ ११ ॥ एक कहै ककु होउ  
 सुफल भए जीवन जनम हमारे । अवलोकै भरि नयन आजु  
 तुलसौ के प्रानहुते प्यारे ॥ १२ ॥ ६८ ॥

उज्यारे फेहे सुंदर ॥ १ ॥ धर्मसेतु के रक्षक धीर वीर विरदवाले  
 बांके आजानु बांहु और भारी बल वाले जे श्री राम लपन तिन को  
 निज हित लागि में मांगि आने ॥ २ ॥ ३ ॥ धनु तोरै सो परै जानकी  
 यह बचन मुनि नृपति लाज जरिजारे लाज रूप ज्वर ते राजनि को  
 जिन्ह ने जारे हैं ॥ ४ ॥ सपरिजन परिवार सहित जनक जी ॥ ५ ॥  
 मत्य औ मनेह के विवस ते सोचत हैं । भाव न मत्य छोड़न बनत न  
 रामसेनेह । राजा को तारा गनेन रात्रि गई । भाव फय बिधान होयगो ॥६॥  
 मानो मघा नक्षत्र के जल ते नदी नारे उमगि के ममुद्र के ओर चले  
 इहां सुधि पावना मघा को जल है, उदधि थी राम को मरूप है, नदी  
 नद नारे पुरवामी हैं ॥ ७ ॥ कौतुक में कुपर बहे पर्वत को जिन्ह  
 उखारे भर्षान् रावणादि ॥ ८ ॥ हपारै पोलाए इहां मुधामागर ग्युनाय  
 हैं औ खारा कूप प्रतिज्ञा है ॥ ९ ॥ परम शोभा शील औ खेद मानि

फै मानो इन के रूप ब्रह्मा ने मंत्रों फिरि रोम रोम पर मन  
चंद्रमा औ काम नेवछानरि करि दारि ॥ १० ॥ फोऊ कहत है  
भैया तेज औ मगप के पुंज हैं ताते नितए नहीं जान है । ए  
वंस दीपक के लुभन मात्र सरासन रूप फनिगा नरंगो ॥११॥  
जी कहत हैं आजु नयन भरि मान हुंते प्यार के अवलोके ॥१२॥

जनक विलोकि वार वार रघुवर को । मुनिपद  
नाथ आयसु अमीम पाइ उई वाते कहत गवन कियो  
को ॥ १ ॥ नोद न परत रात्रि प्रेम पन एक भांति  
सकोचत हिरंचि हरिहर को । तुम्ह ते मुगम सब देव  
को अब जसु हंस किये जोगवत जुग पर को ॥ २ ॥  
संग कौसिक मुनाये कहि गुनगन आए देपि दिनकर  
दिनकर को । तुलसी तऊ सनेह को मुभाउ वाउ  
चल दल को सो पात करै चित चर को ॥ ३॥६६ ॥

एई वाते कहत अर्थात् श्रीराम लक्ष्मण विषयक वाते कहत ।  
राति में नींद नहीं परत जाते प्रेम औ प्रतिज्ञा एक भांति है । भाव  
योग दूनो नहीं ताते सोचत हैं औ ब्रह्मा विष्णु शिव को सकोच  
हे देव ! तुम ते सब मुगम छुनत आए सो अब देखिवे को है अ  
की वक्ति है कि श्री जनक महाराज अपने यस को हंस किए ताते  
पर के योगवत हैं इहां दोऊ पर प्रेम औ पन है ॥ २ ॥  
ऐसे महात्मा अर्थात् अनहोनी करनिहारे ते संग लेआए औ  
के गुनगन मारीचादि वध औ अहल्या को पापान ते चैतन्य  
कहि मुनाए औ आपो दिनकर कुल दिन कर को देखि आए ।  
जाके देख ब्रह्मानंदो भूलि गयो सो गोसाईं जी कहत हैं ताहू पर  
को सुभाव मानो वायु है सो पीपर के पात के समान चि  
चल करत है ॥ ३॥६९ ॥

राग केदारा । रंगभूमि भोरे हो जाइकै । राम

लोगलुटि है लीचन लाभ अघादके ॥ १ ॥ भू

र घर पुर बाहर इहै चरचा रही छाड़कै । मगन मनोरथ  
 ०६ नारि नर प्रेम विवम उठै गाड़कै ॥ २ ॥ सोचत विधि  
 ति समुक्ति परस्पर कहत वचन विलपाड़कै । कुअर  
 कशोर कठोर सगासन असमंजस भयो आड़कै ॥ ३ ॥  
 मुकत संभारि मनाइ पितर मुर सोस ईस पद नाइ कै ।  
 घुवर कर धनुभंग चहत सब अपनी सो हितु चितु लाइकै ।  
 ॥ ४ ॥ लित फिरत कनसुई सगुन सुभ वृक्षत गनक बुलाइ-  
 कै । मुनि अनुकूल मुदित मन मानहु धरत धीरजहि धाइकै  
 ॥ ५ ॥ कौसिक कथा एक एकनि सो कहत प्रभाउ जनाइ  
 कै । सौय राम संयोग जानियत रच्यौ विरंचि बनाइकै ॥६॥  
 एक सगाहि सुवाहु मथन वर बाहु उछाह वटाइकै ।  
 सानुज राज समाज विराजिहै राम पिनाकु चटाइकै ॥७॥  
 बडी सभा बडो लाहु बडो जसु बडो बडाई पाइकै । को  
 सोहिहै और को लायक रघुनायकनि बिहाइकै ॥ ८ ॥  
 गवनिहै गंवहि गवाइ गरव गृह नृपकुल बलहि लजाइ-  
 कै । भली भांति साहेव तुलसी के चलिहै व्याहि बजाइकै  
 ॥ ९॥७० ॥

रंग इ० सु० ॥१॥ मनोरथ जनित आनंद में नारि नर मगन हैं ।  
 प्रेम के विशेष बस हैं ताते गाय उठे ॥ २ ॥ सोचत इ० सु० ॥ ३ ॥  
 अपनी सो हितु चितु लायक अपने हित समान चित्त लगायक ॥४॥  
 कनसुई कानाफुसुकी अर्थात् सलाह की बातें सुनत फिरत औ  
 ज्योतिषी बोलायक सुभ सगुन वृक्षत अनुकूल सगुन मुनि मुदित होत  
 हैं मानो सगुन नहीं सुनत हैं धीरज को धाइकें धरत हैं ॥५॥ प्रभाव  
 जनायकें कौशिक की कथा एक एकनि सो कहत । भाव जो नहीं  
 होनिहार ताके करनिहारे विश्वामित्र जी हैं ताते सीताराम जू को संयोग

विरंगि ने बनाय के रत्नों मर जानियन है ॥ ६ ॥ एक उजाह रूप  
के सुपाह के मर्निहार जो रत्नाय की भेष्ट याह है नासो सगीरे  
कहन है कि पिनाक नक्षत्र के भनुन गहिन श्रीगमराज ममान मे दों  
है ॥ ७ ॥ वर्दी १० सु० ॥ ८ ॥ नृपन के कुल करे ममूर मनाये है  
गय बल को गंगाय गवाहे मे भर्मान् यदाने मे शूर को मर्नि  
॥ ९॥७० ॥

राग टोड़ी—भार फूल योनय को गए फुलवाइ है।  
सौमनि टैपार उपयात पोरा पट काटि दोना वाम करि  
सलोने मे सवाई है ॥ १ ॥ रूप के अगार भूप के कुमार सुक  
मार सुक के प्रान अधार अंग सियकाई है। नीच ज्यो टहर  
करे रूप राधे अनुमरे कौमिक से कोहो यस किये टुहु भाई  
है ॥२॥ सपिन सहित लेहि भीसर विधि संजोग गिरिजा क  
पूजिवे को जानको जू चाई है। निरधे लपन राम जाने रि  
पति काम मोहि मानो मदन मोहनो मूडनाई है ॥ ३ ॥  
राघो जू शो जानको लोचन मिलिवे को मोद कहिवे को  
जोग न में वाते सी बनाइ है। स्वामी सोय सपिन्ह लपन  
तुलसीको तैसो तैसो मनभयो जाको जैसीसे सगाई है ॥४॥१॥

भोरहीं फूल घीनिवे को फुलवारी में गये हैं शिरन पर दोपी  
औ पीत यज्ञोपवीत है और पीत पट काटि में है इहां देहली दिपक न्या  
करि के पीत को दूनो के संग करना औ वाम हाथन में दोना है अ  
सवाई सलोने भए हैं। सवाई होवे को यह भावकि अंग आवरण रवि  
हैं वा कदापि कोऊ आए अपने रूप से दवाय न लेय ताते सवाई भ  
वा कुछ मदन महीप का भी रंग आय पड़ा है ताते वा विदेह महारा  
की वाटिका की छवीलीं फूली कलीन ते वाम अंग भूपित है ता  
सवाई सलोने भए हैं सो जब कलिन ते एतना भए तब आगे न  
जानते कि केतना हांदिंगे वा दोना लेने से एक मुद्रा विचित्र करे

ताने मनाई कहे एक तो रूप के गृह हैं भाव रूप मात्र के आधारभूत हैं ताहू पर भूप के कुमार हैं अर्थात् काहू साधारण के नहिं ताहू पर मुकुमार हैं औ गुरु के प्राण आधार हैं तथापि संग में सेवकाई करत हैं क्रम करन सो लिखन हैं नीच जैमे टहल कर तस करत औ रूप राखे काम करत हैं । कौमिक ऐमे क्रोधी को दोऊ भाइ बस किए हैं ॥२॥ श्रीलखनलाल श्रीराम जू को निरखे जाने कि यह राजकुमार नहीं हैं वसंत औ काम हैं ताते मोटि गई मानो देखि न मोटी काम ने मूढ पर मोहनी नाई हे ताते मोटी ॥३॥ श्रीराघव जू औ श्रीजानकी जू के नजरि मिलवे को जो आनंद सो कहिवे योग्य नहीं है । हम ने वनाई बातें ऐसी कही हैं रघुनाथ जी को औ जानकी जू को सखिन को औ लखनलाल जू को औ तुलसी कां जाकी जैसी सगाई है ताको तसो मन होत भयो इहां आनंद में भूलि गोसाईं जू अपने को प्रत्यक्ष सम कहे ॥ १॥७१ ॥

पूजि पारवतो भजे भाय पाय परि कै । सजल सुलोचन सिधिल तन पुलकित आवे न वचन मन रक्षौ प्रेम भरि कै ॥ १ ॥ अंतरजामिनि भवभामिनि स्वामिनि सोही कही चही वात मातु अंत तौ हो जरि वै । मूरति कृपाल मंजु माल दे वोलत भई पूजो मनकामना भावतो वरु वरि कै ॥२॥ राम कामतरु पाइ वलि ज्यों वोडी वनाइ माग कोपि पोषि फूलि फूलि फरि कै । रहोगी कहोगो तव सांची कही अंवा सिय गहे पांय है उठाय माथे हाथ धरि कै ॥ ३ ॥ मुदित असीस सुनि सोम न ड पुनि पुनि विदा भई देवी सो जननि डर डरि कै । हरपी सहेलौ भयो भावतो गावतो गोत गौनी भवन तुलसी के प्रभु को हियो हरि कै ॥४॥७२॥

पूजि इ० सु० ॥ १ ॥ अंत तो हों लरिके कहिवे को यह भाव कि अंतर्जामिनी सो कुछ न कहा चाहिए क्योंकि सब जानत ही हैं पर



कहिबे को जो चाहत हौं सो लरिका हौं सो कृपाला जो मूरति  
 सुंदर माला दे करिकै बोलति भई कि मन भावतो वर वरि के तुम  
 मनकामना पूजि जाउ श्रीरघुनाथरूप कल्पवृक्ष पाइके फेंली । बनी  
 समान बनाय करि कै माग कोपि ते तुष्ट पुष्ट है फँलि फूलि फि  
 जब रहोगी तब कहोगी कि अंबा ने सांची कही यह सुन जानी  
 चरन गहे तब है कहै भाव यह क्या करती हौं औ मागे हाथ धरि  
 उठाय लिण् ॥ ३॥४॥७२ ॥

रंगभूमि आये दसरथ के किसोर हैं । पेपग सो देव  
 चले हैं पुर नर नारि वारे दूटे अंध पंगु करत निरो  
 हैं ॥ १ ॥ नील पीत नीरज कनक सरकता धन दामि  
 वरन तन रूप के निघोर हैं । सहज मनोने राम भद्र  
 ललिता नाम वेंसे सुने तेसई कुशर सिरमोर हैं ॥ २ ॥ शर  
 सरोज चारु अंधा जानु उरु काटि कंधर विसाल बाहु रा  
 परजोर हैं । नीके के निपंग कसे कर कमलनि लमे व  
 विमिषामन मनोहर कठोर हैं ॥ ३ ॥ काननि कानक  
 उपयोत अनुकूल विषरे टुकूल धिलमत पाछे छोर हैं । र  
 जिय नयन विधु यदन टिपारे सिर नय मिय अंगनि ठोर  
 ठोर ठोर हैं ॥ ४ ॥ मभा सरवर लोक कोकनट काठ  
 प्रमुदित मग देपि दिनमनि भोर हैं । अनुभ पदे  
 शैले गडिपाल भये कटुक कटुक कटुक मुमुद अक्षोर हैं ॥ ५ ॥  
 भाई सो कहत बात कौमिकादि मनुभात सोल मनयो  
 सोलत दार सोर हैं । मजमुष शयदि विभोक्त मयदि न  
 लपा सो शैल जैम मुलगा को पार हैं ॥ ६ ॥ ८३ ॥

दूर दे नर नारि नयना गद देवन भरे है भी पारे वृद्ध अंध  
 दिनेश चरन दे वर दय मर रो मी है पयो । दीकत । मर है

ने निरोग प्रसन्न है । उच्चर गुणल राजकिंगोर शिगमौर की वान  
 रनिवेष्टे ॥१॥ इयास कमल भी मरकत मणि भी मेष के वर्ण सम तन  
 श्रीगम जू सो है औ पीत कमल भी कनक भी दामिनी के वर्ण सम  
 तन श्रीलक्ष्मण जू को है औ रूप को निचोर है अर्थात् उत्तमांग है  
 औ महज ही टोऊ भाई मल्लोने हैं अर्थात् बनावट ने नहीं औ नामों  
 सुंदर है जेमे मुने रंग नेमटे टोऊ भैया कृभंगन के शिगमौर हैं ॥२॥  
 सुंदर चरण कमल भी जंघा भी टेहुन भी उरु भी काटि औ उन्नत  
 स्तंभ है औ वाहु रंगे जोगावर हैं । शंका । वाहन की जोरावरी कैसे  
 जाने । उच्चर । सुवाहु आदि को यथ मुनिवे ने । जंघा उरु में पुनरुक्ति  
 शंका नहीं करना क्योंकि जंघा नाम टेहुन के नीचे के भाग का है औ  
 टेहुन के ऊपर के भाग के उरु नाम है, जाको आज कालि लोग जंघा  
 कहत हैं । पर गोमाई जी शास्त्र रीति ने लिखे । जंघातु प्रसूताजानूरुप-  
 वाष्टीवदाश्रियाम् । मरुथितीयेपुमानुग्मन्मंभिः पुंभि वङ्गणः । इत्यमरः  
 जंघाप्रसूता द्वेजंघायाः ज्ञान्तु उरुपर्य भष्टीवर्त्नीणि जानुनः मरुथि उरुद्वेऊरोः ॥  
 भली भांति तरकस कैसे हैं औ फरकमलानि में वान धनुष हैं ते देखिवे  
 में तो मनोहर पर कठोर हैं ॥ ३ ॥ कानन में पुष्पाकार सोने के कुंडल  
 हैं औ अनुकूल यज्ञोपवीत है अर्थात् जिस शबी को चाहिए औ पीत रंग  
 को वस्त्र है नामें आछे किनारे शोभत हैं अर्थात् मोती मणि आदि करि  
 के, कमल सम नयन औ रंद सम मुख हैं, टोपी सिरन में है, नख ते  
 शिखा पर्यंत अंगन में ठार ठार ठगोरी अर्थात् जहां जाइ मन तहई  
 लोभाई ॥ ४ ॥ सभा जो सोई श्रेष्ठ तड़ाग औ लोग सब जो हैं सोई  
 कमल औ चक्रवाक के समूह हैं, ते भोर के दिनमणि रघुनाथ के  
 देखि प्रसुदित भए, मूढ़ मन मँले आशावाले जे महिपाल हैं ते कछु उल्लू  
 अर्थात् घुघुआ कछु कुमुद कोई कछुक चकोर भए । कोऊ अस कहत हैं  
 महिपाल जे मूढ़ ते उल्लूक औ जे नहीं सहनेवाले ते कुमुद औ जे मन  
 मँले ते चकोर भए ॥ ५ ॥ यद्यपि धोल घन सम गंभीर हैं पर विश्वा-  
 मित्र ते सकुचात हैं ताते भाई ते धीरे धीरे वात कहत हैं सन्मुख सब के  
 हैं औ सब के भली भांति देखत हैं औ कृपा से हंसि के तुलसी के  
 ओर हेरत हैं ॥ ६ ॥ ७३ ॥

एई राम लपन जी मुनिसंग आए हैं । चौतनी चोलना  
 काछे सपि सोहैं आगे पाछे आछेहु तें आछे आछे आछे भाव  
 भाये हैं ॥ १ ॥ सांवरे गोरे सरौर महा बाहु महाबीर कटि तन  
 तीर धरे धनुष सुहाए हैं । देषत कोमल कल अतुल विपु  
 वल कौसिक कोदंड कला कलित सिपाये हैं ॥ २ ॥ इन्हो  
 ताडिका मारी गौतम की तीय तारी भारी भारी भूरि भट  
 रन विचलाये हैं । रिपि मघ रघवारे दसरथ के दुलारे रग  
 भूमि पगुधारे जनकु दुलाये हैं ॥ ३ ॥ इन्ह के विमल गुन  
 गनत पुलकित तन सतानंद कौसिक नरेसहिं सुनाये हैं ।  
 प्रभु पद मन दिये सो समाज चित किए हुलसि हुलसि  
 हिये तुलसिहु गाये हैं ॥ ४ ॥ ७४ ॥

जे राम लपन मुनि संग आए हैं ते एई हैं, हे सखी टोपी  
 कुरुता पहिरे हैं औ आगे पाछे शोभत हैं अर्थात् आगे राम जी प  
 लक्ष्मण जी । सुंदर हूं ते सुंदर सुंदर हैं औ भला भाव जो कांई प  
 है ताहू को भाए हैं वा भले यह भैया हैं ताते हम सब के भाए हैं  
 सुंदर हू ते जो सुंदर ताहू ते सुंदर सुंदर भैया हैं ताते भाए हैं वा भ  
 भाव है जेहि को अर्थात् विश्वामित्र जी तिन के भाए भए हैं ॥ १ ॥  
 देखत में सुंदर कोमल हैं पर बड़े बलवान नहीं तुलत हैं वा बहूत ब  
 है अतएव अतुल है औ विश्वामित्र जी ने सुंदर धनुर्विद्या की कला इ  
 को सिखाए हैं ॥ २ ॥ जनक जू के बोलाए ते रंगभूमि में पग प  
 हैं इन के विमल गुन गन को पुलकित तन ते सतानंद औ विश्वामि  
 नू नरेग को सुनाए हैं ॥ ४ ॥ ७४ ॥

रागकान्हरा—सोय म्रयंवरु माई दोउ भाई आए देषन  
 ॥ १ ॥ चली प्रमदा प्रमुदित मन प्रेम पुलकित तन मनहु मर  
 मंजुन पेपन ॥ १ ॥ निरपि मनोहरताई मघ पाइ कहे प  
 एक सो भूरि भाग हम धन्य आनिए दिन एपन । तुमने

सहज सनेह सुरंग सब सो समाज चित्त चित्रसार लागी  
लेपन ॥ २ ॥ ७५ ॥

प्रमदा स्त्री पेखन कई देखन ॥ १ ॥ भूरि बहुत, खन कई क्षण,  
गोसाईं जी कहत हैं सो सब समाज नारिन को अपने सहज सनेह रूपी  
सुंदर रंग से अपने चित्त रूपी चित्रसार में लिखने लगीं ॥ २ ॥ ७५ ॥

राग गौरी — राम लपन जब दृष्टि परेरी । अबलोकत  
सब लोक जनकपुर मनो विधि विविध विदेह करेरी ॥ १ ॥  
धनुष जग्य कमनीय अबनि तलकौतुक ही भए आय परेरी ।  
छवि सुरसभा मनहु मनसिज के कलित कल्पतरु रूप  
फरेरी ॥ २ ॥ सकल काम वरपत मुप निरपत करपत चित  
हित हरप भरेरी । तुलसी सबै सराहत भूपहिं भले पैत  
पामे सुठर ठरेरी ॥ ३ ॥ ७६ ॥

री सखी जब ते राम लपन दृष्टि परे तब ते जनकपुर के लोग  
देखत हैं अर्थात् एकटक देखत हैं । मानो विधाता ने अनेकन विदेह  
किए हैं । भाव विदेह महाराज के डाह ते, इहां विदेह कहिये ते सब को  
देहाध्यास रहित जनाए ॥ १ ॥ धनुष यज्ञ के सुंदर जो भूमि तल है  
तामें कांतुकही भाय के खड़े भए हैं । मानो धनुष यज्ञ की सुंदर भूमि  
नहीं है छवियुक्त सुरसभा जो सुधर्मा सो है औ श्रीराम लपन नहीं  
हैं काम के शोभित कल्पवृक्ष हैं औ राम लपन का जो रूप है सो रूप  
नहीं है तेहि कल्पवृक्ष को फल है । इहां दुइ कल्पवृक्ष जानना ॥ २ ॥ मुख  
निरखत मात्र में सकल कामना को वरपत हैं इहां कल्पवृक्ष ने अधिक  
जनाए क्योंकि कल्पवृक्ष छाया के नीचे गए फल देत है औ ए देवत  
मात्र औ हर्ष भरे जेहि तन के चित्त तेहि को कर्षत है वा यद्यपि चित्त  
चोरावत हैं तथापि हित मानि हर्ष भरे वा चित्त को तो चोरावत हैं  
पर हित ते हर्ष भरत हैं । गोसाईं जी कहत हैं कि जनक महाराज के  
सब सराहत हैं कि भले दाव के पासे सुंदर परे हैं । भाव जो पन किए  
ताको भलो फल पाए ॥ ३ ॥ ७६ ॥

नेकु सुमुपि चितु लाड चितौरी । राजकुअर मूरति  
 रचिवे की रुचि रुचि विरंचि यमु कियो है कितौरी ॥ १ ॥  
 नष सिष सुंदरता अवलोकत कच्छौ न परत रुप होत तितौरी ।  
 सांवर रूप सुधा भरिवे कहु नयन कमल कल कलस  
 रितौरी ॥ २ ॥ मेरे जान इन्हहि बोलिवे कारन चतुर जनक  
 ठयो ठाठ इतौरी । तुलसौ प्रभु भंजिहै संभुधनु भूरि भाग  
 सिय मातु पितौरी ॥ ३ ॥ ७७ ॥

अरी सुमुखि तनक चित लगाय के देखु । ब्रह्मा ने राजकुआर  
 की मूरति रचिवे की रुचि ते केतनो थम कियो है । नख ते सिख लो  
 सुंदरताई के अवलोकत जेतना सुख होत है तेतना कहि नहि परत ।  
 सांवर रूप जो कोई अमृत है ताको भरिवे को सुंदर नयन कमल रूप  
 कलश को खाली करो । इहां और ओर न देखना खाली करना है ॥२॥  
 मेरे जान चतुर जनक ने इन्हें बोलिवे कारन इतो ठाठ ठयो है । तुलसी  
 के प्रभु संभुधनु तोरिहैं । भूरिभाग जानकी जू के माता आ पिता के हैं  
 ॥ ३॥७७ ॥

राग सारंग । जब ते राम लघन चितयेरी । रहै एक-  
 टक नर नारि जनकपुर लागत पलक कलप बितयेरी ॥१॥  
 प्रेम विवस मागत महिस सो देपत ही रहिये नितएरी ।  
 कै ए सदा बसहु इन्ह नयननि कै नयन जाहु जितयेरी ॥२॥  
 कोउ समुभाय कहे किन भूपाहं बडे भाग आए इतयेरी ।  
 कुलिस कठोर कहां संकरधनु मृदु मूरति किमोर कितए  
 री ॥ ३ ॥ विरचत इन्हहिं विरंचि भुवन सब सुंदरता योजत  
 रितए री । तुलसिदास ते धन्य जनम जन मन क्रम वच  
 जिन्ह के हित ए री ॥ ४॥७८ ॥

जब ते ३० सुगम ॥ ४॥ ७८ ॥ टिप्पणी—नर नारियों को पलक  
 गाने का समय एक कल्प के समान मान्य होता है अर्थात् वे लोग पलक

गिरने भर के लिये भी राम न्यून का दर्शन नहीं छोड़ना चाहते ॥१॥  
 मेम के विशेष व्रत होकर महिम मे मांगते हैं कि ये यहीं रहें वा जहां  
 जायें वहां मेरे नेत्र भी जायें ॥ २ ॥ ब्रह्मा ने इन की सुन्दरता बनाने  
 समय भुवन भर की सुन्दरता रितये अर्थात् खाली कर दिये । तुलसी  
 दास जी कहते हैं कि जिन के मन वच कर्म से ये हित हैं उन के जन्म  
 घन्य हैं ॥ ४ ॥ ७४ ॥

तुनु मपि भूपति भनोदु कियो री । जेहि प्रसाद अव-  
 धमु कुचर द्योउ नगर लोग अवलोकि जियोरी ॥ १ ॥ भानि  
 प्रतीति कहें मर ते कत मंटेहवस यारत हियो री । तौलौं  
 है यह संभुमरामन थी रघुवर जौलौं न लियोरी ॥ २ ॥  
 जेहि विरंचि रचि सीय संवारी अरु रामहि एसो रूप दियो  
 री । तुलसीदास तेहि चतुर विधाता निजकर यह संयोग  
 सियोरी ॥ ३॥७६ ॥

मुन इ० मु० ॥ ७९ ॥ टिप्पणी—तुलसीदास जी कहते हैं कि जिस  
 ब्रह्मा ने सीता को संवारा और राम को ऐसा रूप दिया है उसी चतुर  
 विधाता ने यह संयोग (दोनों का मेल वा विवाह) भी सियो कई सीया  
 अर्थात् रचा है ॥ ३॥७६ ॥

अनुकूल नृपहि सुलपानिहैं । नीनकांठ कारुण्यसिन्धु  
 हर दोनबंधु दिनदानिहैं ॥ १ ॥ जो पहिलेहि पिनाक  
 जनक को गए सौंमि जिय जानिहैं । बहुरि बिलोचन लोचन  
 के फल सबहि सुलभ किये आनिहैं ॥ २ ॥ सुनियत भव  
 भाव ते राम हैं मिय भावतो भवानि हैं । अरिपत प्रीति  
 प्रतीति पयजपनु रहे काज ठट्टु ठानिहैं ॥ ३ ॥ भये बिलोकि  
 विदेह नेहवस वालक विनु पहिचानिहैं । होत हरे होने  
 विरवनि दल सुमति कहति अनुमानिहैं ॥ ४ ॥ देविचत



कारयुक्त यद्यपि नहीं बोलत हैं ॥ ५ ॥ भानि हैं तोरि हैं ॥ ६ ॥ सकल  
सुमंगल के खानि हैं ताते नारि नर व्याह उछाह देखिहैं ॥ ७ ॥ ८० ॥

राग कैदारा—रामहि नीकै कै निरपि सुनयनी । मन-  
सहु अगम समुक्ति यह अवसरु कत सकुचत पिकवयनी ॥१॥  
बडे भाग मघभूमि प्रगट भई सोय सुमंगल चयनी । जा-  
कारन लोचन गोचर भइ मूरति सब सुप दयनी ॥२॥ कुल-  
गुरु तिय के वचन मधुर सुनि जनक जुवति मति पयनी ।  
तुलसी सिधिल देह सुधिवुधि करि सहज सनेह विपयनी  
॥ ३॥८१ ॥

श्री सतानन्द की पत्नी सुनैना जू से कहति हैं कि श्रीराम को  
नीके निरखहु हे पिकवैनी मनोते अगम अर्थात् श्रीराम हैं अस समुक्ति  
के फिर कत सकुचति हौं ॥ १ ॥ सोय सुमंगल को गृह बडे भाग्य ते  
यज्ञ भूमि में प्रगट होती भई जा कारण ते सब सुख देनिहारी मूरति  
चैनन की विपै भई। श्रीमद्रामायणे विश्वामित्रं प्रति जनकवाक्यम्। “अथ  
मे कृपतः क्षेत्रं लांगलादुत्थिता ततः । क्षेत्रं शोधयता लब्धा नाम्नासीते-  
ति विश्रुता” अथेति वृत्तान्तरारम्भे क्षेत्रं यागभूमिम् मम कृपतः मयि  
कर्षति अग्निचयनार्थमिति शेषः ऋषभेण कर्षतीत्यादिशास्त्रात् लाङ्गला-  
दुत्थिता आविर्भूता यज्ञक्षेत्रं शोधयता सीताः लाङ्गलपद्धतेर्मया लब्धा ततो  
नाम्ना सीतेति प्रसिद्धा । पात्रे च । “अथ लोकेश्वरी लक्ष्मीर्जनकस्य पुरे-  
स्वतः श्रुभक्षेत्रे ह्यलौक्याते तारेचोत्तरफाल्गुने अयोनिजा पद्मकरा बाला-  
केशशिसभिभा सीतामुखे समुत्पन्ना बालभावेन सुन्दरी । सीतामुखोद्भवान्  
सीता इत्यस्या नाम चाकरोत्।” भविष्ये च । “मर्वर्तुनिकरश्रेष्ठे कर्ता तु बुभु-  
माकरे । मासि पुण्यतमे विम माधवे माधवभिये ॥ नवम्यां शृङ्गपक्षे च वामरे  
मङ्गले शुभे ।, सार्ष्णिके च मध्यान्दे जानकीजनवालये ॥ आविर्भूता म्वयं  
देवी योगेषु गतिरुचमा” ॥२॥ श्री जनकजू की रानी सुनैना जू मनि की  
पोपी हैं सो कुलगुरु तिय के मधुर वचन सुनि के सहज सनेह विपनी  
सुदि करि जो देह के ओर ते सिधिल भई रही सो वेदि की सुधि





नेत्र ॥ १ ॥ दुअन दुए, जनकपुर रूप आकाश में प्रभु को धुजस रूप  
विपद चंद्र अब उगा चाहत है ॥ २ ॥ ८३ ॥

रागटोडी । राजा रंगभूमि आजु बैठे जाइ जाइके ।

आपने आपने घल आपने आपने साज आपनी आपनी वर  
वानिक बनाइके ॥ १ ॥ कौसिकसहित राम लपन ललित  
नाम लरिका ललाम लोने पठए बुलाइके । दरस लालसा  
वस लोग बले भाय भले विकसत सुप निकसत धाइ धाइके  
॥२॥ सानुज सानंद छिए आगे हौ जनक लिये रचना रुचिर  
सब सादर देपाइके । दिये दिव्य आसन सुपास सावकास  
अति आछेआछे वोछे वोछे विछौना विछाइके ॥३॥ भूपति-  
किसोर दुहु ओर बीच मुनिराज देपिवे को दाउ देपो देपिवे  
विछाइके । उदय सयल सोहै सुंदर कुअर जोहै मानौ भानु  
भोर भूरि किरनि छपाइके ॥ ४ ॥ कौतुक कौलाइल निसाय  
गान पुर नभ वरपत सुमन सुविमान रहे छाइ के । छित  
अनछित रत विरत विलोकि बाल प्रेम भोद भगन जनमफल  
पाइके ॥ ५ ॥ राजा की रजाइ पाइ सचिव सहेली धाइ  
सतानंद ल्याए सिय सिविका चढाइके । रूप दीपिका  
निहारि मृग मृगो नर नारि विथके विलोचन निमेषे विस-  
राइके ॥ ६ ॥ हानि लाहु अनप उछाहु बाहुबल कछि बंदी  
बोले विरद अकस उपजाइके । दीप दीप के महीप आये  
सुनि पैजपनु को जै पुरुषारथ को औसर भोआइके ॥ ७ ॥  
आनाकानो कठईसी मुहाचाहो होनलागी देपि दसा  
कहत विदेह विलपाइके । घरनि सिधारिए सुधारिए आगिलै  
काज पूनि पूजि धनु कीजै विजय वजाइके ॥ ८ ॥ जनक



भूमि के हरैषा उपरइषा भूमि धरनि के विधि विरचै प्रभाउ  
जाको जग जई है । विहंसि हिय हरपि हटके लपन राम  
सोहत सकोच सील नेह नारि नई है ॥ ३ ॥ सहमी सभा  
सकल जनक भए विकल राम लपि कौसिक असीस अज्ञा  
दई है । तुलसी सुभाय गुरु पाय लागि रघुराज ऋषिराज  
की रजाइ माथे मानि लई है ॥ ४ ॥ ८५ ॥

लछिमन जी की उक्ति है भूपति विदेह ने जो भई है सो कही ताते  
ठीक है आंक एक ही कहैं निश्चय करि हाकिं कहैं ललकारि कै ॥ १ ॥  
प्रतिज्ञा की मर्यादा और भांति ते मुनि गई है । अर्थात् जो तोरे सो  
वै कदापि यह नहीं होता तो भूमि के हरैआ औ भूमिधरन के  
उखैरआ की जीतनिहार जेहि को प्रभाव जगत में विधि विरचे हैं तेहि  
उतरे चांप को मधु के मताप ते चढ़ाई के अपने बल को देखाय देते  
पर याको फल पापमई है । भाव बढ़े के रहते छोटे या मंथम विवाह  
होना अनुचित है अर्थात् छोटा बड़ा दोऊ देव पितर के काम लायक  
नहीं रहत तथाच स्मृति: "दाराग्नि होत्रसंयोगं कुरुतेयो अग्ने स्थिते ।  
परिवेता सविज्ञेयः परिवित्तिस्तु पूर्वजः ॥" यह कहनो अनुचित रहा पर  
मेरो कहनो अनुचित नहीं है क्योंकि लरिकाई बस कहत है ॥२॥ हृदय  
में हरपि के मुमुकाय के श्री राम जू लखन को घरजे तब संकोच गीछ  
औ नेह ते श्री लखन लाल की नारि कहैं गर्दन नई भई सोही ॥३॥ ८५

सोचत जनक पोष पेच परि गई है । जोरि कर कमल  
निहोरि कहै कौसिक सों पायसु भो राम को सो मेरे  
दुचितई है ॥ १ ॥ वाग जातुधानपति भूप दीप सातह के  
लोफय विलोकत पिनाक भूमि लई है । जोतिलिंग कया  
सुनी जाको अंत पाये विनु पाये विधि हरि हरि सोई हाल  
भई है ॥ २ ॥ पापुही विचारिये निहारिये सभा की गति  
वेदमरजाद मानो हेतुषाद छई है । इन्ह के लितोहें मन



सो जितोंई मन आदि आप के भरोसा के बल सोंहै, कैधों कोऊ देवता हें छलते मनुष्य घने हें, कैधों अपने कुल के प्रभाव से अर्थात् सूर्यवंशी हें तेहिते तेजयुक्त हें, कैधों लरिकाई अर्थात् कुछ आगे पीछे को विचार नहीं है कन्या सुंदर, कीर्ति औ विश्व की विजय बटोरिवे कों, कैधों विधाता ने इनही को निर्माण कियो है ॥ ४ ॥ हे नाथ हम को अपने प्रतिष्ठा करने को मोह नहीं है और को को कहै सीता हू की विशेष चिन्ता नहीं है । कदापि विश्वामित्र जू पूछें कि क्यों नहीं है तापर कहत हें सोई सोई कादिहें जोई जोई जेहि ने बोया है । भाव जीव कर्मवस दुख सुख भागी है पर नीकी नीकी जो रघुनाथ की निकारई है सो बनी रहै । यह बात की विशेष चिन्ता है, सो आप के हाथ है, आप कैसे हें कि करनी नई है । भाव आजु लो ब्रह्मा छोडि सृष्टि कोऊ न करि सके सो आप किए तो यह कौन बड़ी बात है वा आप अनहोनी करनिहार हें ॥ ५ ॥ विश्वामित्र जू ने आप की बात साधु है साधु है अस कहि के राजा को सराहे फिर कहे कि हे महाराज आप के जिय को जानी आप ने भला ठहराय राखा है । भाव रघुनाथ की निकारई में सब की भलाई है । यह श्री जनक श्री विश्वामित्र को सम्वाद सुनि लपन हर्षे औ विलखाने भए जो लोग रहे सो हर्षाने । गोसाईं जी कहत हें कि यह आश्चर्य नहीं है जाको जई राजा राम हें सोई युदित होत हें, भाव और के रोअतै रोअत जन्म बीतत है ॥ ६ ॥ ८६ ॥

सुजन सराही जो जनक बात कही है । रामही सुझानी जानि सुनि मन मानी सुनि नीच महीपावली दहिन विनु दही है ॥ १ ॥ कहैं गाधिनंदन मुदित रघुनंदन सों नृप गति अगहु गिरा न जाति गही है । देवे सुने भूपति अनेक भूठे भूठे नाम साचे तिरहुति नाथ सापो दैत मही है ॥ २ ॥ रागउ बिराग भोग जोग जोगवत मनु जोगो जागवलिक प्रसाद सिद्धि लही है । ताते न तरनि तें न सीरे सुधाकरह तें सहज समाधि निरुपाधि निरवही है ॥ ३ ॥ ऐसीउ अगाध

सोभा अधिकानी तन मुषन की सुषमा सुषद सरसई है ॥३॥  
 रावरो भरोसो बलु कौहै षोज किये छल कौधों कुल के प्रभाव  
 कौधो लरिकई है । कन्या कल कीरति विजय विप्रकी बटोरि  
 कौधों करतार इन्ह ही को निरमई है ॥४॥ पन की न मोष  
 न विसेष चिंता सीता हू की लुनि है पै सोई सोई जोई  
 जीहि बई है । रहै रघुनाथ की निकारई नीकी नीकी नाथ  
 हाथ सो तिहारे करतूति जाकी नई है ॥ ५ ॥ कहि साधु  
 साधु गाधिसुभन सराहै राज महाराज जानि जिय ठीक  
 भली दई है । हरषे लखन हरपाने विलपाने लोग तुलसी  
 मुदित जाकी राजाराम जई है ॥ ६ ॥ ८६ ॥

सोचत ३० । जनक जू सोचत हैं कि कठिन पेच परि गई है । भाव  
 यह प्रतिज्ञा जो किया सां भला नहीं किया । जनक महाराज हस्तकर्म  
 जोरि कै निहोरा करि विश्वाभिन्न जू सो कहत हैं कि आप ने जो रघु  
 नाथ को आज्ञा दिया तामें हम को दुचित्ताई है, अब दुचित्ताई कां हो  
 कहत हैं ॥१॥ घाणासुर रावण औ सातो दीपके राजा औ लोकपाल  
 के देखत ही पिनाक ने भूमि को लई है अर्थात् भूमि को पकड़ि ल  
 है । जोतिलिङ्ग को अंत नहीं है । यह कथा मुनि के अंत लेइवे को ब्रह्मा  
 ऊपर को गये औ विष्णु जू पाताल को गये पर तेहि लिंग को अंत  
 पाये । ब्रह्मा विष्णु हारि किरि आप सोई हाल इहां भई है, भाव पिना  
 केतना भारी हैं याको अंत फोऊ नहीं पावत है । ब्रह्मा विष्णु हारि ग  
 लिंग का अंत न पिया यह काशीखंड में लिखा है ॥ २ ॥ इमा  
 ही कहने पर नहीं आप भी विचारिए और सभा की दसा देखिए कि  
 फेमी हो रही है जैसे बंद के मर्जाद को नास्तिक बाद नासत है । भाव  
 तस पिनाक ने धीरत करि दिया है । अब श्रीराम का वर्णन करत है  
 कि श्रीराम के मन निर्भीह है औ मन में सोभा अधिकार्य रही है औ  
 सुर की सुषद सोभा सरनाय रही है । इहां इन्ह के औ सुर नए प्रो  
 षदु षचन उचद हैं सो आदर में हैं या दोऊ मादन में लगाय लेना ॥३॥

पधीन निरवान को । विनु गुन की कठिन गांठ जड चेतन  
की छोरी अनायास साधु सोधक अपान को ॥ ३ ॥ सुनि  
रघुवीर को वचन रचनाकी रीति भए मिथिलेस मानो दीपक  
विहान को । मिय्यौ महामोह की को छूयो पोच सोच सी  
को जान्यो अशतारु भयो पुरुष पुरान को ॥ ४ ॥ सभा नृप  
गुर नर नारि पुर नभ सुर सब चितवत सुप करुनानिधान  
को । एकहि एक कहत प्रगट एक प्रेमवस तुलसीस तोरिए  
सरासन ईसान को ॥ ५ ॥ ८८ ॥

श्रीरघुनाथ की उक्ति ऋषि ३० । हे रिपिराज आजु श्रीजनक  
समान राजा को है, काहे ते कि आप एहि भांति ते प्रीति सहित सरा-  
दियत है तो रागी औ विरागिन के मध्य में बड़भागी ऐसो आन को  
है ॥ १ ॥ भूमि भोग करत अर्थात् राज भोग तो करत है पर वाही में  
जोग सुख को अनुभवत है । इन की गति मननशील जे सुनि तिन हूँ  
के अगम है और को जाने । गुरु औ हर के पद में नेह है, जाको घर में  
रहि के विदेह है रहे हैं । नगुन औ सगुन रूप प्रभु के भजन में अस  
आन कौन सयान है ॥ २ ॥ कहनि रहनि सब एक भांति की है  
वराग्य ज्ञान औ राजनीति सब वेद बुध संमत है इन को, औ मोक्ष के  
पथिक हैं अर्थात् स्वर्गादि के नहीं जो विनु गुन की कठिन गांठि जड  
चेतन की है ताको वेपरिश्रम छोरि डारी है औ अपने स्वरूप को  
साधु कहै भली भांति सोधक हैं ॥ ३ ॥ दीपक विहान को कहिये का  
यह भाव कि अपनी बड़ाई सुनि सकुचे ॥ ४ ॥ नृप जनक महाराज  
गुरु विश्वामित्र जू औ पुर के नर नारि ॥ ५ ॥ ८८ ॥

राग मारू—सुनो भैया भूप सकल दै कान । वज्ररेप  
गजदसन जनकपन वेदविदित जग जान ॥१॥ घोर कठोर  
पुरारिसरासन नाम प्रसिद्ध पिनाकु । जो दसकंठ दियो  
वावों जेहि हरगिरि कियो मनाकु ॥ २ ॥ भूमि भाल भाजत



बोध राखरे सनेह वस विकल विलोकियत दुचितई सही है।  
कामधेनु कृपा हुलसानी तुलसोस उर पन सिसु हेरि मर-  
जादा वांधी रही है ॥ ४॥ ८७ ॥

जो श्री जनक जू की कही बात है ताको सुजनों ने सराही औ  
मुनि की मव मानी भई बात है अस जानि श्रीराम को सोहात भई पर  
सो बात सुनि के नीच जां महिपावली है सो विनु अग्नि के जरि जात  
भई ॥ १ ॥ गाधिनंदन रघुनंदन सो हर्षित कहत हैं कि मिथिलेश की  
गति गहिवे जोग नहीं है ताते बातहू नहीं गही जात है। नाम मात्र के  
झूठे झूठे अनेक भूपति देखे पर सांचे भूपति तिरहुतिनाथ ही हैं या  
बात की साक्षी पृथ्वी देति है, भाव कन्या उपजाय कै ॥ २ ॥ प्रीति  
औ वैराग्य भोग औ जोग सब महाराज के मन को जोगवत हैं भाव  
जेहि के ओर तनिक दृष्टि करत सो शीघ्र हाजिर है जात है। जोगी  
जाबलिक के प्रसाद ते यह सिद्धता को लही है। ताते सूर्य ते तप्त नहीं  
होत हैं औ और को को कहै चन्द्रमो ते शतिल नहीं होत हैं, उपाधि  
रहित स्वाभाविक समाधि को निर्वाह करत हैं। वायु आदि वस करि  
जो समाधि सो उपाधि सहित ॥ ३ ॥ हे श्रीराम जू आप के सनेह के  
वंस ऐसेऊ अगाध बोध वाले जनक महाराज को विकल विलोकियत  
है ताते अस जानि परत है कि इन के मन में निश्चै दुचितई है, यह मुनि  
के प्रतिहारूपी बछरा को देखि कै कृपारूपी कामधेनु रघुनाथ के उर  
में हुलसानी पर विश्वामित्र जू की आज्ञा रूप मर्जादा में बांधी है ताते  
ठहर गई ॥ ४॥ ८७ ॥

रिपिराज राजा आजु जनकसमान को । आपु एहि  
भांति प्रीति सहित सराहियत रागो औ विरागो बडभागी  
ऐसो पान को ॥ १ ॥ भूमि भोग करत अनुभवत जोग सुप  
मुनिमन अगम अलय गति जान को । गुर हर पद नेह  
नेह यसि भो विदेह अगुन सगुन प्रभु भजन सयान को ॥ २ ॥  
कहनि रहनि एक विरति विवेक नीति वेद बुध संसत

रंक होय ॥ ३ ॥ महा महा बल वीर जो रहे सो अपनो सो किए  
 अर्थात् जेतना प्राक्रम रहा तेतना किए पर चांप न टरेउ । महा महा बल  
 वीरन को चांप अपनो सो कियो अर्थात् जड ॥४॥५॥ जहँ तहँ महीप  
 मुरे कहँ जहां ते उठे रहे तहँ फेरि आइ बैठे ॥ ६ ॥ फुरे फरके ॥७॥८॥  
 क्याँ कहँ कैसे मृनाल कपलदण्ड, अनुग सेवक ॥ ९ ॥ १० ॥ अयन  
 गृह, मृगपति सिंह ॥ ११ ॥ ८९ ॥

जबहि सब नृपति निरास भए । गुरुपद कमल वंदि  
 रघुपति तब चांप समीप गये ॥ १ ॥ स्याम तामरस दाम  
 वरन वपु उर भुज नयन विसाल । पीत वसन कटि कलित  
 कांठ मुंदर मिंधुरमनिमाल ॥ २ ॥ कल कुंडल पल्लव प्रसून  
 सिर चारु चौतनो लाल । कोटि मदन छबि सदन बदन  
 विधु तिलक मनोहर भाल ॥ ३ ॥ रूप अनूप बिलोकत  
 सादर पुरजन राजसमाजु । लपन कछ्यौ धिर होहिं धरनि-  
 धरु धरनि धरनिधर चाजु ॥ ४ ॥ कमठ कोल दिगदंति  
 सकल श्रंग सजग करहु प्रभु काजु । चहत चपरि सिवचांप  
 चढावन दसरथ को जुवराजु ॥ ५ ॥ गहि करतल मुनि  
 पुलक सहित कौतुकहि उठाइ लियो । नृपगन मुपनि  
 समेत नमित करि सजि मुप सबहि दियो ॥ ६ ॥ आकरप्यौ  
 सिय मन समेत हरि हरप्यौ जनक हियो । भंज्यो भृगुपति  
 गर्व सहित तिहुलोक विमोह कियो ॥ ७ ॥ भयो कठिन  
 कोदंड कोलाहल प्रलय पयोद समान । चौकें शिव विरंचि  
 दिसिनायक रहे मूदि कर कान ॥ सावधान छै चढे विमानन  
 चने बजाइ निसान । उमगि चल्यौ आनंद नगर नभ  
 जय धुनि मंगलगान ॥८॥ विप्रवचन सुनि सपौ मुखासिनि  
 चली जानकिहि ल्याइ । कुश्रंर निरपि जयमाल मैलि उर

न चलत सो ज्यों विरंचि को आंकु । धनु तोरै सोइ वरै  
जानकी राउ होइ की रांकु ॥३॥ सुनि आसर्षि उठे अवनौ-  
पति लगे वचन जनु तीर । टरै न चांप करै अपनी सो  
महा महा बल वीर ॥ ४ ॥ नमित सीस सोचाह सलज्ज सब  
शोहत भए सरौर । बोले जनक विलोकि सीय तन दुषित  
सरोष अधीर ॥ ५ ॥ सप्त दीप नव पंड भूमि के भूपति वृंद  
जुरे । वडो लाभ कन्या कीरति को जहँ तहँ महिप सुरे ॥६॥  
डग्यो न धनु जनु वीर विगत महि किधौं कहुं सुभट टुरे ।  
रोषे लपन विकट भृकुटी करि भुज अरु अधर फुरे ॥ ७ ॥  
सुनहु भानु कुलकमल भानु जो अब अनुसासन पावौं । को  
वापुरो पिनाकु मेलि गुन मंदर मेरु नवावौं ॥ ८ ॥ देखी  
निज किंकर को कौतुक क्यों कोटंड चटावौं । लै धावौं  
भंजौं मृनाल ज्यों तौ प्रभु अनुग कहावौं ॥ ९ ॥ हरपे पुर नर  
नारि सचिव नृप कुअर कहे वर वैन । मृदु मुसुकाइ राम  
वरज्यो प्रिय बंधु नयन दै सैन ॥ १० ॥ कौसिक कछौ उठहु  
रघुनंदन जगवंदन बल सैन । तुलसि दास प्रभु बले मृगपति  
ज्यों निज भगतनि सुपदैन ॥ ११ ॥ ८६ ॥

बंदी की उक्ति सुनो ३० । बज्र पर की रेखा जैसे नहीं मिटति है  
आँ हाथी के दाँत जैसे फेर भीतर नहीं जात तस जनक महाराज की  
प्रतिज्ञा है वेद में विदित है आँ सब जग जानत है कि पुरारि को सारा  
सन अति कठोर है, जाको पिनाक अस नाम प्रसिद्ध है । जो पिनाक को  
रावण पावै दियो अर्थात् सनमुख न भयो, जेहि रावण ने कैलास को  
लपु कियो अर्थात् देखा मय उठाव लियो ॥ १ ॥ २ ॥ भाव पर भ्राजत  
जो विरंचि को अंकु है सो जगे नहीं चलत तंग भूमि ते नहीं चलत  
है तेरि धनु को जो तोरै सो राजहमारे को परै, चाहे राजा होय चाहे

ए, उठे राम रघुकुल कल केहरि गुरु अनुसासन पाए

३ ॥ कौतुकही कोदंड पंडि प्रभु जय अरु जानकि पाई ।

लसिदास कीरतिरघुपति की मुनिन्ह तिह पुर गाई ॥ ४ ॥ १ ॥

जब इ० जब दोऊ चक्रवर्ती कुमार कों देखे तब देखि करि जनक-  
के नर नारि अपने निमेष (पलक) कों रोके आँ मुदितमन भए १ ते  
ऊ राजकुमार कैसे हैं किशोर अवस्था आँ मेघ आँ तडित सम तन  
वरण है आँ नप ते सिप लों सब अंग लोभावनिहारे हैं के हितु कहें  
ति करि सब जगत के छवि रूप धन ल के चित्त दै के ब्रह्मा ने  
अपने हाथ ते संवारे हैं जिन को ॥२॥ देखि के श्रीजनक महाराज कों  
स भयो अर्थात् काह को अस प्रण किया आँ श्रीजानकी जी को  
तिसोच भयो आँ राजा सब सकुचाय के मिर नवाये भाव ए दोऊ  
गाई तेजस्वी देखि परत हैं कदापि इन से धनु उठा तो हम लोगों के  
ह में मसि लगी । तब गुरु अनुमामन पाए तें सुंदर जो रघुकुल है  
तन में श्रेष्ठ जो श्रीराम सो उठे ॥ ३॥४॥ ९१ ॥

राग टोडो । मुनि पद रेनु रघुनाथ माघे धरो है । राम-  
रूप निरपि लपन की रजाइ पाइ धराधर धरनि मुमायधान  
करो है ॥ १ ॥ सुमिरि गनेस गुर गौरि हर भूमिगुर मोक्षत  
सकोक्षत सकोचौ वान धरो है । दीनबंधु कृपामिंधु माह-  
मिक भोलसिंधु सभा को मकोच कुलहृ की लाज पगी है  
॥ २ ॥ पैपि पुरुषारथ परपि पन प्रेम नेम मीय हीय की  
विशेषि बडो परभरी है । दाहिनी दियो पिनाकु महमि  
भयो मनाकु महाब्याल बिकल विलोकि जनु जरी है ॥ ३ ॥  
सुर हरपत वरपत फूल धार धार सिद्ध मुनि कहत मगुन  
शुभ धरो है । रामबाहु बिटप विमाल बोडो देपियत  
जनकमनोरथ कलपधलि फली है ॥ ४ ॥ सख्यो न बटावत  
न तानत न तोरतहूं घोर धुनि मुनि सब को समाधि टरी

कुवरि रही सकुचाइ ॥ १० ॥ वरपहि सुमन असोसहिं सुर  
मुनि प्रेम न हृदय समाइ । सौय राम की सुंदरता पर तुल-  
सिदास बलि जाइ ॥ ११॥६० ॥

जवहिं इ० सु० ॥१॥ तामरस कमल दाम समूह कटि कलित कटि  
में धारन किए सिंधुरमानि गजमुक्ता ॥ २ ॥ कल सुंदर चांतनी टोपी,  
कोटि मदन छवि सदन कोटि काम के छवि के गृह ॥ ३ ॥ धरनि-  
धर शेष, धरनी पृथ्वी धरनिधर पर्वत ॥ ४ ॥ कच्छप शूकर भगवान  
दिग्गज सकल अंग ते सजग होय के प्रभु के काज करहु भाव कोई  
अंग ते ढीला होहुगे तो न सम्हारि सकोगे चपरि उत्साह करि ॥ ५ ॥  
गहि इ० आकर्षेउ इ० यह दूनो तुकन को भाव नाटक के अनुसार है ।  
“उत्क्षिप्तं सह कौशिकस्य पुलकैः सार्द्धं मुखैर्नामितं भूपानां जनकस्य  
संशयधिया सार्कं समास्फालितम् । वैदेहीमनसा समं च सहसाकृष्टं ततो  
भार्गवमौद्राहंकृतिदुर्मदेन सहितं तद्भ्रमंशं धनुः” अस्यार्थः अथ धनुर्भोगे  
नानारसानुभावात् चित्ररसं दर्शयितुं पद्यमवतारयाति उत्क्षिप्तमिति कौ-  
शिके वत्सलरसोजातः अत्र हर्षः संचारी हर्षात्पुलकाः सात्विका इति  
ज्ञानम् । भूषे भयानकरसः अत्र दैन्यं संचारी दैन्यादेवमुखनमनम् अत्र  
भीषणा त्रिविधा तत्प्रभावेनैव रामे भीषणत्वं जनके करुणारसोजातः अत्र  
ग्लानिः संचारी सा चापे जाता आध्यनुभावः संशयइति ज्ञानं वैदेहा  
मधुररसोजातः मनआकर्षणमेवात्रानुभावः रामे वीररसः अत्र स्वर्द्धी-  
पनं सा परछुरामागतोतिज्ञानम् अत्र सर्वरसानामुद्दीपनविभावोरामएव  
॥६॥७॥ कोलाहल महाशब्द, पयोद् मेघ दिसिनायक दिक्पाल ॥ ८ ॥  
निसान नगारा ॥ ९ ॥ विप्र सतानंद ॥ १० ॥ ११ ॥ ९० ॥

राग मलार—अथ दोउ दशरथकुंभर १२ लोके । जनक-  
नगर नर नारि मुदित मन निरपि नयन पल रोके ॥ १ ॥  
अथ किमोर घन सहित धरन तन नय मिय अंग लुभावे ।  
दे चितु के हितु मे मय छवि मितु विधि निज हाय सवारे  
॥ २ ॥ संकट नृपहि मोष पति मीतहि भूष सकुधि मिर

करपरसत टूथ्यो जनुहुतो पुरारि पढायो ॥ २ ॥ पहि-  
 जयमाल जानकी जुवतिन्ह संगल गायो । तुलसी सुमन  
 पि हरषे सुर सुजस तिह पुर छायो ॥ ३ ॥ ६३ ॥

राम इ० सु० ॥१॥ हुतो पुरारि पढायो भाव श्रीशिव जी पढाय  
 रहे कि श्रीराम के छुअत दृष्टि जाना ॥ २ ॥ ३ ॥ ९३ ॥

राग टोड़ी—जनक मुदितमन टूठत पिनाक के । बाजे  
 वधावने सुहावने संगल गान भयो सुप एकरस रानी  
 जा रांक के ॥ १ ॥ दुंदुभी वजाइ गाइ हरषि वरषि फूल  
 गन नाचे नाचे नायकह नाक के । तुलसी महीस देखि  
 न रजनीस जैसे सूने परे सून से मनो मिटाये  
 के ॥ २ ॥ ६४ ॥

जनक इ० रांक दरिद्र ॥ १ ॥ नाक के नायक इन्द्र, दिन में जैसे  
 मा देखि परत हैं तैसे राजा सब देखि परे अब दूसरी उपमा कहत  
 जैसे अंक के मिटाए सुन सूना परत है अर्थात् वे हिसाब है जात है  
 भए ॥ २ ॥ ९४ ॥

लाज तो न साजि साज राजा राड रोपे हैं । कहा  
 चाप चढाए व्याह ह्वै है वडे पाये बोलै पोलै सेल असि  
 मकत चोपे हैं ॥ १ ॥ जानि पुरजन तसे धीर दै लपन  
 से बल इन्ह के पिनाक नौके नापे जोपे हैं । कुलहि लजावे  
 ल बालिस वजावै गाल कौधौ कूर काल वस तमकि  
 वदोपे हैं ॥ २ ॥ कुअर चढाई भीहैं अब को विलोकै सोहैं  
 हां तहां भे अचेत पेंत कीसे धोपे हैं । देखि नर नारि कहैं

राग पाइ जाए माय बाहु पीन पावरनि पीना पाय पोपे हैं  
 ३ ॥ प्रमुदित मन लोक कोकनद कोकगन राम के प्रताप

है । प्रभु के चरित चारु तुलसी मुनत मुप एक ही दुःख  
सब ही की हानि हरो है ॥ ५॥६२ ॥

विश्वामित्र जू के चरण की धूरी रघुनाथ ने मांघ पर धरी है । ए  
नाथ की रूप देखि कै श्री लछिमन जू आजा दिप । “दिशि इंद्र  
कमठ अडि कोला । धरहु धरनि धरि धीर न डोला” ॥ सो आजा  
कै धराधर जो कच्छपादि सो भूमि कां थिर करी है भाव लघु क  
सी दगमगाय उलटि न जाय ॥ १ ॥ अब जानकी जू की सार  
कहत हैं कि गणेश गुरु गौरी हर भूमिसुर को सुमिरि कै सांचरी  
“कहं धनु कुलिसहु चाहि कठोरा । कहँ स्यामल मृदु गात किमो  
विधि केहि भांति धरौं उर धीरा । सिरस सुमन कन बेधिय हीरा ।  
औ देवतन को संकोच देत हैं कि आप लोगन की सुद्ध संकोची क  
है भाव संकोच में परि के जे न होनिहार ताहू के करनिहार हैं हे ही  
बंधु कृपासिंधु हे साहसिक अर्थात् शीघ्र कार्य सिद्ध करैया औ हे ही  
के समुद्र हम को सभा को संकोच औ कुल हू की लाज परी है क  
चित्त तो चाहत है कि विनु धनु तारे जयमाल डार देउं पर आजु है  
अस हमारे कुल में काहू कन्या ने नहीं किया है, यह जो सिय तिय के  
विशेष खरभरी है ताको औ राजन को पुरुषारथ देखि के औ  
जनक जू को मेम को नेम औ प्रतिज्ञा की परीक्षा करि के श्रीराम रू  
पिनाक को दहिना दियो अर्थात् मद्रक्षिण कियो डरि कै पिनाक ल  
है जात भयो जैसे जरी को देखि कै सर्प विकल होय सिकुर जात । देत  
हर्षत संत बार बार फूल बर्षत हैं औ सिद्ध सगुन औ मुनि सुभ फ  
कहत हैं पुनि सिद्धादि कहत हैं कि श्रीरामवाहु रूप विशाल ह  
श्रीजनक जू की मनोरथ रूपी कल्पलता जो फैली रही ताको फ  
देखिअत है ॥ २ ॥ ३ ॥ ४ ॥ एक ही सुंदर लाभ ने सब ही की शा  
को हरन करी है ॥ ५ ॥ ६२ ॥

रागसारंग—राम कामरिपुचांप चढ़ायो । मुनि  
पुलक चान्द नगर नभ निरपि निसान बजायो ॥ १ ॥ जी  
पिनाक विनु नाक किये न्य सयहि विपाद यटायो । सी

जयमाल ३० । जलजकर करकमल जयमाला महुभा औ दूब की है । “एवं तयोक्ते तमवेक्ष्य किंचिद्विसंसिद्वाकमधुकमाला । ऋजुम-  
णामक्रिययैव तन्वी प्रत्यादिदर्शनमभापमाणा” इति रघुवंशे ॥ १ ॥ लह  
लहे आनंदयुक्त ॥ २ ॥ ३ ॥ इहां श्रीरघुनाथ तमाल हैं मरालपाति  
जयमाल है ॥ ४ ॥ खुनुस खांसी खई है क्रोध रूप छईवाली खांसी  
रोग है ॥ ५ ॥ निज निज वेद के आशीर्वाद के मंत्र से आशीर्वाद  
दिण ॥ ६ ॥ ९६ ॥

राग केदारा । लेहु री लोचननि को जाहु । कुंअर सुंदर  
सावरो सपि सुमुपि सादर चाहु ॥ १ ॥ पंडि हरकोदंड  
ठाठे जानु लंघित वाहु । रुचिर उर जयमाल राजति देत  
सुप सब काहु ॥ २ ॥ चितै चित हित सहित नप सिप  
अंग अंग निवाहु । मुकृत निज सियरामरूप विरंचि मतिहि  
सराहु ॥ ३ ॥ मुदित मन वर वदन सोभा उदित अधिक  
उछाहु । मनहुं दूरि कलंक करि ससि समर सूयो राहु ॥ ४ ॥  
अयन सुपमा अयन हरत सरोज सुंदर ताहु । वसत तुलसी-  
दास उर पुर जानकी को नाहु ॥ ५ ॥ ९७ ॥

लेहु ३० । हे सखि हे सुमुखि आदर लहित चाहु कई देखु ॥ १ ॥ जानु  
लंघित वाहु आजानु वाहु ॥ २ ॥ नख ते सिख लो जो सब अंग अंग  
का निवाह है अर्थात् सब अंग जस चाही तस है तिन को प्रीत सहित  
चित दै चितै के अपना मुकृत औ सियराम को रूप औ ब्रह्मा की बुद्धि  
की सराहना कर ॥ ३ ॥ हर्षित मन है औ उछाह करि श्रेष्ठ वदन की  
शोभा अधिक प्रकाशित है मानो शशि ने कलंक को दूरि करि समर में  
राहु को मारयो है इहां राहु पिनाक है ॥ ४ ॥ ५ ॥ ९७ ॥

राग सारंग । भूप के भाग की अधिकार्ड । टूयो धनुष  
मनोरथ पूज्यो विधि सब बात वनाई ॥ १ ॥ तव ते दिन दिन  
उदो जनक को जब ते जानकि जाई । अब यह व्याह सुफल



रवि सोच सर सोपे हैं । तव की दंप्रैआ तोपे तवके लोच  
भले अब की सुनैआ साधु तुलसीहू तोपे हैं ॥ ४ ॥ ८५ ॥

लाज इ० । लाज तो नहीं है पर राजा जे राड हैं ते युद्ध के ल  
साजि के क्रोधयुक्त भए हैं । आपुस में कहत हैं चांप चदायें त  
भयो यह विवाह बड़े खाए ते होइगो अस बोले मिथान से  
तरवार खींचि लिए औ सांग लिए चमकि रहे हैं अर्थात् राजा सर  
वाल वालिस मूर्खों ते मूर्ख तमकि त्रिदोखे हैं त्रिदोष के बस अक्र  
करि रहे हैं ॥ २ ॥ ३ ॥ रघुनाथ के प्रताप रूपी सूर्य ने सोच स  
सर को सोखि लिए ताते लोक रूप कमल औ चक्रवाक गन हयें ॥ १०१ ॥

जयमाल जानकी जलजकर लई है । सुमन सुम  
सगुन की बनाई मंजु मानहु मदन माली आपु निरसई  
॥ १ ॥ राज रूप लपि गुर भृसुर सुआसिनिन्दि समय जस  
की ठवनि भली ठई है । चली गान करत निसान  
गहगह लहलहे जोयन सनेह सरसई है ॥ २ ॥ इनो  
दुंदुभी हरषि वरपत फूल सुफल मनोरथ भो सुष सुचितई  
परजन परिजन रानी राड प्रमुदित मनसो अनूप राम  
रंग रई है ॥ ३ ॥ सतानंद सिष सुनि पाय परि पहिराई सा  
सिय पियडिय सोहत सो भई है । मानस ते निकसि विसा  
सुतमाल पर मानहु मराल पांति बैठी बनि गई है ॥ ४ ॥  
हितन को लाह की उछाह की विनाद मोद सोभा  
अधि नहीं अधि अधिकई है । याते विपरीति अनहित  
को जानि लीवी गति कहै प्रगट पुनस सापी पई है ॥ ५ ॥  
निज निज बंद को सप्रेम लोग छेम मई मुदित असीस वि  
विटुपनिदई है । अपि तदि काल की कृपास सीता दूतइ  
दुलसत द्विप तुलसी के नित नई है ॥ ६ ॥ ८६ ॥

राम लपन घर करि मुनिमपरपवारी । सो तुलसी प्रिय-  
मोहि लागि है ज्यों सुभाय सुत चारौ ॥ ४ ॥ १०० ॥

ऋषि इ० । वशिष्ठ जू औ मंत्री सब विचार में विचच्छन रहे पर  
अवरेव को काहू ने समुझि के न सुधारी ॥ १ ॥ सुरारी राक्षस ॥२॥  
कातारि विहल ॥ ३ ॥ ४ ॥ १०० ॥

जब ते लै मुनि संग सिधाये । राम लपन के समाचार  
सपि तब ते ककुभनपाये ॥१॥ विनु पानही गवन फल-भोजन  
भूमि सयन तरुछाहीं । सर सरिता जल पान सिमुन के  
साथ सुसेवक नाहीं ॥ २ ॥ कौसिक परमज्ञपाल परमहित  
समरथ सुपट सुचाली । बालक सुठि सुकुमार सकोची  
समुझि सोच मोहि आली ॥ ३ ॥ वचन सप्रेम सुभिवा के  
मुनि सब सनेह वस रानी । तुलसी चाहू भरत तेहि भौसर  
कहौ सुमंगल वानी ॥ ४॥१ ॥

जयते इ० सु० ॥१॥२॥सकोची कहिवे को यह भाव कि संकोच ते  
कहु न कहेंगे ॥ ३॥४॥१०१ ॥

सानुज भरत भवन उठि धाए । पितुसमीप सब समा-  
चार मुनि मुदित मातु पहि आए ॥ १ ॥ सजल नयन तन  
पुलक अधर फरकत लपि प्रीति सुहाई । कौसल्या लिए  
लाइ हृदय बलि कहौ कहु है सुधि पाई ॥ २ ॥ सतानंद  
उपरोहित अपने तिरहुतिनाथ पठाए । येम कुसल रघुवीर  
लपन की ललित पत्रिका ल्याए ॥ दलि ताडका मारि  
निसिचर मप राधि विप्रतिय तारी । दे विद्या लै गए  
जनकपुर हैं गुरु संग मुपारी ॥ ४ ॥ करि पिनाकुपन सुता  
खयंवर सजि नृप कटक बटोख्यौ । राजसभा रघुवर नृनाल

भयो जीवन. विभुभन विदित वडाई ॥ २ ॥ वार वार ऐहै  
पहुनाई राम लपन दोउ भाई । एहि आनंद मगन पुरवां-  
सिन्ह देहदसा विसराई ॥ ३ ॥ सादर सकल विलोकत,  
रामहिं काम कोटि छवि छाई । एह सुप समउ समान एक  
सुप क्यों तुलसी कहै गाई ॥ ४ ॥ ६८ ॥

भूप ३० । सुगम ॥ ९८ ॥ टिप्पणी—उदो कहैं उदय वृद्धि, जाई  
कहैं जन्मी ॥२॥ पुरवासी श्रीरघुनाथ वार२ पहुनाई में जनकपुर आंगे  
और हम लोग दर्शन करेंगे इस आनंद में देह की मुधि भूले हैं ॥ ३ ॥

राग सोरठ—मेरे बालक कैसे धीं मग निबहहिंगे । भूप  
पियास सीत स्रम सकुचनि क्यों कौसिकाहिं कहहिंगे ॥ १ ॥  
को भोरही उबटि अन्हवैहैं काठि कलेज दैहै । को भूपन  
पहिराड निछावरि करि लोचनसुप लैहै ॥२॥ नयन निमेषनि  
ज्यों जोगवै नित पितु परिजन महतारी । ते पठए रिपिसाय  
निसाचर मारन मधरपवारी ॥३॥ सुंदर सुठि सुकुमार सुको-  
मल काकपच्छर दोऊ । तुलसी निरपि हरपि उर लैहीं  
विधि ह्वै है दिन सोऊ ॥ ४ ॥ ६९ ॥

माता की उक्ति मेरे ३० । सकुचनि संकोच ते ॥१॥ २॥३॥ काक-  
पक्ष जुलुफ ॥ ४ ॥ ९९ ॥

रिपि नृप सोस ठगौरी सो डारी । कुलगुरु सचिव  
निपुन नेवनि भवरेव न समुझि सुधारी ॥ १ ॥ सिरिससुमन  
सुकुमार कुषर दोउ सूर सरोप सरारी । पठए विनहि सहाय  
पयादेहि कैलियान धनु धारी ॥ २ ॥ अति सनेह कातरि  
माता कहै लपि सपि बधन दुपारो । वादि वीर जननी  
जीवन जग छत्रजाति गति भारी ॥ ३ ॥ जो कहिहै फिरे



भयों जीवन. विभुषन विदित बडाई ॥ २ ॥ वार वार ऐह  
 पहुनाई राम लपन दोउ भाई । एहि आनंद मगन पुरवा-  
 सिन्ह देहदसा विसराई ॥ ३ ॥ सादर सकल विलोकत,  
 रामहिं काम कोटि छवि छाई । एह सुप समउ समाज एक  
 सुप क्यों तुलसी कहै गाई ॥ ४ ॥ ६८ ॥

भूप ३० । सुगम ॥ ९८ ॥ टिप्पणी—उदो कहैं उदय वृद्धि, जा  
 कहैं जन्मी ॥२॥ पुरवासी श्रीरघुनाथ वार२ पहुनाई में जनकपुर आयेगे  
 और हम लोग दर्शन करेंगे इस आनंद में देह की सुधि भूले हैं ॥ ३ ॥

राग सौरठ—मेरे बालक कैसे धौं मग निबहहिंगी । भूप  
 पिथास सोत स्रम सकुचनि क्यों कौसिकाईं कहहिंनि ॥ १ ॥  
 को भोरही उवटि अन्हवैहैं काठि कलिज दैहै । को भूपन  
 पहिराइ निछावरि करि लोचनसुप लैहै ॥२॥ नयन निमेषनि  
 ज्यों जोगवै नित पितु परिजन महतारी । ते पठए रिपिसाय  
 निसाचर मारन मपरपवारी ॥३॥ सुंदर सुठि सुकुमार सुको-  
 मल काकपच्छधर दोज । तुलसी निरपि हरपि उर लैहैं  
 विधि छै है दिन सोज ॥ ४ ॥ ६९ ॥

माता की उक्ति मेरे ३० । सकुचनि संकोच ते ॥१॥ २ ॥३॥ काह-  
 पक्ष जुलफ ॥ ४ ॥ ९९ ॥

रिपि नृप सोस ठगौरी सो डारी । कुलगुरु सचिव  
 निपुन नेवनि अवरवन समुक्ति सुधारी ॥ १ ॥ सिरिसमुमन  
 सुकुमार कुपर दोउ सूर सरोप सुरारी । पठए विनहि सहाय  
 पयादेहि केलिमान धनु धारी ॥ २ ॥ अति सनेह कातरि  
 माता कहै लपि मपि वधन दुपारी । वादि वीर जननी  
 जीवन जग छत्रजाति गति भारी ॥ ३ ॥ जो कहिहै फिरे

राग केदारा । मन में मंजु मनोरथ होरी । सो हर गौरि  
 साद एक ते कौसिक कृपा चौगुनो भो री ॥ १ ॥ पन परि-  
 ताप चापचिंता निसि सोच सकोच तिमिर नहिं घोरी ।  
 वि कुल रवि अवलोकि सभा सर हितचित वारिण बन  
 कसो री ॥ २ ॥ कुंभर कुंभरि सब मंगल मूरति नृप दोउ  
 रम धुरंधर धोरी । राज समाज भूरिभागौ जिन्ह लोचन  
 लह्यौ द्रक ठोरी ॥ ३ ॥ व्याह उछाह राम सीता को  
 कृत सकेलि विरंचि रचोरी । तुलसिदास जानै सोई यह  
 नृप जाके उर वसति मनोहर जोरी ॥ ४ ॥ १०४ ॥

मन ३० । मिथिला के सखिन की उक्ति है । री सखी जो  
 न में एक मनोरथ रखो अर्थात् श्री जानकी जी को विवाह को सो  
 र गौरी के प्रसाद औ कौसिक की कृपा ते चौगुनो भयो । भाव चारो  
 राज कुमारिन को व्याह देखिवे में आयो ॥ १ ॥ प्रतिज्ञा करिवे को  
 जो परिताप औ चांप की गरुआई की जो चिंता सोई रात्रि रही औ  
 तेहि करि जो सोच औ संकोच सोई तेहि राति की घनी अंधिआरी  
 रही तेहि करि हितनि के चितरूपी कमल सभारूपी तड़ाग में संपुटित  
 भए रहे ते रविकुल रवि जो श्रीराम तिन को देखि कै प्रफुलित भए  
 ॥ २ ॥ ३ ॥ ४ ॥ १०४ ॥

राजत राम जानकी जोरी । स्याम सरोज जलद सुंदर  
 वर दुलहनि तडित वरन तन गोरी ॥ १ ॥ व्याह समय सोछति  
 वितानतर उपमा कहुं न लहति मति मोरी । मनहु मदन  
 मंजुस मंडप महं छवि सिंगार सोभा सोउ घोरी ॥ २ ॥ मंगल-  
 समय दोउ अंग मनोहर यथित चूनरी पीत पिछोगे । जानक  
 कलस कहुं दित भांवरी निरपि रूप सारद भद्र भोरो ॥ ३ ॥  
 सुदित जनक रनिवास रहसवस चतुर नारि चितवहि टन

ज्यौं समुसरासन तोखौ ॥ ५ ॥ यों कहि सिधिल सने  
 बंधु दीउ अंबु अंक भरि लौन्हे । वार वार मुय चूँवि चाह  
 मनि वसत निक्खावरि कोन्हे ॥ ६ ॥ सुनत सुहावनि चाह  
 अवध घर घर आनंद वधाई । तुलसिदास रनिवास रहस  
 वस सपी सुमंगल गाई ॥ ७ ॥ १०२ ॥

सानुज ई० पद सुगम ॥ १०२ ॥

राग कान्हरा । राम लपन सुधि आई वाजै अवध  
 वधाई । कलित लगन लिपि पत्रिका उपरोहित के कर  
 जनक जनेस पठाई ॥ १ ॥ कन्या भूप विदेह की रूप की  
 अधिकाई । तासु खयंवर सुनि सवै आए देस देस के नृप चतुंग  
 वनाई ॥ २ ॥ पन पिनाक पवि सेरु ते गरुता कठिनाई । लोक-  
 याल महिपाल वान वान इत दसमुय सके न चांप चढाई  
 ॥ ३ ॥ तेहि समाज रघुराज के मृगराज जगाई । भंजि सग-  
 सन संभु जग जय कल कौरति तिय तियमनि सिय पाई  
 ॥ ४ ॥ पुर घर घर आनंद महा सुनि चाह सुहाई । मातु  
 मुदित मंगल सजै कहै मुनिप्रसाद भए सकल सुमंगल  
 माई ॥ ५ ॥ गुरुआयमु भंडप रच्यौ सय साज सजाई ।  
 तुलसिदास दसरथ वरात सजि पूजि गनेसहि चले निसान  
 यजाई ॥ ६ ॥ १०३ ॥

राग ई० । जनेस राजा ॥ १ ॥ २ ॥ प्रतिज्ञा किया भया जो  
 पिनाक है सो मेरु ते अधिक गुरु है औ वच ते अधिक कठिन है वान  
 मानापुर ॥ ३ ॥ तेहि समाज में रघुराज के मृगराज जो श्रीराम निज  
 को "तगावन भए भयो" उगाह बदाएत भए "धार पिछीन मरीं मैं  
 जानी" इत्यादि वचन ते किन्तो ने संभु को गगगन मोरि के जगत में  
 जप भाई पाई ॥ ४ ॥ इहां पाह को भय पाछिन है ॥ ५ ॥ इहां  
 गनेस के पूजन हेतु पंथ बनाए ॥ ६ ॥ १०३ ॥

की जो विनिआ सो रति काम ने पाई । शिला जो वालि तेहि के  
रति काम पाई "उच्छः कणश आदानं कशाद्यर्जनंशीलम्" इति  
कोशे । ४।१०६ ॥

जैसे ललित लपन लाल लोने । तैसिचै ललित उर्मिला  
पर लपत सुलोचन कोने ॥ १ ॥ सुपमा सारु सिंगारु  
करि वानक रचे है तेहि सोने । रूप प्रेम परमिति न  
कहि धियकिरही है मतिमौने ॥ २ ॥ सोभासौल सनेह  
वनो समउ केलि गृह गोने । देपि तियन के नयन सुफल  
तुलसिदास हुं के होने ॥ ३ ॥ १०७ ॥

जैसे इ० ॥ १ ॥ परम सोभा को सारांश औ शृंगार को सोना  
के तेहि सोना ते लपनलाल औ उर्मिला जू को बनाए । भाव  
॥ के सारांश ते लपनलाल को औ शृंगार के सारांश ते उर्मिला  
के रूप औ प्रेम के अवधि हैं ताते कही नहीं परति है । विशेष थकि  
ति मौन है रही है श्री उर्मिला जू को श्याम वरण है ताते शृंगार  
सारांश कहे "हिरण्यवर्णा सीता स्यान्मण्डवी पाटलप्रभा उर्मिला  
वर्णाभा छुतिकीर्तिः समप्रभा" इति नारदपञ्चरात्रे "पाटलः श्वेतरक्त-  
तोवर्णः" ॥२॥ कोलगृह कोहवर जावे को समै को शोभा शील  
सुंदर सनेह जो है ताको देखि के तियन के नैन सुफल भए तुल-  
सिदास को अब होनिहार है ॥ ३॥१०७ ॥

राग विलावल—जानकीवर सुंदर माई । इंद्र नीलमनि  
स सुभग अंग अंग मनोजनि बहु छवि छाई ॥ १ ॥ अरुन  
न अंगुली मनोहर नय दुतिवंत फलुक अरुनाई । खांज  
नि पर मनहु भौम दम वैठि अचल सुसदसि वनाई ॥ २ ॥  
न जानु उर चारु जडित मनि नूपुर पद कल सुपर  
छाई । पीत पराग भरे अलिगन जनु जुगल जलज लपि  
लोभाई ॥ ३ ॥ किंकिनि वानक कंज अयली नटु भरकत



तोरी । गान निसान वेद धुनि मुनि सुर वरपत सुन  
 कहे कोरो ॥४॥ नयनन यो फल पाइ प्रेमवस सबल  
 ईस निहारो । तुलसी जेहि आनंद मगन मन को  
 वरनै सुप सोरो ॥ ५ ॥ १०५ ॥

राज ६० ॥ १ ॥ व्याह के समे में दूल्ह दुलहिन मंगल में  
 हैं तिन की उपमा हमारी मति कतहू नहीं पावात है । मानो  
 सुंदर मंदप के तरे छवि रूप दुलहिन औ शृंगार रूप दूल्ह हैं ।  
 कहते नहीं वनत हैं क्योंकि इन की शोभा थोड़ी है अर्थात् मान  
 सम नहीं ॥ २ ॥ दुलहिन दूल्ह को सब अंग मंगल में औ  
 पीत पट को चूनरी के संग ग्रंथिबंधन भयो है ॥ ३ ॥ राम  
 ॥ ४ ॥ री सखी जेहि आनंद में मन ह्वि गयो ताको जिहा है  
 ॥ ५ ॥ १०५ ॥

दूल्ह राम सिया दुलही रो । घन दामिनि व  
 हरन मन सुंदरता नप सिप निवही रो ॥ १ ॥ व्याह ।  
 वसन विभूषित सपि अवलो लपि ठगि सि रहीरी ।  
 जनम लाहु लोचनफल है इतनोइ लह्यो आजु मही  
 सुपमा सुरभि सिंगार छीर दुहि मयन अमियमय दि  
 दहोरी । मथि मापन सियराम संवारे सकल भुवन ह्वि  
 महीरी ॥३॥ तुलसिदास जोरी देपत सुप- सोभा ॥ ४ ॥  
 जाति कहोरी । रूपरासि विरची विरंचि म  
 रति काम लहोरी ॥ ४ ॥ १०६ ॥

माना ७८ ॥ दूल्ह ६० ॥ १ ॥ २ ॥ सुखमा  
 को जगायत है काम रूप अदीर ने अपृत  
 जानी" इत्यादि व काव्यो ताको श्री  
 जय आदि पाई ॥ जौ पाठ है अर्थात्  
 गनेश के पूजन हेतु मंदप रासि मानो

डर ते ऊपर न गई । नीचे मुख  
 सुंदरताई चहुं दिशि छाव रही  
 तनेऊ आँ मोतिन की माला जो  
 मेघ विजुरी के बीचि इन्द्र धनुष है  
 नली आई है । इहां मेघ श्रीराम हैं औ  
 अनु यज्ञोपवीत है, मोती की माला बक-  
 टोड़ी औ ओठ सुंदर है औ दांतन  
 न कटिबे योग्य नहीं है । मानो कमल के  
 ग में विजुरी औ मृग की सुंदरताई लिए  
 नदिना को लिए बसे हैं । लाल रंग की  
 सुंदर नामा सुंदर लोचन टेढ़ी भौंह औ  
 नर पाई है, मानो नेत्र नहीं है मृग कमल है,  
 रन के समूह है, ने भ्रमरगण कछु हृदय में  
 तमल को घेरि रहें हैं । भाव नाते बदन नहीं  
 रक रूप पंगवा है ॥८॥ लाल चंचल नाई परि-  
 मिश्रण की मरजादा मियाई अर्धाङ्ग पहरत ते  
 ८ ।

। भुजंगि पर क्षमनी धारि घेरि छाये ।  
 न कर कमलनि संभुसरसन भारी । १ ।  
 । हु मछा धन प्रवल ताडका मारी । मुनि-  
 लपन की विधि बडि करहर तारी । २ ।  
 नयननि लावति घरीं नुनिदधु उधारी । करी  
 जीति सकल नृप घरीं है दिदेशकुमारी । ३ ।  
 । रति भृगुरति अति नृपति निजकर घटझारी ।  
 सायंग रावि रिय करिं दहत ननुदारी । ४ ।  
 । गि आभंद दिलोवति दधम सांजत हनुदारी ।  
 स आरतो उतारति केकरसन करदारी । ५ । ०८१

सिपरि-मध्य जनु जाई । गर्डे न उपर समीत नमित्तु  
 यिकसि चणूं दिसि रहो जोनाई ॥ ४ ॥ नाभि गभोर उ  
 रेपा वर उर भृगु चरनचिन्त सुपदाई । भुज प्रलंब भूत  
 अनेक जुत वसन पोत सोभा अधिकाई ॥ ५ ॥ जजोपरै  
 विचित्र हैममय मुक्ता माल उरसि मोहि भाई । कंटु तडि  
 विच जनु सुर पति धनु निकट वलाक पांति चलि पाई ॥  
 कंबु कंठ धिवुकाधर सुंदर क्यौं क्यौं दसनन की रुचिराई ।  
 पटुम कोस महं वसे वच्च मानो निज संग तडित भरन रुचि  
 लाई ॥ ७ ॥ नासिका चारु ललित लोचनभू कुटिल कचरि  
 अनुपम छवि पाई । रहे घेरि राजीव उमय मानो चंवरी  
 ककु हृदय डेराई ॥ ८ ॥ भाल तिलक कांचन किरीट नि  
 कुंडल लोण कपोलनि भाई । निरपहिं नारि निकर विदे  
 पुर निमि नृप की सरजाद मिटाई ॥ ९ ॥ सारद सेस सं  
 निसि वासर चिंतत रूप न हृदय समाई । तुलसिदास स  
 क्यौं करि बरने यह छवि निगम नेति कहि गाई ॥ १० ॥ १० ॥

जानकी ३० । सखी प्रति सखी की उक्ति अरी माई जानकी की  
 सुंदर हैं, मरकत मणि सम स्याम है औ सुंदर सब अंग अंगाने  
 अनेक कामन की छवि छाये रही है ॥ १ ॥ लाल चरण है अंगुरी मन  
 हरनिहारी है, नख दुतिवंत जे है ते कल्लु अरुनाई लिए हैं । मानो  
 कमल दलनि के ऊपर सुंदर अचल सभा बनाइके दश मंगल के तार  
 बैठे हैं ॥ २ ॥ जानु पुष्ट हैं औ सुंदर जंघा हैं औ चरण में मनि  
 जडित सुंदर सोने के नूपुर हैं सो सुंदर शब्द करत हैं सो नूपुर न  
 हैं पुष्पन के पीत धूरी में भरे भंवर के समूह हैं मानो युगल चरण हा  
 युगल कमल को देखि के लोभाय के रहि गए हैं ॥ ३ ॥ सोनन की  
 किकिनी नर्पा है कमल कलिन की पांति है । सो मरकत सिखर के पर  
 में मानो उत्पन्न भई है । इहां मरकत सिखर श्री रघुनाथ हैं, मध्यभा

कटिदेश है ते किंकिनी रूप कली सब डर ते ऊपर न गई । नीचे मुख  
करि विकसीं तिन के विकसने की सुंदरताई चहुं दिशि छाया रही  
॥४॥ उर में विचित्र सुवर्ण मय जनेऊ औ मोतिन की माला जो  
है सो हम को भाई, मानो स्याम मेघ विजुरी के बीचि इन्द्र धनुष है  
तेहि के निकट बकुलन की पांति चली आई है । इहां मेघ श्रीराम हैं औ  
पीत वसन विजुरी है, सुरपाति धनु यज्ञोपवीत है, मोती की माला बक-  
पांति है ॥ ६ ॥ शंखसम कंठ है, ठोड़ी औ ओठ सुंदर है औ दांतन  
की रुचिराई कैसे कै कहों अर्थात् कहिये योग्य नहीं है । मानो कमल के  
कोश में हीरागण अपने संग में विजुरी औ सूर्य की सुंदराई लिए  
बसे हैं वा सुंदर ललाई रूप तडिता को लिए बसे हैं । लाल रंग की  
विजुरी भी लिखी है ॥ ७ ॥ सुंदर नासा सुंदर लोचन टेडी भौंह औ  
जुलुफन ने उपमा रहित छवि पाई है, मानों नेत्र नहीं हैं युग कमल हैं,  
भौंह औ जुलुफ नहीं हैं भौरन के समूह हैं, ते भ्रमरगण कछु हृदय में  
ढेराइके युगल नेत्र रूप कमल कों घेरि रहे हैं । भाव ताते बैठत नहीं  
हैं । इहां डरावनिहारी पलक रूप पंखा है ॥८॥ लोल चंचल झाँई परि-  
छाही, निकर समूह, निमिकुल की मरजादा मिटाई अर्थात् एकटक ते  
निरखहि ॥ ९॥१०॥१०८ ।

राग कान्हरा । भुंजनि पर जननी वारि फेरि डारी ।  
क्यों तोख्यौ कोमल कर कमलनि संभुसरासन भारी ॥ १ ॥  
क्यों मारीच सुबाहु महा बल प्रबल ताडका मारी । मुनि-  
प्रसाद मेरे राम लपन की विधि बडि करवर टारी ॥ २ ॥  
चरन रेनु लै नयननि लावति क्यों मुनिब्रधू उधारी । कछो  
धौं तात क्यों जीति सकल नृप वरी है विदेहकुमारी ॥ ३ ॥  
दुसह रोप मूरति भृगुपति अति नृपति निकर पयकारो ।  
क्यों सौंप्यौ सारंग हारि हिय करिहै बहुत मनुहारी ॥ ४ ॥  
उमगि उमगि आनंद विलोकति वधुन सहित सुतचारी ।  
तुषसिदाम ेगमगन महतारी ॥५॥१०९॥

भुजन इ० हाथ चहुं आंर भुजन पर फिरायके जननी ने ने छावरी करी ॥ १ ॥ जय रघुनाथ सकोच बस उत्तर न दिए तब ही समाधान करति हैं कि मुनि के प्रसाद तें मेरे राम लखन विधाता ने अनेक अल्पायु टारी ॥ २ ॥ चरणरेणु को नयन लगाइये को यह भाव कि विरह करि नेत्र संतप्त रहे तिन को शी करति हैं। अब फेरि अधिक प्रेम करि पूछति हैं कि कैसे अहत्या तारी ॥ ३ ॥ खयकारी क्षयकारी, मनुहारी मनावन ॥ ४ ॥

मुदित मन आरती करै माता। कनक वसन मनि वा वारि वर पुलक प्रफुल्लित गाता ॥ १ ॥ पालागन दुलहिनि सिखावति सरिस सामु सत साता। देहिं असीस ते वरि कोटि लगि अचल होउ अहिवाता ॥ २ ॥ राम सीय हू देपि जुवाति जन करहिं परस्पर वाता। अब जान्यौ सति सुनो सपि कोविद बडो विधाता ॥ ३ ॥ मंगल गान निस नगर नभ आनंद कछ्यौ न जाता। चिरजीवहु अवधिस सुष सब तुलसिदाम सुपदाता ॥ ४ ॥ ११० ॥

इति श्री रामगीतावल्यां बालकाण्डः सम्पूर्णः ॥

मुदित इ०सु० ॥१॥ श्री कौशल्या जू दुलहिनिन को अपने स सातौ सै सामुन को पैलगी करिवे को सिखावति हैं ॥ २ ॥ विष बड़ा पण्डित है कहिवे को यह भाव कि समान जोड़ी मिलाय वि ॥ ३ ॥ नगर औ आकाश में मंगल गान होत है औ नगरे वाजत दोऊ ठौर को आनन्द कहा नहीं जात है, सब असीस देत हैं कि अधेश के सय सुभन तुलसीदास के सुखदाता चिरंजीवहु ॥४॥११०॥

दो० । मंगल श्री सरजू सरित, मंगल विपिन प्रमोद । मंगल स राम जू, जो मोदहु को मोद ॥ १ ॥ युगल चन्द परिकर युगल, च रेजु सिर नाय । हरिहर सम मतिमंदहं, दीका लई बनाय ॥ २ ॥ श्रीरामगीतावलीप्रकाशिकाटीकायां श्री सीतारामकृपापात्र श्रीसी रामीय हरिहरप्रसाद कृता बालकाण्डः समाप्तः । श्रीसीतारामाभ्यां नमः

श्री सीतारामाभ्यां नमः ।

## सटीक गीतावली--अयोध्या काण्ड ।

मङ्गलाचरण—दोहा ।

जिन के अंगप्रसंग ते , भूषित भूषन होत ।  
होत मुगंध मुगंधयुत , पीतो मोती होत ॥  
सोभाह सोभा लहत , जिन के अंग प्रसंग ।  
विधि हरिहर वानी रमा , उमा होहिं लखि दंग ॥  
तिन्हसियसियवल्लभचरन , वार वार सिर नाय ।  
चरनरेनु परि कर जुगल , नयनन माझ लगाय ॥  
अवध कांड टोका रचत , हरिहर मति अनुहारि ।  
विगरी सुमति सुधारि हैं , बालक अज्ञ विचारि ॥

—०—

मूल ।

राग सोरठ—नृप कर जोरि कछौ गुरु पाहीं । तुम्हरी  
कृपा असोस नाथ मेरी सदै महिस निवाहीं ॥१॥ राम होहिं  
जुवराज जिअत मेरे यह लालच मनमाहीं । बहुरि मोहि  
जियवे मरिवे की चित चिंता कछु नाहीं ॥२॥ महाराज  
भलो काज विचार्यौ वेगि बिलंब न कीजै । विधि दाहि ।

होइ तो सब मिलि जनमलाहु लुटि लौजै ॥ १ ॥ १ ॥  
 नगर आनंद वधावन कैकेइं विलपानी । तुलसी दास  
 माया बस कठिन कुटिलता ठानौ ॥ ४ ॥ १ ॥

टीका ।

नृप ३० । निवाही कहैं पूर्ण किए ॥ १ ॥ २ ॥ विधि दाहिने  
 तो या कथन ते मनोरथ के लाभ में संदेह जनाए ॥ ३ ॥ ४ ॥ १ ॥

राग गौरी — सुनहु राम मेरे प्रान पियारे । वारो स  
 वचन श्रुतिसम्मत जाते हैं विकुरत चरन तिहारे ॥ १ ॥ कि

प्रयास सब साधन को फल प्रभु पाये सो तौ नहीं सभारे ।  
 हरि तजि धर्मसौल भयौ चाहत नृपति नारि बस सरब

हारे ॥ २ ॥ रुचिर कांच मनि देपि मूढ ज्यों करतल ते चिंता  
 मनि डारे । मुनि जोचन चकोर ससि राघव सिव जोवनधर

सोउ न विचारे ॥ ३ ॥ जद्यपि नाथ तात मायाबस मुप-  
 निधान सुत तुम्हहि विसारे । तदपि हमहिं त्यागहु क्षि

रघुपति दीनदंभु दयाल मेरे वारे ॥ ४ ॥ अतिसय प्रीति विनीत  
 वचन मुनि प्रभु कोमल चित चलन न पारे । तुलसिदाम श्री

रही मातु हित को सुर भूमि विप्र भय टारे ॥ ५ ॥ २ ॥

श्री कौशल्या जी की उक्ति है सुनहु ३० । श्रुतिसम्मत जो फल  
 वचन है नाको पागे कई फूकि देउं कोरे ने कि जेहि सत्य वचन ही  
 तुम्हारे चरण ते हम बिदुरत हैं ॥ १ ॥ मय साधन को फल रूप में  
 महु भाप नाको पाए पर नहीं मर्यादा मरे ॥ २ ॥ ३ ॥ तात माया  
 पद तुम्हारी मायावन ॥ ४ ॥ ॥ वचन न पारे चले के इच्छा न हिंद  
 पर केरि विचारे गो अगिरे मूढ में गप्ट है ॥ ५ ॥ २ ॥

रहि अविद्ये मंदर ग्युभायक । श्री सुत तात वचन दा-

हन रत हननीउ तात मानिघे न्दायक ॥ १ ॥ वेद विदित  
 यह धानि तुम्हारी रघुपति मटा मना मुपदायक । रापहु  
 निह मरहाद निगम की हीं बलिजाउं धरहु धनु सायक ॥२॥  
 मोक कृप पुर परिहि मरिहि नृप मुनि मंटेम रघुनाथ सिधा-  
 यक । यह दूपन विधि तोहि होत अब राम चरन वियोग  
 उपजायक ॥३॥ मातु वचन मुनि भवत नयन जल कहु सुभाउ  
 जेनु नरतन पायक । तुलमिटाम मुरकाज न माथ्यौ तो तो  
 दोष छोड़ महि पायक ॥ ४ ॥ ३ ॥

रहि ३० । रहि चलिए कहें रहि जाइए ॥ १ ॥ रघुपति सदा संतन  
 के मुखदाना हैं यह धानि तुम्हारी वेद में प्रमिद्ध है वेद मिद्ध जो अपनी  
 मर्जाद है नाको राग्यहु भाव अज्ञोध्या वाली सब संत हैं निन को दुख  
 मनि देहु । मैं बलिजाउं धनुप धान को धरि देहु । भाव चलन के माज  
 सब उनारि टारहु ॥ २ ॥ अब व्याकुलता ते विधाता प्रति कहति हैं  
 कि रघुनाथ के जाइये वाला संदेश मुनि के सोक रूपी कूप में अयोध्या  
 वाली परंगे औ महाराज मरेंगे श्री रामचरण वियोग उपजावनि हारा  
 जो यह दूपन से तुम्ह कहें होत है ॥ ३ ॥ पायक कहें पाए के, आयक  
 कहें आए के ॥ ३ ॥ ४ ॥ टि०—पाठांतर होइ के स्थान मोहि ।

सोरठ—राम हीं कौन जतन घर रहिहीं । बार बार भरि  
 अंक गोद लै ललन कौन सो कहिहीं ॥ १ ॥ इहि चांगन  
 विहरत मेरे वारे तुम जो सङ्ग सिसु लीन्हें । वैसे प्रान रहत  
 सुमिरत सुत बहु विनीद तुम कौन्हें ॥ २ ॥ जिन्ह श्रवननि  
 कल वचन तिहारि मुनि मुनि हीं अनुरागी । तिन्ह श्रवनन्ह  
 वनगवन सुनति हीं मोते कवन अभागी ॥ ३ ॥ जुग सम  
 निमिष जाहि रघुनंदन वदन कमल विनु देपे । जौं तन रहे  
 वरप वीते बलि कहा प्रीति इहि लेपे ॥ ४ ॥ तुलसीदास ॥



वम थो हरि देपि विकल महतारो । गद्गद कंठ नयन  
फिरि फिरि आवन कहैउ सुरारी ॥ ५ ॥ ४ ॥

राम ३० । हे राम मैं कवने जतन ते घर में रहोगी ॥ १ ॥ २५  
इहां वरप पद ते चौदह वरप लेना ॥४॥ फिरि कहैं धारंपार ॥५॥

राग बिलावल—रहहु भवन हमरे कहे कामिनि । साद  
सामु चरन सेवहु नित जो तुम्हरे अति छित रह स्वामिनि  
॥ १ ॥ राजकुमारि कठिन कंठक मग क्यों चलिही मृदु  
गजगामिनि । दुमह वात वरपा छिम आभय कैसे मडि  
अगनित दिन जामिनि ॥ २ ॥ हीं पुनि पितु अज्ञा प्रभ  
करि ऐहैं वेगि मुनहु टुतिटामिनि । तुलसिदाम प्रभु शि  
यचन मुनि मडि न सकी सुरछित भइ भामिनि ॥३॥५॥

श्री जानकी नू पनि मृपुनाथ जी की उक्ति है । रहहु ३० । पूर्व  
स्वामिनी हैं यह कहिये को यह भाव कि तुम को अन्यत्र जान  
चाहिये ॥१॥ जामिनि गनि ॥२॥३॥५॥

रूपानिधाम मुजान प्रानपति सद्ग विपिन हीं चार्योगी ।  
रुह ते कोटि गुनित सुषमारग चलत माय सषु पार्योगी ॥१॥  
याके चरन कमल चार्योगी यम भय वात डोलार्योगी । म  
नकोरनि मुप मयंक छवि सादर पाम करार्योगी ॥२॥  
हठि मायरापिही मा कहें तो मद्र प्रान पठार्योगी । तुलसि  
दाम प्रभु विनु प्रोवत रहि क्यों फिरि पदन देवार्योगी ॥३॥

श्री जानकी नू की उक्ति है कृपा ३० । मयु मुप ॥ १ ॥ मां  
नेत्र कही अरोपन हीं सुरारो मुप हय मद्र के छवि हय शिव  
कहो मद्र विनु मद्र हीं कौन जानू । विपिन कौं  
मृदु हय कौं हीं विप वरिचही राम ॥ १ ॥ ५ ॥

कल विमल दुकूल मनोहर कंद मूल फल अमिय नाजु ।  
 प्रभुपद कमल विलोकिहैं छिनु छिनु इहि ते अधिक कहा  
 सुप समाजु ॥२॥ हौं रहौं भवन भोग लोलुप है पति कानन  
 कियो मुनि को साजु । तुलसिदास ऐसे विरहवचन सुनि  
 कठिन हियो विहयो न आजु ॥ ३ ॥ ७ ॥

कहो ३० ॥ १ ॥ अमिय नाजु अमृत सम अन्न ॥ २ ॥ ऐसे विरह  
 वचन अर्थात् तुम मुकुमारि हौं वन योग्य नहीं यह वचन सुनि के मेरो  
 हृदय कठिन है सो न फट्यो ॥ ३ ॥ ७ ॥

प्रिय निठुर वचन कहे कारण कवन । जानत हौ सब  
 के मन की गति मृदुचित परम कृपालु रवन ॥१॥ प्राननाथ  
 सुंदर मुजान मनि दीनबंधु जन आरति दवन । तुलसिदास  
 प्रभु पद सरोज तजि रहि हौं कहा करौंगी भवन ॥१॥८॥

मिय ३० । रवन स्वामी ॥१॥ मुजान मनि मुजानन में श्रेष्ठ ॥२८  
 टि०—आरति दवन दुख हरनेवाले ।

मैं तुम सी सतिभाय कही है । वृक्षाति और भांति करा  
 भामिनि कानन कठिन फलिस सही है ॥ १ ॥ जौं चलि हौ  
 तौ चली चलि ए वन सुनि सिय मन अवलंब लही है । वृद्धत  
 विरह वारि निधि मानहु नाह वचन मिसि बांह गही है ॥२॥  
 प्राननाथ के साथ चली उठि अवध सोक सरि उमगि वही  
 है । तुलसी सुनि न कवहु काहु कहुं तनु परिहरि परिछांह  
 रही है ॥ ३ ॥ ८ ॥

श्री रघुनाथ की उक्ति है, मैं ३० । हे भामिनी हम तुम से जम है  
 वस करी है, ताको तुम आं भांति फाटे पृथ्वि ही, वन में सांचे  
 कठिन फलिस है ॥ १ ॥ मानो विरह रूप समुद्र में वृद्धन में  
 ने वचन के पदाने ते बांह गहि लई है

पृथक् परिछांही को रहते काहू ने नहीं सुनी है । भाव तब जानकी  
कैसे रहें ॥ ३१० ॥

अबहिं रघुपति सह सौय चक्षो । विकल वियोग सो  
पुरतिय कहै अति अन्याउ अली ॥ १ ॥ कोउ कहै मनि  
तजत कांच लगी करत न भूप भली । कोउ कहै कु  
कुवेलि वैकेई दुप विपफलनि फली ॥ २ ॥ एक कहै व  
जोग जानकी विधि बड विपस बली । तुलसी कुलिसहु की  
कठोरता तेहि दिन दलकि दली ॥ ३१० ॥

जय ३० । हे सखी अति अन्याव है ॥ १ ॥ इहां कांच स्थाने  
सत्य वचन हैं; कुवेलि विपलता ॥ २ ॥ क्या जानकी जू बन जाने  
जोग्य हैं अर्थात् नहीं पर विधाता अति कठिन बलवान है । गोसाईं ने  
कहत हैं कि तेहि दिन और को को कहै कुलिसहु की कठोरता दर्नाई  
के फटि गई ॥ ३॥१० ॥

ठाठे हैं रूपन कमल कर जोरे । उर धकधकी न क  
फळ सकुचनि प्रभु परिहरत सवन तिन तोरे ॥ १ ॥ रूप  
सिन्धु अचलोकि बंधु तन प्रान रूपान वीर सी शीरे । ता  
यिदा मागिए मातु सो बनिहै वात उपाइ न शीरे ॥ २ ॥  
जाइ चरन गहि आयसु जाँच्यौ जननि कहत बहु भाँति  
निशोर । मिय रघुवर सेवा मुचि छोड़ी तौ जानिहौ स  
सुत मोरे ॥ कोजहु इछे विचार निरंतर राम समीप मुकू  
नहिं योरे । तुलसी मुनि मिय अने अकित धिता उछ  
मानो मिदग अधिक भय मोरे ॥ ४॥११ ॥

श्लोक ३० । मोक्षोप ने कष्ट करन नाहीं है हृदय में परमपरी  
कारे ने हि ननु या काउ में गव को तोरे दून मय म्याग करन है ॥१॥  
शान रूप जो शक्य है ताको वीर के गमान छारे भयान् दहन

गोले बंधु के तन को देखि के कृपा सिंधु बोले कि हे तात ! माता सो विदा मागिए और उपाय से न बनिई अर्थात् वे माता के कहे हम न ले चल्य ॥ २ ॥ मुनि छलरहित ॥३॥ एही विचार निरंतर करेहु कि घारे मुकून से रघुनाथ के निकट प्राप्ति नहीं होत है । यह सिखावन मुनि के चकित चित ते चलत भए । मानो अधिक के गाफिल भए से पच्छी उड़े ॥ ४ ॥ ११ ॥

राग सोरठ—मोको विधु वदन विलोकन दीजे । राम लपन मेरो यहै भेट वलिजाउं मोहि मिलि लीजे ॥ १ ॥ मुनि पितु वचन चरन गहे रघुपति भूप अंक भरि लीन्हे । अजहुं अवनि विहरति दरार मिस सो अवसर सुधि कोन्हे । पुनि सिरनाइ गवन कियो प्रभु मुरकित भयो भूप न जाग्यौ । करमचोर नृप पधिक मारि मानो रामरतन लै भाग्यौ ॥ ३ ॥ तुलसी रविकुल रवि रथ चढि चले तकि दिसि दपिन सुहाई । लोग नलिन भए मलिन अवधसर विरह विषम हिम आई ॥ ४ ॥ ११ ॥

श्री राम प्रति श्री चक्रवर्ती महाराज की उक्ति है मोको इ० ॥१२॥ कर्म रूप चार ने महाराज रूप पधिक को मारि कै मानो राम रूप रत्न को छुटि कै लै भाग्यो ॥ ३ ॥ गोसाईं जी कहत हैं कि सूर्य कुल के सूर्य जो श्रीराम सो रथ पर चढ़ि के सुंदर दक्षिण दिसा के ओर चलत भए । सूर्य दक्षिणायन में हिम रितु आवति है सो इहां कठिन विरह रूप हिम रितु आई । ताते अजोध्या रूप सर में, लोग रूप कमल मलीन होत भए ॥ ४ ॥ १२ ॥

राग बिलावल—कहो सो विपिन है धौं कतिक दूरि । जहां गवन कियो कुंवर कोसलपति वृष्कति सिधु पिय पतिहि विमूरि ॥ १ ॥ प्रान नाथ परदेस पयादेहि तजे तन तूरि । करों

पृथक् परिछांही को रहते काहू ने नहीं सुनी है । भाव तब जानकी  
कैसे रहें ॥ ३१९ ॥

अवहिं रघुपति सङ्ग सीय चन्नी । विकल वियोग सोन  
पुरतिय कहै अति अन्याउ अली ॥ १ ॥ कोउ कहै मनिय  
तजत कांच लगी करत न भूप भली । कोउ कहै कु  
कुवेलि वैकेई दुप विषफलनि फली ॥ २ ॥ एक कहै ब्र  
जोग जानकी विधि बड विषम वन्नी । तुलसी कुलिसहु  
कठोरता तेहि दिन दलकि दली ॥ ३ ॥ १० ॥

जब ३० । हे सखी अति अन्याव है ॥ १ ॥ इहां कांच स्वर्ग  
सत्य वचन है; कुवेलि विपलता ॥ २ ॥ क्या जानकी जू बन न  
जोग्य हैं अर्थात् नहीं पर विधाता अति कठिन बलवान है । गोसाईं ने  
कहत हैं कि तेहि दिन और को को कहै कुलिसहु की कठोरता दर्शा  
के फटि गई ॥ ३ ॥ १० ॥

ठाटै हैं लपन कमल कर जोरे । उर धकधकी न करत  
काहु सकुचनि प्रभु परिहरत सवन चिन तोरे ॥ १ ॥ छर्ग  
सिन्धु चयनोकि बंधु तन प्रान छपान वीर सी छोरें । तात  
विदा मागिए मातु सो वनिहै पात उपाइ न पीरे ॥ २ ॥  
जाइ चरन गहि आयसु जाच्यौ जननि कहत बहु भाति  
निछोरें । मिय रघुपर सीया मुचि छैही तौ जानिही सार  
मुत मोरे ॥ कोजहु इहै विचार निरंतर राम समीप मुह  
नहिं धोरें । तुलसी मुनि मिय चले चकित चित उछै  
मानो विहग अधिक भये मोरे ॥ ४ ॥ ११ ॥

ठाटै ३० । गंधोप ने काहु करत नारी है इतय में बहली है ।  
हारे ने कि नहु या काउ में मय को मोरे  
मान मन जो माया दे ताको वीर

मरकत कनक वरन मृदुगात ॥ १ ॥ अंसनि चाप  
 ट मुनिपट जटामुकुट विच नूतन पात । फ़ैरत  
 रोजनि सायक चोरत चितहि सहज मुसकात ॥२॥  
 र सुकुमारि सुभग मुठि राजति विनु भूपन नवसात ।  
 नरपि ग्राम वनितनि के नलिन नयन विगसित मानो  
 ॥ अंग अंग अगनित अनंग छवि उपमा कहत  
 कुचात । सिय समेत नित तुलसिदास चित वसत  
 पधिक दोउ भात ॥ ४ ॥ १५ ॥

मुख औ कमल सम नेत्र औ कोमल अंग हैं । मरकत वरण  
 कनक वरण श्रीलछिमन जी हैं ॥१॥ अंसनि चांप, कान्दन  
 नेपट वल्कलादि ॥२॥ सुभगमुठि अति सुंदरि भूपन नवसात  
 गर परम शोभा देखि कै ग्रामयुवतिन के नेत्र कमल विकसे  
 हाल में कमल विकसत । इहां सुखमा मूर्य हैं ॥३॥४॥१५॥

पि टैपि री पधिक परम सुन्दर दोऊ । मरकत  
 वरन काम कोटि कांत हरन चरन कमल कोमल  
 कुंअर कोऊ ॥१॥ कर सर धनु कटि निषंग मुनि-  
 सुभग अंग संग चंद्रवदनि बधू सुंदरि सुठि सोऊ ।  
 वेप किए सोभा सब लूटि लिए चित के चोर वय  
 तेचन भरि जोऊ ॥ २ ॥ दिनकर कुल मनि निहारि  
 ग्राम नारि परसपर कहैं सपि अनुराग ताग पोऊ ।  
 ध्यान सुधन जानि भानि लाभ सधन कृपिन ज्यों  
 हिय सुगेह गोऊ ॥ ३ ॥ १६ ॥

धुन की उक्ति है देखि ३० । कलधौत स्वर्ण ॥ १ ॥ जोऊ  
 रूपर कहति हैं कि हे सखी इन दोऊ कुंअर रूप मणिन  
 रूप ताग में पोहु यह ध्यान को सुंदर धन जानि कै अति

चरन सरोरुह धूरि ॥ २ ॥ तुलसिदास प्रभु प्रिया वचन सुनि  
नौरज नयननीर आए पूनि । कानन कहां अबहि सुनु सुंदरि  
रघुपति फिरि चितये हितभूरि ॥ ३ ॥ १३ ॥

श्रीराम प्रति श्रीजानकी जी की उक्ति है कहो ३० । श्रीजानकी  
जू मिय पति जो श्रीराम तिन सो विमूरि कहैं बिलखाय के वृत्ति है  
हे कोशलपतिकुंवर जहां को गमन कियो हौं सो वन घौं केतिक धूरि  
है हम ते कहो ॥ १ ॥ हे प्राणनाथ सब सुख को नृनवत तोरि के तन  
औ परदेस को पयादे चले श्रमित भए होहुगे ताते तरतर विलस  
कीजिए मैं बयारि करौं औ चरण कमल की धूरि शारों । भाव जान भन  
उतरि जाय ॥ २ ॥ मिया के यह वचन सुनि के प्रभु के नैन कमल में  
जल भरि आए । कहत भए कि हे सुंदरि सुनो अबही वन कहां है अन  
काहि के अति हित से फेर देखत भए ॥ ३ ॥ १३ ॥

फिरि फिरि राम सीयतन हेरत । त्रपित जानि लल  
लेन लपन गए भुज उठाय ऊंचे चट्टि टेरत ॥ १ ॥ अबनि  
कुरंग विहग टुम डारनि रूप निहारत पलक न प्रेरत । सगन  
न डरत निरपि कर कमलनि सुभग सरासन सायक फेरत  
॥ २ ॥ अवलोकत मग लोग चहुं दिसि मनहुं चकोर चंद्रमहि  
घेरत । ते जन भूरिभाग भूतल पर तुलसी राम पधिकपद  
जे रत ॥ ३ ॥ १४ ॥

फिरि ३० । श्रीगाम जू ऊंचे पर चट्टि के भुजा उठाय लपन लान  
को टेरत हैं औ श्रीजानकी जू के ओर फिरि फिरि देखत हैं ॥ १ ॥  
भूमि ते हरिन औ वृक्षन के टारन ते पक्षी रूप को एक टक देखत हैं ।  
यद्यपि श्रीराम जू फर कमलनि में सुंदर भनुप धान फेरत हैं तथापि  
ऐसे मगन हैं कि देखि दरत नहीं हैं ॥ २ ॥ जैसे चन्द्रमा को चकोर  
घेरत हैं नैसे मग लोग चहुं ओर ते देखत हैं अर्थात् पलक रांकि ॥३॥

नृपतिकुंभर राजत मग जात । सुंदर वदन सरोरु

लोचन मरकत कनक वरन मृदुगात ॥ १ ॥ अंसनि चाप  
 तून कटि मुनिपट जटामुकुट विच नूतन पात । फेरत  
 पानि सरोजनि सायक चोरत चितहि सहज मुसकात ॥२॥  
 संग नारि सुकुमारि मुभग मुठि राजति विनु भूपन नवसात ।  
 मुपमा निरपि ग्राम वनितनि के नलिन नयन विगसित मानो  
 प्रात ॥ ३ ॥ अंग अंग अगनित अनंग हवि उपमा कहत  
 सुकवि सकुचात । सिय समेत नित तुलसिदास चित वसत  
 किशोर पद्यिका दोउ भात ॥ ४ ॥ १५ ॥

सुंदर मुख औ कमल सम नेत्र औ कोमल अंग हैं । मरकत वरण  
 श्रीराम औ कनक वरण श्रीलछिमन जी हैं ॥१॥ अंसनि चांप, कान्हन  
 पर धनु मुनिपट वल्कलादि ॥२॥ सुभगमुठि अनि सुंदरि भूपन नवसात  
 सोरह मृंगार परम शोभा देखि कै ग्रामयुवतिन के नेत्र कमल विकसे  
 जैसे प्रातःकाल में कमल विकसत । इहां सुखमा सूर्य है ॥३॥४॥१५॥

तूँ देपि देपि री पद्यिक परम सुन्दर दोऊ । मरकत  
 कलधौत वरन काम कोटि कांति हरन चरन कमल कोमल  
 अति राजकुंअर कोऊ ॥१॥ कर सर धनु कटि निषंग मुनि-  
 पट सोहैं सुभग अंग संग चंद्रवदनि वधू सुंदरि सुठि सोऊ ।  
 तापस वर वैप किए सोभा सब लूटि लिए चित के चोर बय  
 किसीर लोचन भरि जोऊ ॥ २ ॥ दिनकर कुल मनि निहारि  
 प्रेम मगन ग्राम नारि परसपर कहैं सपि अनुराग ताग पोऊ ।  
 तुलसी यह ध्यान सुधन जानि भानि लाभ सघन कृपिन ज्यों  
 सनेह सो हिय सुगह गोऊ ॥ ३ ॥ १६ ॥

ग्राम वधुन की उक्ति है देखि इ० । कलधौत स्वर्ण ॥ १ ॥ जोऊ  
 देखु ॥२॥ परस्पर कहति हैं कि हे सखी इन दोऊ कुंअर रूप मणिन  
 को अनुराग रूप ताग में पाहु यह ध्यान को सुंदर धन जानि कै अति



लाभ मानि कै हृदय रूप सुंदर गृह में सनेह पूर्वक उपाठ जैसे हाथ  
धन उपावत है ॥ ३ ॥ १६ ॥

कुंवर सांवरो री सजनी सुंदर सब अंग । रोम रोम ही  
निहारि आलिवारि फेरि डारि कोटि भानुसुभन सरदसौं  
कोटिअनंग ॥ १ ॥ वामअंस लसतचाप मौलि मंजु लटकलान  
सुचिसर कर मुनिपट कटितट कसे निधंग । आयत उर बाहु  
नैन सुप सुषमा को लहै न उपमा अवलोकि लोक गिरा मति  
गति भंग ॥ २ ॥ यौं कहि भई भगन वाल विधकी सुनि युवति  
जाल चितवत चले जात संग मधुप मृग विहंग । वरनो किनि  
तिन्ह की दसहि निगम अगम प्रेमरसहि तुलसो मन बदन  
रंगे सचिर रूप रंग ॥ ३ ॥ १७ ॥

कुंवर ३० । री सजनी यह सांवरो कुंवर सब अंग ते सुंदर हैं ।  
आली इन की रोम रोम की छवि देखि कै कोटिन अश्वनी कुमार औ  
सरद पूनों के चंद्र औ कोटिन काम कौं फेरि कै नेवछावरि करि हा  
॥ १ ॥ वाम कांधे में धनु औ माथे में पवित्र जटन कै समूह औ हा  
में चाण सोभत है । बलकल पहिरे हैं औ कटिदेश में तरकस फंसै  
छाती बाहु औ नयन विसाल हैं औ मुख की परम शोभा को फोड़  
नहीं पावत है । लोक में उपमा खोजि कै सारदा की मति औ गतिना  
ई है "मति भारती पंगु भई जो निहारि विचारि फिरी उपमान पौं  
॥ यह कहनिहारी वाला अस कहि प्रेम में दूवि जात भई कै  
कहनि और सप युवती सुनि थकिन हांत भई औ भ्रमर ह  
चितवत संग में चले जात हैं । मन रूप बसन कौं सुंदर रूप रंग है  
। तिन्ह की दशा फंस वरनों काहे तै कि वेदन को भी अगम प्रे  
॥ ३ ॥ १७ ॥

राग कल्याण । टेपु कोउ परम सुंदर सपि बटोही ।  
वरन करुन वारिज वरन भूपमुत रूपनिधि

नरपि हीं मोहो ॥ १ ॥ अमल मरकत स्याम शील सुपमा  
 ताम गौर तन सुभग मोभा मुमुक्षु जोही । जुगल विच नारि  
 सुकुमारि मुठि मुंदरी इंदिरा इन्दु हरि मध्य जनु सोही ॥२॥  
 हरनि वरधनु तीर रुचिर कटि तूनौर धीर सुर सुपद मर्दन  
 प्रवनिद्रोहो । अंबुजायत नैन वदन छवि बहु मयन चारु  
 चितवनि चतुर लेत चित पोहो ॥ ३ ॥ वचन प्रिय मुनि  
 सवन राम करुनाभवन चितै सब अधिक हितसहित ककु  
 पोही । दाम तुलसी नैहविवम विमरी टेह जान नहिं आपु  
 तेहि कान्त धीं कोही ॥ ४॥१८ ॥

देसु इ० लाल कमल के रंग कोमल चरण तें जे भूमि में चलत  
 हैं ते रूपनिधि भूपसुतन्ह को देखि में मोहि गई । १ ॥ हे सुमुखि  
 निर्मल मरकत सम स्याम आं शील परम शोभा के धाम एक कुंवर  
 आं गौर तन सुंदर शोभा वालो दूसरो कुंवर कों देसु आं दूनों कुंवरन  
 के बीच अति सुंदर सुकुमारि नारि हैं मानों चंद्रमा आं विष्णु के मध्य  
 में लक्ष्मी शोभी ॥ २ ॥ तूनौर तरकस अवनिद्रोही राक्षसादि अंबु-  
 जायत नयन कमलवत् विस्तृत नेत्र, लेत पोही गूथि लेत ॥ ३ ॥ सब  
 कों चितए पर अधिक हित सहित ओहि कहनिहारि कों कोही कहैं  
 कवन हीं ॥ ४॥१८ ॥

राग केदारा । सपि नीके कौ निरपि कोउ मुठि सुंदर  
 वटोही । मधुर मूरति मन मोहन जोहन जोग वदन सोभा-  
 सदन देपि हीं मोहो ॥ १ ॥ सांवरे गोरे किशोर सुर मुनि  
 चितचोर लभय अंतर एक नारि सोही । मनहु वारिद  
 विधु बीच ललित अति राजति तडित निज सहज विछोही  
 ॥ २ ॥ उर धीरज धरि जनम मुफल करि मुनहि सुमुपि  
 जिनि विकल होही । को जानै कौने सुकृत लक्ष्मी है लोयन

लाहु ताही तें वारहि वार कहतिहीं तोही ॥ ३ ॥ सवित्री  
 सुसीप दई प्रेम मगनभई सुरति विसरि गई आपनी ओही।  
 तुलसी रही है ठाठी पाहन गठीसी काठी न जाने कहां ॥  
 आई कौन को कोही ॥ ५ ॥ १८ ॥

सखी ३० । हे सखी भली भांति करि देखु कोऊ अति सुंदर  
 बटोही हैं । इन मनमोहन पथिकन की सोहावनि मूरति देखिबे योग्य  
 हैं । शोभा के सदन इन के मुख हैं जाके देखि के मैं मोहि गई हों ॥ १ ॥  
 दोउन के बीच एक नारि सोहि रही है मानों भेष औ चन्द्रमा के बीच  
 मैं अपनो चंचल सुभाव त्यागि कै अति सुंदर विजुरी सोहि रही हों ॥ २ ॥  
 हे सुमुखि सुनु विकल मति होंदि धीरज धरि के अपना जन्म मुक्त  
 करु जो कौने सुकृतन से नेत्रन ने यह लाभ पायो है । ताते मैं वारि  
 वार तोसो कहति हों ॥ ३ ॥ पाहन सी गढ़ि काही गढ़ी भई पापर  
 की मूरति सी कौन की कोही केहि की हौ औ कौन हौ । ४ ॥ १९ ॥

भाई मन के मोहन जोहन जोग जोही । धोरिहि बयस  
 गोरे सांवरे सलोने लोने लोयन ललित विधु वदन बटोही ॥  
 सिरनि जटा मुकुट मंजुल सुमनजुत तैसियै लसति नव  
 पल्लव घोही । किये मुनिवेष वौर धरे धनु तून तोर साँई  
 मग कोहैं लपि परे न मोही ॥ २ ॥ सोभा कौं साँची संवारी  
 रूप जातरूप टारि नारि विरची विरंचि संग सो सोही ।  
 राजत रुचिर तन सुंदर स्रम के कन चाहे चकचौधी लागै  
 का कहैं तोही ॥ ३ ॥ सनेह सियिल सुनि वचन सकल  
 सिय चितई अधिकहित सहित ओही । तुलसी मानहु प्रभु  
 कृपा कौ मूरति फिरि हरि कै हरपि द्विय लियो है पोही  
 ॥ ४ ॥ २० ॥  
 भाई ३० । हेभाई देखिबे जोग्य मन के मोहन बटोही फो मैं देखी ।

ते वटोही कैसे हैं कि जिन्ह की अवस्था थोड़ी है, एक सलोने गोरे हैं, एक लोने सांवरे हैं, सुंदर आंखें हैं, चन्द्रसम मुखें हैं ॥१॥ नव पल्लव खोही नए पत्रननुत ढांगी, को हैं कान हैं ॥ २ ॥ ब्रह्मा ने शोभा को सांचा बनाइकै तामे रूप रूपी सोना को ढारि के नारि बनाई सो नारि संग में सोहि रही है, चाहे कहें देखे ॥ ३ ॥ वह जो सनेह ते शिथिल है ताकी सब बातें श्रीजानकीजू मुनि के अधिक प्रीति-सहित वाको देखत भई । मानो जानकीजू न देखीं प्रभु की कृपा की मूरति ने फिरि के देखि हरपि के चित्त को गूंधि लई । ४ ॥ २० ॥

सपि सरद विमल विधु वदन वधूटी । ऐसी ललना सलोनी न भई न है न होनी रतै रची विधि जो छोलत छवि छूटी ॥१॥ सांवरे गोरे पथिक बीच सोइति अधिक तिहुं तिभुअन सोभा मानहु लूटो । तुलसी निरपि सिय प्रेमवस कहें तिय लोचन सिमुन्ह देहु अमिय घूटी ॥२॥२१ ॥

सखी ३० । हे सखी निर्मल सरद के चन्द सम या वधूटी को मुख है ऐसी सलोनी ललना न भई है न कहें है न होनिहार है, विधाता ने याके सुधारन में जो छवि छूटि परी ताते रति को बनाई ॥ १ ॥ तिहुं कहें तीनों जन लोचन सिमुन्ह देहु अमिय घूटी, लोचन रूप बालकन के पथिक रूप रूपी अमृत को घांटी देहु ॥ २ ॥ २१ ॥

सोहैं सांवरो पथिक पाछे ललना लोनी । दामिनि वरन गोरी लपि सपि तिन तोरी बोती है वय किमोरो जीवन होनी ॥ १ ॥ नीके कै निकाई दंपि जनम सुफल लपि हम सी भूरि भागिनि नभ न छीनो । तुलसी स्वामो स्वामिनि जोहि मोही है भामिनि सोभा सुधा पियं करि अंपियां दोनी ॥ १॥२२ ॥

सांठें ३० सु० ॥१॥ नभ न छोनी न आकाश न पृथ्वी में, अंविआं दोनी आंखिन को दोना बनाय ॥ २ ॥ २२ ॥

पथिक गोरे सांवरे सुठि लोने । संग सुतिय जाके तन  
 ते लहौ है दुति स्वर्न सरोरुह सोने ॥ १ ॥ वय किसो  
 सरि पार मनोहर वयस सिरोमनि होने । सोभा सुधा प्रावि  
 अंचवहु करि नयन मंजु मृदु दोने ॥ २ ॥ हेरत हृदय हरत  
 नहिं फेरत चारु विलोचन कोने । तुलसी प्रभु किधौं प्रभु  
 प्रेम पढे प्रगट कपट विनु टोने ॥ ३ ॥ २३ ॥

पथिक इ० ॥ १ ॥ किशोर अवस्था रूप नदी से पार है के मनो-  
 हर युवा अवस्था होनिहार है ॥ २ ॥ सुंदर नयनन सो तिरछे देखती  
 मन को हरिलेत है फेर फेरत नहीं । गोसाईं जी कहत हैं कि प्रभु कैसों  
 प्रभु के प्रेम ने विना कपट के टोना प्रगट पड़े हैं । भाव टोना कपट करि  
 छिपाय के किया जात है । इहां सायुहे मनहरे ताते प्रगट कहे ॥ ३ ॥ २३ ॥

मनोहरता को मानो ऐन । स्यामल गौर किसोर पथिक  
 दोउ सुमुपि निरपि भरि नैन ॥ १ ॥ बीच वधू विधुवदनि  
 विराजति उपमा कहुं कोउ हैन ॥ २ ॥ मानहुं रति रितुना  
 सछित सुनिवेष वनायौ है मैन ॥ ३ ॥ किधौं सिंगार सुपमा  
 सुप्रेम मिलि चले जग चित वित लैन । अहुत चई किधौं  
 पठई है विधि मग लोगनि सुप दैन ॥ ४ ॥ सुनि सुचि सरल  
 सनेह मुहावने ग्राम वधुन कौ वैन । तुलसी प्रभु तरु तर  
 विलंब किये प्रेम कनौडे कौन ॥ ५ ॥ २४ ॥

मनो इ० सु० ॥ १ ॥ हैं नही है ॥ २ ॥ कैधौं शृंगार रस औ पर  
 शोभा औ प्रेम मिलि के जगत के चित रूपी धन को लेइवे को चले हैं ।  
 शृंगार श्रीराम जू सुखमा श्रीजानकी जू प्रेम श्रीलछिमन जू हैं । कैधौं  
 विधाता ने मगलोगन के सुख देखे हेतु अद्भुत इन्ह तीनों मूर्ति के  
 फकर करि पठए हैं वा विचित्र वेदपई ॥ ३ ॥ प्रेम करि के कनौड़ा कौं  
 नहीं भए भाव सप के भए ॥ ४ ॥ २४ ॥

वय किसोर गोरे सांवरे धनु वान धरे हैं । सब अंग सहज मुहावने राजिव जीते नैयननि वदननि विधु निदरे हैं ॥ १ ॥ तून मुमुनिपट कटि कसे जटा मुकुट करे हैं । मंजु मधुर मृदु मृगति पानछौ न पायन कैसे धौं पथ विचरे हैं ॥ २ ॥ उभय बीच वनिता वनी लपि मोहि परे हैं । मदन सप्रिया सप्रिय सपा मुनि वेपु बनाए लिये मन जात हरे हैं ॥ ३ ॥ सुनि जहं तहं देपन चले अनुराग भरे हैं । राम पधिक छवि निरपि कै तुलसी मगलोगनि धामकाम विसरे हैं ॥ ४ ॥ २५ ॥

वय ३० । राजीव कमल, निदरे हैं निरादर किए हैं ॥ १ ॥ सुंदर मनोहरमूर्ति कोमल ताहू में पनही पगन में नहीं ॥ २ ॥ दोउन के बीच में वनिता वनी है अस हमें को लखि परत हैं कि रतिसहित वसंत सहित काम मुनिवेष बनाये सब के मन हरे लिए जात हैं ॥ ३ ॥ २५ ॥

कैसे पितु मातु कैसे ते प्रिय परिजन हैं । जगजलधि ललामं लोने लोने गोरे श्याम जिन्ह पठये ऐसे बालकन बन हैं ॥ १ ॥ रूप के न पारावार भूप के कुमार मुनिवेष देपत लोनाई लघु लागत मदन हैं । सुपमा की मूरति सी साथ निसिनाथमुषी नप सिप अंग सब सोभा के सदन है ॥ २ ॥ पंकज करनि चांप तीर तरकस कटि सरदसरोजहू ते सुंदर चरन हैं । सीता राम लपन निहारि ग्राम नारि कहै हरि हरि हरि हेली हिय के हरन हैं ॥ ३ ॥ प्रानहुं के प्रान से मुजीवन के जीवन से प्रेमहू के प्रेम रंक कृपिन के धन हैं । तुलसी के लोचन चकोरनि के चंद्रमा से आछे मन मोर चित चातक के घन हैं ॥ ४ ॥ २६ ॥

कैसे ३० । जगत रूप समुद्र के रत्न ॥ १ ॥ इहां पारावार अवधि

के अर्थ में है अर्थात् रूप की सीमा नहीं है । निमिनायमुखी चन्द्रमुखी  
 ॥ २ ॥ सरद्वारांज सरद के कमल, हेरि हेरि हेरि हेली कई रे कर्त  
 देसु देसु देसु इशां भनि हर्ष में वीष्मा । ३। रंक कृपिन के ददि हीं  
 के, मन रूप मोर औ भित रूप चातक के आछे कई नवीन सनल के  
 हैं ॥ ४२६ ॥

राग भैरव । टपि है पत्रिक गोरे सांवर सुभग हैं। मुक्ति  
 सलोनी संग सोएत सुमग हैं ॥ १ ॥ सोभा सिन्धु सभव  
 नौके नौके नग हैं । मातु पितु भागवस गए परी फग है  
 ॥ २ ॥ पायन पनघ्नौ न मृट्ट पंकज से प्रग हैं । रूप की  
 मोहनी मेलि मोहे थग जग हैं ॥ ३ ॥ सुनिवेष धरे धनु  
 सायक सुलग हैं । तुलसी हिये लसत लोने लोने डग है  
 ॥ ४॥२७ ॥

देखि इ० सु० ॥१॥ शोभा समुद्र से उत्पन्न आछे आछे मणि हैं।  
 माता पिता के भागवस फांदा में परि गए हैं ॥ २ ॥ पायन चरन  
 में मेलि डारि, अग जग स्थावर जंगम ॥ ३ ॥ सुलग हैं सुंदर लाग  
 हैं । डग फाल जाको कोक देश में डेग कहत हैं ॥४॥२७ ॥

पथिक पयादे जात पंकज से पाय हैं । मारग कठि  
 कुस कांठक निकाय हैं ॥ १ ॥ सपि भूषे प्यासे पै चलत धित  
 चाय हैं । इन्ह के सुकृत सुर संकर सहाय हैं ॥ २ ॥ रूप  
 सोभा प्रेम कौसे कमनौय काय हैं । सुनिवेष किये किर्षी  
 ब्रह्म जीव माय हैं ॥३॥ वीर वरिचार धीर धनुधर राय हैं।  
 दसचारि पुरपाल आलि उरगाय हैं ॥ ४ ॥ मग लोग  
 दैपत करत हाय हाय हैं । वन इन की तो वाम विधि के  
 वधन हैं ॥ ५ ॥ धन्य ते जे मीन से अवधि अबु आय हैं।  
 प्रभु सो जिन्हूँ के भले भाय हैं ॥ ६॥२८ ॥

पथिक इ० निकाय ममूह ॥ १ ॥ चाय आनन्द ॥ २ ॥ रूप  
 श्रीराम जी गोभा श्रीजानकी जू प्रेम श्रीलछिमन जू माय माय ॥ ३ ॥  
 आय राजा है, सखा चाँदहो भुवन के पालक उरगाय है परमेश्वर है ।  
 ॥ ४ ॥ इन को जो वन तो विधाना बनाय के वाम है ॥ ५ ॥ आय है  
 यह जो अवधि रूपी जल है नेहि में जे मीन से है रहे हैं ते धन्य हैं  
 आ जिन्ह के मले भाव इन से हैं तेऊ धन्य ॥ ६ ॥ २८ ॥

राग असावरो । भजनी हैं कोउ राजकुमार । पंथ चलत  
 मृदु पद कमलन दोउ सील रूप आगार ॥ १ ॥ आगे राजिव  
 नैन स्याम तन सोभा अमित अपार । डारौं वारि अंग  
 अंगनि पर कोटि कोटि सत मार ॥ २ ॥ पाछे गोर किसोर  
 मनोहर लोचन वदन उदार । कटि तूनीर कसे कर सर धनु  
 चले हरन छितिभार ॥ ३ ॥ जुगल बीच सुकुमारि नारि  
 एक राजति विनहिं सिंगार । इंद्रनील हाटक मुकुतामनि  
 जनु पहिरे महि हार ॥ ४ ॥ अवलोकहु भरि नयन बिकल  
 जिनि होहु करहु सुविचार । पुनि कह यह सोभा कहँ  
 लोचन देख गेह संसार ॥ ५ ॥ सुनि प्रिय बचन चितै हित  
 कै रघुनाथ कृपा सुप सार । तुलसिदास प्रभु हरे सबन्हि के  
 मन तन रहि न संभार ॥ ६ ॥ २९ ॥

भजनी इ० सु० ॥ १ ॥ २ ॥ उदार कहँ सुंदर ॥ ३ ॥ इहां मरकत  
 मनि श्रीराम, सोना श्रीलछिमन जी, मोती श्रीजानकी जी हैं ॥ ४ ॥ ५ ॥  
 ॥ ६ ॥ २९ ॥ टि०—इंद्रनील=मरकत मनि, हाटक=सोना । मुकुतामनि मोती ।  
 राग टोडी । देपु गी सपी पथिक नप सिप नीके हैं ।  
 इंद्रीले पीने कमल से कोमल कतेवरनि तापसहूँ वेप किये  
 काम कोटि फीके हैं ॥ १ ॥ सुकृत सनेह सील सुपमा सुप  
 सकेलि बिरचे बिरंचि किधौं अमिय अमोके हैं । रूप की सी



दामिनी सुभामिनी सोधति संग उमहुं रमा ते चाहे  
 अंग तोके हैं ॥ २ ॥ वनपट कसे कटि तून तीर धनु  
 धीर वीर पालक कृपाल सब ही के हैं । पानघौ न  
 सरोजनि चलत मग कानन पठाए पितु मातु कैसे  
 हैं ॥ ३ ॥ आली अयचोकि लेहु नयननि को फल एहु  
 के सुलाभ सुप जीवन से जीके हैं । धन्य नर नारि  
 निहारि विनु गाहकहूं आपने २ मन मोल विनु वीरे  
 ॥ ४ ॥ विबुध वरपि फूल हरपि हिये कहत  
 मगन सनेह सियपीके हैं । जोगी जन अगम दरस  
 पावँरनि मुदित वचन सुनि सुरप सचो के हैं ॥ ५ ॥ श्री  
 के सुबालक से लालत सुजन मुनि मग चारु चरित हर  
 राम सी के हैं । जोग न विराग जाग तप न तीरथ त्याग  
 अनुराग भाग पुले तुलसी के हैं ॥ ६ ॥ ३० ॥

देखि ३० सु० । रूप की सी दामिन दामिन की ऐसो रूप है ॥  
 वनपट बल्कलादि ॥ ३ ॥ वीके हैं विकाए हैं ॥ ४ ॥ सियपीके सनेह  
 ग्रामलोग मगन हैं और देवता हिय में हरपि फूल वरपि कहत हैं ॥  
 जन को जो दरस अगम सो पावँरन पायो । यह देवतन के ने नर  
 मुनि के इन्द्र औ इन्द्रानी मुदित भए ॥ ५ ॥ मग के सुन्दर की  
 श्रीराम श्रीजानकी जी के हैं तेई प्रीति के सुन्दर मन  
 हैं । बालक को जैसे पिता माता दुलारत तैसे इहाँ सुन्दर जन इ  
 औ इनहीं चरित्रन के अनुराग ते जोगादि विना तुलसी  
 सुले हैं ॥ ६ ॥ ३० ॥

रोति चलिवे को चाहे प्रीति पहिचानि के । पान  
 आपनी कहें प्रेम परयस पहें मंजु मृट्ट वचन सनेह सु  
 ॥ १ ॥ भावरे कुंभर को चरन की बराह बिहारी

रग धरति कंहाधीं जिय जानि कै । जुगल कमल पद अंक  
जोगवत जात गोरे गात कुंअर सहिमा महा मानि कै ॥ २ ॥  
उन की कहनि नीकी रहनि लपन सीकी तिन की गहनि  
जे पधिक उर आनि कै । लोचन सजल तन पुलक मगन मन  
होत भूरि भागी जसु तुलसी बधानि कै ॥ ३ ॥ ३१ ॥

रीति ३० । श्री जानकी राम लपन की चलिबे की रीति चाहि कहै  
देखि कै औ प्रीति पहिचानि कै जे नर नारि प्रेम ते परवस हैं ते सुंदर  
कोमल बचनन को स्नेह रूपी अमृत में सानि कै आपनी आपनी उक्ति  
कहत हैं ॥ १ ॥ २ ॥ उन की कहनि नीकी है औ लपन सी की रहनि  
नीकी है औ जे पधिक श्रीराम आदि के उर में आनि कै लोचन  
सजल तन पुलक मगन मन होत तिन्ह की गहनि नीकी है औ तुलसीउ  
यस बखानि कै वह भागी है ॥ ३ ॥ ३१ ॥

राग केदारा—जेहि जेहि भग सिय राम लपनु गए तहँ  
तहँ नर नारि विनु कर करिगे । निरपि निकाई अधिकारै  
विद्यकित भई वच वपु नैन सर सोभा सुधा भरिगे ॥ १ ॥  
जोते विनु वए विनु निफल निराये विनु मुकत मुपेत मुप  
सालि फूलि फरिगे । मुनिहुं मनोरथ को अगम अलभ्य लाभ  
सुगम सो राम लघु लोगनि को करिगे ॥ २ ॥ लालचो कौडी  
के कूर पारस परे हैं पालि जानत न को हैं कहा कोषो सो  
विमरिगे । बुधि न विचार न विगार न सुधार मुधि टेह गेह  
नेह नाते मन ते निसरिगे ॥ ३ ॥ वरपि सुमन सुर हरपि  
हरपि कहैं अनायाम भवनिधि नीच नोकि तरिगे । सो मनह  
समउ सुमिरि तुलमिह के से भलोभांति भने पैत भलि पाम  
परिगे ॥ ४ ॥ ३२ ॥

जेदि ३० । जेदि जेदि राह से थीजानकी राम लपन गये वहाँ

तहाँ नर नारि घटोने छरि गये, अधिक सुंदरार्ई देखि कै । बचन सारी  
 विशेष थकित भए आँ नैन रूपी तड़ाग में सोभा रूपी मिष्ट जल भारी  
 गए वा सुधा अमृत ॥ १ ॥ विना जोते विना बोए निफल कहँ अंडु  
 निराए बिना अर्थात् सोहे विना सुकृत रूप सुंदर खेत में सुख ह्य  
 धान फूलि के फरि गयो इहाँ जोतना आदि कर्म उपासना ज्ञान है  
 जो लाभ मुनिद्व के मनोरथ को अगम आँ अलभ्य है सो लाभ शीतल  
 छोटे लोगन को भी सुगम करि गए ॥ २ ॥ जे कूर कौड़ी के लालची  
 रहे तिन के पारस सम श्रीरामादि पथिक पाले परे हैं ताते अध्यास-  
 रहित भए नहीं जानत हैं कि हम कौन हैं औ कहा करनो है सो  
 विसरि गए न बुद्धि है न विचार है न विगार सुधार की सुधि है देह  
 गेह नेह नाता सब मन ते निकल गये ॥ ३ ॥ समउ समय पैत दात  
 ॥ ४ ॥ ३२ ॥

बोले राज देन को रजायसु भो कानन कीं आनन प्रसन्न  
 मन मोद बडो काजु भो । मातु पितु वंधु हित आपनो पर-  
 हित मोकीं वीसह के ईस अनकूल चाजु भो ॥ १ ॥ असनु  
 अजीरन को समुझि तिलक तज्यौ विपिन गवनु भले भूषेकी  
 सु नाजु भो । धरमधुरीन धीर वीर रघुवीर जू को कोटि  
 राज सरिस भरत जू को राजु भो ॥ २ ॥ ऐसी बातें कहत  
 मुनत मग लोगन की चले जात भात दोउ मुनि को सो साजु  
 भो । ध्याइवे कीं गाइवे कीं सेइवे सुमिरिवे कीं तुलसी को  
 सुपद समाजु भो ॥ ३ ॥ ३३ ॥  
 ३० । राज देइवे के लिए तो बोलाए औ आज्ञा दिए कानन  
 को मुख प्रसन्न औ मन में आनन्द बडो काज बन जावो  
 होत भयो औ अस गुनत भए कि माता कैकेई को औ पिता को  
 को हमारे बन जावे में हित है औ अपना तो परमहित है ।  
 वीसो विधे आजु ईश्वर अनुकूल भो ।  
 कि पितु बचन पालिवे ते वे  
 दिवे को यह  
 भयो वा

ि धाना आदि को दिन भौ वन में मुनि आदि के दर्शन ते आपन  
 न नाने वा जेहि हेतु अवतार लिप् मो कार्य बन जावे ते होयगो  
 न पद्मदिन ॥ १ ॥ भर्तारन पर को भोजन सम राजनिलक को  
 शक्ति के त्याग दियो भौ निपट भूखे को अनान प्राप्ति होना सम वन-  
 न भयो भाव जेमे अन्न मिलिबे ते भूखा प्रसन्न होन तस प्रसन्न भए ।  
 र्मे र्म्या बोझा को धरानिहार धीर धीर जो रघुवीर जू तिन को  
 पने एक राजको को फट फोटि राज सम भरत जू को राज पाइवो  
 यो ॥ २ ॥ मुनि के समान साजु भयो ई जेहि दोऊ भाइन को ते  
 गल्लेगन की ऐमी बातें जेते फहत मुनत चले जात ई ध्याइवे आदि  
 तुलसी को सब भांति ते मुखदाता यह पथ को समाज  
 यो ॥ ३ ॥ ३३ ॥

सिरिस सुमन सुकुमारि सुपमा की सीव सीय राम वडे  
 ही सकोच संग लई है । भाई के प्रान समान प्रिया के प्रान के  
 प्रान जानि दानि प्रीति रीति कृपा सीलमई है ॥ १ ॥ आलवाल  
 पवध सुकाम तरु काम बेलि दूर करि कै कई विपति बेलि  
 कई है । आपु पति पूत गुरजन प्रिय परिजन प्रजाह्न को  
 कुटिल दुसह दसा दई है ॥ २ ॥ पंकज से पगनि पानछौ  
 न परुप पंथ कैसे निवहे हैं निवहैगे गति नई है । एही  
 सोच संकट मगन मग नर नारि सब को सुमति राम राग  
 रंग रई है ॥ ३ ॥ एक कहै वाम विधि दाहिनो हम को  
 भयो उत कीन्ही पीठि इत को सुडोठि भई है । तुलसी  
 सहित वन बासो मुनि हमरिचौ अनायास अधिक अघाड़  
 वनि गई है ॥ ४ ॥ ३४ ॥

सिरस ३० । भाई जो श्रीलपनलाल तिन के प्रान समान औ  
 मिया जो श्रीजानकी जू तिन के प्रान के प्रान औ कृपा सील मई जो  
 श्रीराम सो सिरिस के फूल सम सुकुमारि औ परम सोभा की मर्यादा

जो श्री जानकी जू तिन की यानि कहें सुभाव आँ प्रीति रीति जानि  
 कैं वहे ही संकोच से संग में लई है ॥ १ ॥ थाल्हा रूप श्री अचर  
 तेहि में सुंदर कल्पवृक्ष आँ कल्पलता के समान श्रीराम जानकी हैं तिन  
 कों कैकेई ने दूरि करि कै विपति की वंचरि घेई है । तेहि विपति वार करि  
 कुटिल कैकेई ने अपने को आँ महाराज आदि को दुसह दसा देति भई ॥ १ ॥  
 एक तो कमल से कोमल चरन हैं ताहू पर जूतों नाहीं आँ राह कनार  
 है तेहि में कैसे निबहे हैं आँ कैसे निबहेगे यह नई गति है । भाव आन  
 लों अस नहीं देखा एही सोच आँ संकट में संग के नर नारि हरे  
 आँ सब की सुंदर मति श्री राम की प्रीति रूपी रंग में रंगी है ॥ २ ॥  
 पुर नर नारि कहत हैं कि बनवासी मुनि सहित हम सब के अना  
 यास अधिक अघाय के बनि गई है ॥ ४ ॥ ३४ ॥

राग गौरी । नीके कै मै न बिलोकन पाए । सपि एहि  
 मग जुग पथिक मनोहर वधु विधुवदनि समेत सिधाए ॥ १ ॥  
 नयन सरोज किमोर बयस वर सौस जटा रचि मुकुट बनाए  
 कटि मुनिवसन तून धनुसर कर स्यामल गौर सुभाय सुभाए  
 ॥ २ ॥ सुंदर वदन बिसाल बाहु उर तनु छवि कोटि मनो  
 लजाए । चित्तवत मोहि लगी चौंधी सी जानी न कौन क  
 ते धौं आए ॥ ३ ॥ मनु गयौ संग सोचवंस लोचन सोच  
 वारि कितो समुभाए । तुलसिदास लालसा हरम की सो  
 वै जिहि आनि देपाए ॥ ४ ॥ ३५ ॥

नीके ३० ॥ ३५ ॥ टि०—विधुवदनी चन्द्रमुखी । सिधाए गये ॥  
 १०० कमल । जटा सं रचि के मुकुट बनाए हैं । मुनिवसन बलकलादि  
 मनोज कामदेव ॥ २ ॥ ३ ॥

पुनि न फिरि दोउ वीर बटाऊ । स्यामल गौर स  
 सुंदर सपि वारक बहुरि बिलोकिये काऊ ॥ १ ॥ कर कमल  
 सर सुभग सरासन कटि मुनि वसन नियंग सुभाए । सु

लंब सब अंग मनोहर धन्य सो जनक जननि जेहि जाए  
 १ ॥ सरद विमल विधु वदन जटा सिर मंजुल अरुन सरो-  
 ह लोचन । तुलसिदास मारग हैं राजत कोटि मदन मद-  
 लोचन ॥ २॥३६ ॥

पुनि इ० सु० ॥ ३६ ॥

राग केदारा । आली काहू तो बूझे न पधिका कहां धीं  
 सवैहैं । कहां ते जाए हैं कोहैं कहां नाम स्याम गोरे काज  
 कुसल फिरि एहि मग ऐहैं ॥ १ ॥ उठत बयस मसि-  
 भोजत सलोने मुठि सोभा द्विपवैया विनु वितहि विकैहैं ।  
 हयै हेरि हरि लेत लोनी ललना समेत लीयननि लाहू देत  
 जहां जहं जैहैं ॥२॥ राम लपन सिय पधिका कौ कथा पृथुल  
 म विघको कहति सुमुपि सवै हैं । तुलसी तिन्य सरिस  
 उ भूरि भाग जीउ सुनि कौ सुचित तेहि समै समै हैं  
 ३॥३७ ॥

आली इ० सु० ॥१॥ उठत बैस चढ़ती अवस्था, मसिभीजत रस-  
 वान ॥ २ ॥ पृथुल विस्तृत, तेहि समै समै हैं पनपात के समै की  
 था में समाहिने ॥ ३ ॥ ३७ ॥

बहुत दिन वीतै सुधि कछु न लखी । गए छै पधिका  
 गोरे सांवरे सलोने सपि संग नारि सुकुमारि रही ॥ १ ॥  
 जानि पहिचानि विनु आपु ते आपनहु ते प्रानहु ते  
 यारे प्रियतम उपही । सुधा के सनेहहू के साह ले संवारे  
 बधि जैसे भायते हैं भांति जात न पाही ॥ २ ॥ दहुरि  
 वैलोकिये कदहुं कहत तन पुदना नयन ललधार बही ।  
 तुलसी प्रभु मुमिरि धामजुवती सिपिल विनु प्रदाम परी  
 म सही ॥ ३॥३८ ॥

घटुत इ० सु० ॥ १ ॥ विना जान पहिचान के उपही कई परदे  
हैं पर अपने शरीर ते औ पुत्रादिहु ते औ मान हुं ते मियतम प  
हैं ॥ २ ॥ ३ ॥ ३८ ॥

राग गौरी । आली री पथिक जे एहि पद्य परीं सिधाए  
ते तो राम लपन अवध ते आए ॥ १ ॥ संग सिय सब रंग  
सहज सुहाए । रति काम रिपुपति कोटिक लजाए ॥ २ ॥  
राजा दसरथ रानी कोसिला जाए । कैकेई कुचालि बति  
कानन पठाए ॥ ३ ॥ वचन कुभामिनि के भूपहि क्यों भाए ।  
हाय हाय राय वाम विधि भरमाए ॥ ४ ॥ कुलगुरु सचि  
काहु न समुभाए । काचमनि लै अमील मानिक गंशए  
॥ ५ ॥ भाग मगलोगनि के देपन जिन पाए । तुलसी  
सहित जिन्ह गुनगन गाए ॥ ६ ॥ ३९ ॥

आली इ० । इहां काच मणि सत्य है ॥ ६ ॥ ३९ ॥

सपि जब ते सीतासमेत देखे दोउ भाई । तब ते परैन  
कल कछु न सुहाई १ नय सिय नीके नीके निरधि निकाई ।  
तनसुधि गई मन अनत न जाई ॥ २ ॥ हेरनि विहसति  
हिये लिये हैं चुराई । पावन प्रेमविषस भई हौं पराई ॥ ३ ॥  
कैसे पितु मातु प्रिय परिजन भाई । जीवत जीव के जीव  
वनहि पठाई ॥ ४ ॥ समउ सुचित करि हित अधिकाई ।  
प्रीति यामवधुन्ह की तुलसीछूं गाई ॥ ५ ॥ ४० ॥

सखी इ० । समी सुचित करि हित अधिकाई । अधिक हित ते तो  
समे छंदर चित्त में करि के ग्रामवधुन की प्रीति तुलसीउ ने  
गाई ॥ ५ ॥ ४० ॥

राग केदारा । जब ते सिधाए एहि मारग लपन राम  
जानकोसहित तब ते न सुधि लही है । अवध गए थीं

फिरि कैधीं चढ़े विंध्य गिरि कैधीं कहुं रहै सो ककु न काहु  
 कही है ॥१॥ एक कहैं चित्रकूट निकट नदी के तीर परन-  
 कुटोर करि वसे वात सही है । सुनियत भरत मनाइवे को  
 भावत हैं होइगी पैं सोइ जो विधाता चित चही है ॥ २ ॥  
 सत्वसंध धरमधुरीन रघुनाथ जू को आपनी निवाहिवे नृप-  
 की निरवही है । दसचारि वरप विहार वन पदचार  
 करिवे पुनीत सैल सर सरि मही है ॥ ३ ॥ मुनि सुर मुजन  
 समाज के सुधारि काज विगारि विगारि जहां जहां जाकी  
 रही है । पुर पांड धारिहैं उधारिहैं तुलसीहू से जन जिन्ह  
 जानि कै गरीबी गाटे गही है ॥ ४॥४१ ॥

जयते इं० मु० ॥ १ ॥२॥ महाराज की तो निवाहि गई है पर श्री-  
 रघुनाथ जू का आपनी निवाहिवे को है, सर तलाव, सरि नदी ॥३॥४१॥  
 राग सारंग । ए उपही कोउ कुंभर अहेरी । स्वाम गौर  
 धनु वान तून धर चित्रकूट अब आइ रहैरी ॥ १ ॥ इन्हहि  
 बहुत पादरत महामुनि समाचार मेरे नाइ कहैरी । वनिता  
 बंधु समेत वसत वन पितुहित कठिन कलेस सहैरी ॥ २ ॥  
 वचन परसपर आहति किरातिनि पुलक गात जल नयन  
 वहेरी । तुलसी प्रभुहि विलोकति एकटक लोचन जनु  
 विनु पलक लहेरी ॥ ३॥४२ ॥

ए उपही इं० महामुनि अत्रि बाल्मीक आदि ॥३॥४२॥ टि. उपही परदेशी ।  
 चित्रकूट अति विचित्र सुंदर वन महि पवित्र पावनपय  
 सरित सकल मल निकंदिनी । सानुज जहं वसंत राम लोक  
 लोचनाभिराम वाम अंग वामा वर बिखवंदिनी ॥ १ ॥ रिपि-  
 वर तहं छंद वास गावत कल कोकिलहास कोर्तन उनमाय



काय क्रोध कांदिनी । वर विधान करत गान वारत धनमान  
 प्राण भरना भरत भिंग भिंग भिंग जल तरंगिनी ॥ ६ ॥  
 वर विहार चरन चार पांडर चंपका-चनार करनहार वा  
 पार-पुर पुरंदिनी । जो वन नवटारत डार दुत्त मत ह  
 मराल मंचु मंचु गुंजत हैं चलि चलिगिनी ॥ ३ ॥ चितक  
 मुनिगन चकोर बैठे निज ठौर ठौर अक्षय अकलंक स  
 चंद्र चंदिनी । उदित सदा वन थकास मुदित वदत तुलसि  
 दास जय जय रघुनंदन जय जनकनंदिनी ॥ ३ ॥ ४३ ॥  
 कलंक रहित चंद्र श्रीरघुनाथ हैं औ चंदनी श्री जानकी दाँ  
 औ इहां आकाश वन है ॥ ३ ॥ ४३ ॥

फटिकासिला नटु बिसाल संकुल सुरतर तमाल लडि  
 लताजाल हरति छवि वितान की । मंदाकिनि तटनि ती  
 मंचुल नृग विहंग भीर धीर मुनिगिरा गंभीर सामगान  
 की ॥ १ ॥ मधुकर पिक वरहि मुपर सुंदर गिरि निरम  
 भर जलकान घन छाहं छन प्रभा भान की । सब रि  
 रितुपति प्रभाउ संतत बहै त्रिविध वाउ जनु विहा  
 वाटिका नृप पंचवान की ॥ २ ॥ विरचित तह परनसा  
 अतिविचित्र लपनलाल निवसत जहं नित कृपांल रा  
 जानकी । निज कर राजीवनयन पल्लव दल रचित स  
 घास परसपर पियूप प्रेम पान की ॥ ३ ॥ सिय धंग वि  
 धातुराग सुमननि भूपन विभाग तिलक करनि क्यों काँ  
 कला निधान की । माधुरी विलास हास गावत जस त  
 सिदास वसत हृदय जोरो प्रिय परन प्राण की ॥ ४ ॥ ४४ ॥

कोमल औ विसाल फटिक सिन्हा है । इहां सीता राम के बैठवे ते सिला कोमल हूँ गई है । ताते मृदु कहें अयहीं ताई चिन्ह बना है औ तहां सधन कल्पवृक्ष औ तमाल हूँ औ सुंदर तिन्ह वृक्षन पर लतन के समूह हूँ ते चंद्रवा आदि की छवि को हरति हूँ । सो सिला मंदाकिनी नामा नदी के तीर में है । तहां सुंदर मृग औ पक्षिन की भीर है औ धीर जो मुनि हूँ तिन की गम्भीर बानी सामवेद के गान की है । वा मृग विहंग धीर जो हूँ सोई धीर मुनि हूँ औ तिन की गिरा जो है सोई गम्भीरता साम गान की है ॥ १ ॥ भ्रमर औ कोइल औ मयूर शब्दायमान हूँ औ सुंदर पर्वतन ते झरना झरत हूँ सोई जल के बूंद हूँ औ वृक्षादि के छांह हूँ सो भंग हूँ औ तिन्ह झरनन पर सूर्य की प्रभा जो पड़े है सो छनप्रभा कहें विजुली है । इहां प्रभा शब्द को देहली-दीपक न्याय करि दूनो ओर लगावना औ सय ऋतु में वसंत ऋतु को प्रभाव है ताते निरंतर सीतल मंद सुगंध वायु बहत है मानो महाराज कामदेव के बिहार करने की वाटिका है ॥ २॥३ ॥ धातुराग जो मन-सिला आदि तिन्ह ते श्रीजानकी जी के अंग में लिखे औ फूलनि करि विशेष भाग भूपनन को किए अर्थात् अनेक भूपन बनाए औ कला फांरीगैरी ताके निधान जो रघुनाथ तिन की तिलक करानि क्यों कहां भाव कहा नहीं जात है ॥ ४ ॥ ४४ ॥

राग केदारा—लोने लाल लपन सलोने राम लोनी सिय चारु चित्रकूटवैठ सुरतरु तर हैं । गोरे सांवरे सरीर पीत नील नीरज से प्रेम रूप सुपमा के मनसिजसर हैं ॥ १ ॥ लोने नप सिय निरुपम निरपिषे जोग बडे उर कंधर विसाल भुज धर हैं । लोने लोने लोचन जटनि के मुकुट लोने लोने बदननि जीते कोटि सुधाकर हैं ॥ २ ॥ लोने लोने धनुष विसिप कर कमलनि लोने मुनिपट कटि लोने सरधर हैं । प्रिया प्रिय बंधु को देपावत बिटप विलि मंजु कुंज सिलातल दल फूल फर हैं ॥ ३ ॥ रिपिन्ह की पाग्रम सराहें मृगनाम

कहें लागी मधु सरित भरत निरभर हैं । नाचत वारी  
नीकी गावत मधुप पिका बोलत विहंग नभ जन धलचर  
हैं ॥ ४ ॥ प्रभुहिं विलोकि मुनिगन पुलके कहत भूरिभाग  
भए सब नीच नारि नर हैं । तुलसी सी सुप लाडु लूटत  
फिरात कोल जाको सिसिकत सुर विधि हरिहर हैं ॥५॥४५॥

प्रेम औ रूप औ मुखमा के शरीर जे गोरे सांवरे ते कामदेव के  
तदाग के पीत नील कमल सम हैं ॥ १ ॥ कंधर कांधा सुवाकर  
चंद्रमा ॥ २ ॥ विशिष कहें वाण, सरघर कहें तरकस पहिले तुक में  
तीनों मूर्ति को वरनन किए फिर दोऊ भाइन के अब केवल रघुनाथ  
को प्रिया बंधु को देखाउव लिखत हैं । ३ ॥ ऋषिन के आश्रमन को  
बखानत हैं औ मृगन के नाम कहत हैं अर्थात् यह सांवर है यह चीतर  
है औ इहां मधु लगी है यह नदी है ए झरना झरि रहे हैं अच्छी भांति  
ते मोर नाचत हैं भ्रमर गान करत है कोइल और नभचर जलचर  
धलचर विहंग बोलत हैं अस श्रीरघुनाथ प्रिया औ अनुज सन कहत  
हैं ॥ ४ ॥ सिसिकत कहें ललचत ॥ ५ ॥ ४५ ॥

राग सारंग । आइ रहै जव ते दोउ भाई । तब ते विव-  
कूट कानन छवि दिन दिन अधिक अधिक अधिकारै ॥१॥  
सीताराम लपन पद अंकित अबनि सोहावनि वरनि न जाई ।  
संदाकिनि मज्जत अवलोकत त्रिविध पाप त्रयताप नसाई ॥२॥  
उकटैउ हरित भये जल धल रुह नित नूतन राजीव सोहाई ।  
फूलत फलत पल्लवत पलुहत विटप बेलि अभिमत सुपदाई  
॥ ३ ॥ सरित सरनि सरसीरुह संकुल सदन संवारि रमा  
जनु छाई । कृजत विहंग मंजु गुंजत अलि जात पथिक जनु  
लेत बोलाई ॥४॥ त्रिविध समीर नीर भर भरननि जहं तहं  
रहे रिपि कुटो वनाई । सीतल सुभग सिलनि परतापस करत

लोग लप तप मनु लाई ॥५॥ भए सब साधु किरात किरा-  
 तनि रामदरस मिटि गई कलुपाई । पग नृग मुदित एक  
 संग विहरत सहज विषम बड बैर विष्टाई ॥ ६ ॥ काम केलि  
 वाटिका विबुध बन लघु उपमा काय कहत लजाई । सकल  
 भुवन सोभा सकेलि मानो राम बिपिनि विधि आनि वसाई.  
 ॥ ७ ॥ बन मिसु मुनितिय मुनिवालक वरनत रघुवर  
 विमल वडाई । पुलकि सिधिल तनु सजल विलोचन प्रमु-  
 दित मन जीवनफल पाई ॥ ८ ॥ क्यों कहीं चित्रकूट गिरि  
 संपति महिमा मोद मनोहरताई । तुलसी गछं वसि लपन  
 राम सिय आनंद अवधि अवध विसराई ॥ ९॥४६ ॥

त्रिविध पाप कायिक वाचिक मानसिक त्रयताप दैहिक दैविक  
 भौतिक नसात हैं । महाभारते वनपर्वणि । ततो गिरिवरश्रेष्ठे चित्रकूट-  
 विशांपते । मंदाकिनीं समासाद्य सर्वपापमनाशिनीम् ॥ तत्राभिपेकं कुर्वा-  
 णः पितृदेवार्चने रतः । अभ्येधमवामोति गतिश्च परमां व्रजेत् ॥२॥ जल  
 धल रुद्र, जल के वृक्ष धल के वृक्ष, राजीव कमल अभिमत सुरदाई वांछित  
 मुख देनिहारे भाव फल्पवृक्ष समान ॥ ३ ॥ नदिन औ नद्यावन में  
 सपन कमल हैं मानो कमल नहीं हैं घर पनाइ के लक्ष्मी छाई हैं । पत्नी  
 घोलत हैं भंवर गुंजार करत हैं सो घोलत गुंजार नहीं करत हैं मानो  
 घले जात पधिक को घोलाय लेत हैं ॥४॥५॥ कलुपाई मलीनता ॥ ६ ॥  
 काम की विहार वाटिका औ विबुध बन नंदन चंद्ररथादि ए लघु हैं  
 ताने उपमा कहत में कावि लगात हैं । पनमिगु पन से वरनन के व्याज  
 से ॥ ८ ॥ ९ ॥ ४६ ॥

राग गौरी । दीपत चित्रकूट धन मन पति होत हुलाम ।  
 सीताराम लपन प्रियतापस धृष्ट निशाम ॥१॥ मरित मुहावनि  
 पावनि पाप हरनि पय नाम । मिद साधु मुरनेवित देति  
 सकल मन काम ॥ २ ॥ बिटप ईलि नव किसलय कुमुमित

सधन मुजाति । कंद मूल जल थल रुह अगनित अन वन  
 भांति ॥ ३ ॥ दंडुल मंजु वकुल कुल सुरतरु ताल तमाल ।  
 कदलिकदंब सुचंपका पाटल पनस रसाल ॥ ४ ॥ भूरुह भूरि  
 भरे जनु छवि अनुराग सुभाग । वन विलोकि लघु लागहिं  
 विपुल विबुध वन वाग ॥ ५ ॥ जाइ न वरनि राम वन  
 चितवत चित हरि लेत । ललित लता द्रुम संकुल मनहुं  
 मनोज निकेत ॥ ६ ॥ सरित सरनि सरसीरुह फूली नाना रंग ।  
 गुंजत मंजु मधुप गन कूजत विविध विहंग ॥ ७ ॥ लपन  
 फहेउ रघुनंदन देषिय विपिन समाज । मानहुं चयन मयन-  
 पुर आयउ प्रिय रितुराज ॥ ८ ॥ चित्रकूट पर राउर जानि  
 अधिक अनुराग । सपासहित जनु रतिपति आयउ घेलन  
 फागु ॥ ९ ॥ भिक्षि भांभ भरना डफ पनव नृदंग निसान ।  
 कवूतर बोलत चक्र चकोर । गावत मनहुं नारि नर मुदित  
 नगर चहुं धोर ॥ ११ ॥ चित्र विचित्र विविधि नृग डोलत  
 डोगर डांग । जनु पुर बौधिन्ह विहरत छैल संवारे खांग  
 ॥ १२ ॥ नटहि मोर पिक गावहिं सुखर राग वंधान ।  
 त्रिन् तरुन तदनी जनु पेलहिं समय समान ॥ १३ ॥ भरि  
 फगनि फहं जहं तहं डारहिं वारि । भरत परर-  
 फनि मनहुं मुदित नर नारि ॥ १४ ॥ पीठ चढार  
 कपि कूदत डारहिं डार । जनु मुष्ट लाइ गेरु मसि  
 परनि असवार ॥ १५ ॥ लिए पराग सुमन रस डोलत  
 सगीर । मनहुं परगजा छिरयात भरत गुलाब अवीर  
 ॥ १६ ॥ काम कौतुकी एहि विधि प्रभुहित कौतुक कीच ।

भि राम रतिनाथ हि जगदिन्द्रं बरु दीन्ह ॥ १७ ॥ टुप  
 टु दाम मोर जनि मानिहु मोरि रजाइ । भलिहि नाथ साथेहि  
 रि चायमु च्चनेउ बजाइ ॥ १८ ॥ सुदित किरात किरा-  
 तनि रघुवररूप निहारि । प्रभुगुन गावत नाचत चले  
 जोहारि जोहारि ॥ १९ ॥ देहिं यसीस प्रसंसहि मुनि सुर  
 रूपहिं फूल । गवने भयन रापि उर मूरति मंगलमूल ॥ २० ॥  
 चषकट थानन छवि को कवि बरनै पार । जहं सिय लपन  
 महित नित रघुवर कारहिं विहार ॥ २१ ॥ तुलसिदास  
 वांचरि मिसि कहै रामगुनयाम । गावहिं सुनहिं नारि  
 तर पावहिं मय अभिराम ॥ २२ ॥ ४७ ॥

पय कहै पयग्निनी ॥ २ ॥ नय किसलै नवीन पल्लव, अन वन  
 गोनि अनेक भानि ॥ ३ ॥ वंजुल वेंत, वकुलकुल मौलसरिन के  
 मूह, पाटल कहै पांदर, पनस कटहर, रसाल आम ॥ ४ ॥ भूरुह वृक्ष  
 ॥ ५ ॥ ६ ॥ ७ ॥ लपन कहत भए कि रघुनंदन विपिन को समाज  
 देखिए मानो आनन्दयुक्त कामदेव के पुर में प्रिय ऋतुराज आयो ।  
 अब दूसर उत्प्रेक्षा कहत हैं ॥ ८ ॥ ९ ॥ शिष्टी शींगुर, पनव ढोल, भेरी  
 नगारा लपंग मुरचंग ॥ १० ॥ कपोत यथापि कचूतर का नाम है पर  
 इहां कुमरी जानना काहे ते कि कचूतर पृथक लिखा है चक चकवा ॥ ११  
 डोंगर डांग पर्वत के राह ॥ १२ ॥ नटहिं नाचहिं समै समान फागुन  
 मास के अनुकूल ॥ १३ ॥ करिनिकर हंथिनी हार्थी, वारि जल ॥ १४ ॥  
 इहां खर के स्थान में वांदर हैं औ बचा जो पीठ पर चढे हैं सो सवार  
 के स्थान, में हैं लाल मुंह वाले बचा मानो गेरु लगाए हैं काले  
 मुख वाले बचा मानो मसी लगाए हैं ॥ १५ ॥ मलयाचल को जो  
 दक्षिण वायु है सो फूलन को पराग औ रस लिएं डोलत है मानो रस  
 नहीं है घोरा भया अरगजा है ताको छिरकत है औ पराग नहीं है  
 गुलाल अवीर है तामें भरत है ॥ १६ ॥ १७ ॥ १८ ॥ १९ ॥ २० ॥

सधन सुजाति । कंद मूल जल धल रुद्र चागनित अन वन  
 भांति ॥ ३ ॥ दंजुल मंजु वकुल कुल सुरतरु ताल तमाल ।  
 कदलिकदंब सुचंपक पाटल पनस रसाल ॥ ४ ॥ भूकृद् भुरि  
 भरे जनु छवि अनुराग सुभाग । वन विलोकि लघु लागहिं  
 विपुल विबुध वन वाग ॥ ५ ॥ जाद्र न वरनि शम वन  
 चितवत चित हरि लेत । ललित लता द्रुम संकुल मनहुं  
 मनोज निकेत ॥ ६ ॥ सरित सरनि सरसीरुद्र फूले नाना रंग ।  
 गुंजत मंजु मधुप गन कूजत विविध विहंग ॥ ७ ॥ लपन  
 कहेउ रघुनंदन देपिय विपिन समाज । मानहुं चयन मयन-  
 पुर आयउ प्रिय रितुराज ॥ ८ ॥ चित्रकूट पर राउर जानि  
 अधिक अनुराग । सपासहित जनु रतिपति आयेउ घेलन  
 फागु ॥ ९ ॥ भिल्लि भांभ भरना डफ पनव मृदंग निसान ।  
 भेरि उपंग भृंग रव ताल कीर कल गान ॥ १० ॥ हंस कपोत  
 कबूतर बोलत चक्र चकीर । गावत मनहुं नारि नर मुदित  
 नगर चहुं शीर ॥ ११ ॥ चित्र विचित्र विविधि मृग डोलत  
 डोगर डांग । जनु पुर बौधिन्ह विहरत छैल संवारे खांग  
 ॥ १२ ॥ नटहि मोर पिक गावहिं सुस्वर राग वंधान ।  
 निलज तरुन तरुनी जनु पेलहिं समय समान ॥ १३ ॥ भरि  
 भरि सूंढ करनि कहे जहे तहे डारहिं वारि । भरत परस-  
 पर पिचकनि मनहुं मुदित नर नारि ॥ १४ ॥ पीठ चढाइ  
 सिमुन्ह कपि कूदत डारहिं डार । जनु मुह लाद्र नेरु मसि  
 भए परनि शसवार ॥ १५ ॥ लिए पराग सुमन रस डोलत  
 मलय समीर । मनहुं परगजा छिरकात भरत गुलाल शरीर  
 ॥ १६ ॥ काम कौतुकी एहि विधि प्रमुदित कौतुक कीन्ह ।

मानो मधु साधय दोड अनिप धीर। वर विपुल विटप वानैत  
 बोर ॥ मधुकर मुक्त कोकिल बंदि वृन्द । वरनहिं विसुंढ  
 जम विविधि छंद ॥ ४ ॥ महि परत सुमन रस फल पराग ।  
 जनु देत इतर नृप कर विभाग ॥ कलि सचिव सहित नय-  
 निपुन मारि । कियो विश्व विवस चारिहूं प्रकार ॥ ५ ॥  
 विरहिन पर नित नइ परइ मारि । डांढिषहि सिद्धि  
 साधक प्रचारि ॥ तिन्ह की न काम सकै चापि छांइ ।  
 तुलसी जे बसहिं रघुवीर यांइ ॥ ६ ॥ ४८ ॥

पसंत प्रकृत के आप से बनसमान भलो बन्यो मानो कामदेव  
 पदारान आन भए हैं मानो फाग के बहाना ते प्रथम अनीत करि के  
 दोरी के बहाने शत्रुपुर को जारि करि जीति करि वायु के बहाने पत्र  
 रूपी प्रजा को उजारि के फिरि सकल धन में नया नगर बसाए ॥ १ ॥ २ ॥  
 सुंदर रंगवाली पर्वत की शिला सिंहासन है औ कानन की जो छवि  
 सो काम की पत्नी रति है आं कुरंग हरिन निकटवर्ती जन हैं, श्वेत  
 छमन श्वेत छत्र है, लता मंडप है, चमर वायु है, क्षरना नगरा है ॥ ३ ॥  
 मानो चत आं बसाख दोऊ धीर सेनापति हैं श्रेष्ठ जे अनेक बिटयें ते  
 तोहि सेना वानेबंद धीर हैं । भ्रमर सुआ कोइल ए भाट मन हैं । अनेक  
 छन्द में विशुद्ध यस को चरनत हैं ॥ ४ ॥ महि में फूल रस फल धूरि  
 परत हैं सो मानो आन राजा विभाग पूर्वक कर देत हैं । कालिकाल रूप  
 सचिवसहित नीत में निपुन जो काम है सो विश्व को चारिउ प्रकार  
 ते अर्थात् शाम दाम भेद दंड करि विशेष वश किए ॥ ५ ॥ विरहिन के  
 ऊपर नीति नई मारि परति है औ सिद्ध औ साधक प्रचारि करि विशेष  
 डांढे जात हैं । काम तिन्ह की छांइ को नहीं दवाय सकत है जे रघुवीर  
 के यांइ ते बसत हैं ॥ ६ ॥ ४९ ॥

राग मल्लार । सब दिन चित्रकूट नीकी लागत । वरपा-  
 रितु प्रवेश विशेष गिरि देपत मन अनुरागत ॥ १ ॥ चहु दिसि  
 बन संपन्न विहंग मृग बोलत सोभा पावत । जनु सुनरेस देस



॥ २१ ॥ चांचरि भिसु कहे होरी में चार गायो जात है तेहि के बारा  
से ॥ २२ ॥ ४७ ॥

राग वसंत । आजु बन्यो है विपिनि देषो राम धीर ।  
मानो खेलत फाग मुद्द मदन बीर ॥१॥ बट बकुल कदंब पन  
रसाल । कुसुमित तरुनिकर कुरबक तमाल ॥ मनो विविध  
वेप धरे छैल जूथ । विच बीच लंता ललना बरुध ॥ २ ॥  
पनवानक निरभर अलि उपंग । बोलत पारावत मानो  
डफ मृदंग ॥ गायक सुक कोकिल भिक्षि ताल । नाचत  
वहु भांति बरहि सराल ॥३॥ मलयानिल सीतल सुरभि मंद ।  
यह सहित सुमन रस रेनु बृंद ॥ मानो छिरकत फिरत  
सबनि सुरंग । भाजत उदार लीला अनंग ॥४॥ क्रीडत कीर्ति  
सुर नर असुर नाग । इठि सिद्ध मुनिन्ह के पंथ लाग ।  
कह तुलसिदास तेहि छाडु मैन । जेहि राघ राम राजीव  
नैन ॥ ५ ॥ ४८ ॥

निकर समूह, कुरबक कोरैया ॥२॥ आनक कहैं नगारा । "आनक  
पटहोभेर्यां मृदंगे ध्वनदम्बुदे" इत्यभिधानात् । ढोल झरना ढोल औ नगा  
है अमर उपंग है ॥ ३ ॥ रेजु पराग ॥ ४ ॥ क्रीडत जिते खेलत  
जीत लिए ॥ ५ ॥ ४८ ॥

रितुपति आयो भलोवन्यो वनसमाजु । मानो भए हैं मदन  
महाराज आजु ॥ १ ॥ मानो प्रथम फाग मिस करि अनीति ।  
होरी मिस अरिपुर जारि जीति ॥ मारुत मिस यत्र प्रज  
उजारि । नए नगर बसाए विपिनि भारि ॥ २ ॥ सि  
सैलसिन्धा सुरंग । कानन छवि रति परिजन कुरंग ॥ ३ ॥  
छत्र सुमन बघी पितान । चामर समीर निरभर निसान ॥ ४ ॥

मानो मधु माधव द्योउ अनिय धीर। वर विपुल विटप वानैत  
 बोर। मधुकर मुक कोकिल बंदि बृन्द । वरनहिं विसुद्ध  
 जम विविधि छंद ॥ ४ ॥ महि परत सुमन रस फल पराग ।  
 जनु देत इतर नृप कर विभाग ॥ कलि सचिव सहित नय-  
 निपुन मारि । कियो विप्रव विवस चारिहूं प्रकार ॥ ५ ॥  
 बिरहिन पर नित नइ परइ मारि । डांठिभहि सिद्धि  
 साधक प्रचारि ॥ तिन्ह को न काम सकै चापि छांह ।  
 तुलसी जे बसहिं रघुवीर यांह ॥ ६ ॥ ४८ ॥

धरंत ऋतु के आए से वनसमाज भलो वन्यो मानो कामदेव  
 महाराज आज भए ई मानो फाग के बहाना ते प्रथम अनीत करि के  
 हारी के बहाने शत्रुपुर को जारि करि जीति करि वायु के बहाने पत्र  
 रूपी भजा को उजारिके फिरि सकल वन में नया नगर बसाए ॥१॥२॥  
 सुंदर रंगवाली पर्वत की शिला सिंहासन है औ कानन की जो छवि  
 सो काम की पत्नी रति है औ सुरंग हरिन निकटवर्ती जन हैं, श्वेत  
 सुमन श्वेत छत्र हैं, लता मंडप हैं, चमर वायु है, झरना नगरा है ॥३॥  
 मानो चंद्र औ बसाख दोऊ धीर सेनापति हैं श्रेष्ठ जे अनेक बिरहें ते  
 तेहि सेना वानेवंद धीर हैं । भ्रमर सुआ फोइल ए भाट गन हैं । अनेक  
 छन्द में विशुद्ध यस को वरनत हैं ॥ ४ ॥ महि में फूल रस फल धूरि  
 परत हैं सो मानो आन राजा विभाग पूर्वक कर देत हैं । कालिकाळ रूप  
 सचिवसहित नीत में निपुन जो काम है सो विश्व को चारिउ प्रकार  
 ते अर्थात् शाम दाम भेद दंड करि विशेष वश किए ॥ ५ ॥ बिरहिन के  
 ऊपर नीति नई मारि परति है औ सिद्ध औ साधक प्रचारि करि विशेष  
 डांटे जात हैं । काम तिन्ह की छांह को नहीं दयाय सकत है जे रघुवीर  
 के बांह ते बसत हैं ॥ ६ ॥ ४९ ॥

राग मलार । सब दिन चित्रकूट नीको लागत । वरपा-  
 रितु प्रवेश विशेष गिरि देपत मन अनुरागत ॥१॥ चहु दिसि  
 वन संपन्न विहंग मृग बोलत सीमा पावत । जनु सुनरेस देस

॥ २१ ॥ चांचरि मिसु कहे होरी यें चार गापो जात है तेहि के बरान  
से ॥ २२ ॥ ४७ ॥

राग वसंत । आजु बन्यो है विपिनि देखी राम धीर ।  
मानो पेलत फाग मुद मदन बौर ॥१॥ वट वकुल कदंब पनस  
रसाल । कुसुमित तरुनिकर कुरवक तमाल ॥ मनो विरिष  
वेप धरे छैल जूथ । बिच वीच लता ललना वरुध ॥ २ ॥  
पनवानक निरभर अलि उपंग । वीलत पारावत मानो  
डफ मृदंग ॥ गायक सुक कोकिल भिल्लि तील । नाच  
वहु भांति बरहि मराल ॥३॥ मलयानिल सीतल सुरभि मंद  
यह सहित सुमन रस रेनु वृंद ॥ मानो किरकत फिर  
सवनि सुरंग । भाजत उदार लीला अनंग ॥४॥ क्रीडत धीरे  
सुर नर असुर नाग । इठि सिद्ध मुनिन्ह के पंथ लाग ।  
कह तुलसिदास तेहि छाडु मैन । जेहि राय राम राजीव  
नैन ॥ ५ ॥ ४८ ॥

निकर समूह, कुरवक कोरैया ॥२॥ आनक कहें नगारा । "आनक  
पंडहोभेर्या मृदंगे ध्वनदम्बुदे" इत्यभिधानात् । ढोल झरना ढोल औ नगा  
है भ्रमर उपंग है ॥ ३ ॥ रेनु पराग ॥ ४ ॥ क्रीडत जिते खेलवादे  
जाति लिए ॥ ५ ॥ ४८ ॥

रितुपतिपायो भलोवन्यो वनसमावु । मानो भए है मदन  
महाराज आजु ॥ १ ॥ मानो प्रथम फाग मिस करि अनौति ।  
होरी मिस परिपुर जारि जीति ॥ मारुत मिस पत्र दज  
छजारि । नए नगर बसाए विपिनि भारि ॥ २ ॥ सिंहासन  
सैलसिद्धा सुरंग । कानन छवि रति परिजन कुरंग ॥ सिद्ध  
द्वय सुमन बघी वितान । चामर समीर निरभर निसान ॥३॥



पुर प्रमुदित प्रजा सकल सुप छावत ॥२॥ सोहत स्याम जलद  
 मृदु घोरत धातु रंगमगे शृंगनि । मनहुं आदि शंभोज  
 विराजत सेवित सुर मुनि शृंगनि ॥ ३ ॥ सिपर परसि घन  
 घटहिं मिलत वगपांति सो छवि कवि वरनी । आदिवरा  
 विहरि वारिधि मानो उठयो हे दसनि धरि धरनी ॥ ४ ॥  
 जलजुत विमल सिलनि झलकत नभ वन प्रतिविंब तरंग ।  
 मानहुं जगरचना विचित्र विलसति विराट अंग अंग ॥ ५ ॥  
 मंदाकिनिहि मिलत भरना भरि भरि भरि भरि भर  
 आछे । तुलसी सकल मुकत सुप लागे मानो राम भगति के  
 पाछे ॥ ६ ॥ ५० ॥

चहुं ओर वन पुष्पफलादि करि सम्पन्न हैं औ पसी मृग बोल  
 में सोभा पावत हैं, मानो सुंदर नरेश ते देश औ पुर के प्रजा प्रमुदित  
 हैं सकल सुख छावत हैं ॥ २ ॥ पर्वत के ऊपर श्याम मेघ शोभत हैं  
 औ मृदु घोरत कहें मधुर धुनि ते गरजत हैं औ सिखरानि से घातु गे  
 मनसिलादि रंगमगे कहें चाहि चलें हैं, मानो परवत नहीं है आदि कपन  
 है अर्थात् जाते ब्रह्मा उत्पन्न भए । इहां अत्यंत दीर्घ करि आदि कपन  
 की उपमा दिए सो सुर मुनि रूप शृंगनि करि सेवित हैं । इहां शृंग रा  
 श्याम जलद जानना ॥ ३ ॥ शृंगनि को छुड़ के बकुलनि की पांति  
 सघन जो घटा तिन को मिलत है । सो छवि कवि वरनी है, मानो आदि  
 वराह समुद्र में विहार करि के दांत पर धरनी धरि के उठयो है । रा  
 आदिवराह पर्वत है वर्षा को जल को नीचे लगा है सो समुद्र है, वग  
 पांति दसन है, घटा धरनी है वा जो मेघ पर्वत ते मिलि रयो है सो  
 आदिवाराह है ताके ऊपर से वगपांति जो ऊपर निकली है सो  
 दसन है । दूरी घटा जो ऊपर है सो भूमि है ॥ ४ ॥ निर्मल सिलनि  
 में जलयुक्त आकाश वन औ तरंग को प्रतिविंब झलकत है मानो  
 विराट के अंग अंगानि में जग की रचना विचित्र विशेष लसति है  
 ॥ ५ ॥ ६ ॥ ५० ॥

राग मोग्ठ । चात्रु को भोक और सो माई । सुन्दो न  
 दार बेट्ट घंटी धुनि गुनिगन गिरा मोहाई ॥१॥ निज निज  
 पति सुंदर मदननि ते रूपमोल छवि छाई । लैन असीस सीय  
 आगे करि मो पै सुतवधू न आई ॥ २ ॥ वूभी हों न विहंसि  
 मेरे रघुवर कछा मुमिवा माता । तुलसी मनहुं महासुप  
 मेरे देपि न सक्यो विधाता ॥ ३॥५१ ॥

अवध में श्री कौशल्या जी की उक्ति कहत हैं । निज निज पति  
 अपने अपने पति के सुंदर गृहनि ते रूप शील छवि ते छाई जे सुत-  
 वधू हैं ते सीता के आगे करि असीस लेखे हेतु हमारे पास न आई  
 ॥ ३ ॥ ५१ ॥

जननी निरपति वाल धनुहिंया । दार दार उर नय-  
 ननि लावति प्रभु जु कि ललित पनहिंया ॥१॥ कवहुं प्रथम  
 ज्यों जाइ जगावति कछि प्रिय वचन सकारे । उठइ तात  
 धलि मातु बदन पर अनुज सपा सब द्वारे ॥ २ ॥ कवहुं  
 कहति बड बार भई ज्यों जाहु भूप पै भैया । बंधु बोलि जेइयै  
 जो भावें गई नेछावरि मैया ॥ ३ ॥ कवहुं समुक्ति बनगमन  
 राम को रहि चकि चित लिपी सी । तुलसिदास यह समय  
 कहे ते लागति प्रीति सिपी सी ॥ ४॥५१ ॥

प्रीति सिखी सी कहिये को यह भाव कि जो स्नेह सत्य हो तो  
 कहत ही में शरीर छूटि जाना ॥ ४ ॥ ५२ ॥

माई रो मोहि न कोउ समुझावै । राम गमन सांची  
 किधौ सपनौ मन परतीत न आवै ॥१॥ लगे रहत मेरे नय-  
 ननि आगे राम लपन अरु सीता । तदपि न मिटत दाह  
 या उर की विधि जो भयो विपरीता ॥ २ ॥ दुप न रहै रघु-  
 पतिहिं विलोकत तनु न रहै विनु देखे । . . . न

प्राण-पयान मुनहु सपि अरुक्ति परी एहि लेये ॥ ३ ॥  
 कौसल्या के विरह बचन मुनि रोइ उठी सब रानी । तुल-  
 सिदास रघुचोरविरह की घोर न जाति बयानी ॥ ४॥५३ ॥  
 सु० ॥ ४ ॥ ५३ ॥

जय जय भवन विलोकति सूनो । तत्र तव विकल होति  
 कौसल्या दिन दिन प्रति टुप दूनो ॥ १ ॥ सुमिरत बाल विनोद  
 राम के सुंदर मुनिमनहारी । होति हृदय अतिसुल समुक्ति  
 पदपंकज अजिरविहारी ॥ २ ॥ को अब प्रात कलेज मागत  
 रुठि चलैगी माई । स्याम तामरस नयन श्रवत जल काहि  
 क्षिउं छर लाई ॥ ३ ॥ जिधौं तौ विपति सहीं निसिवासर मरौं  
 तौ मन पछितायों । चलत विपिनि भरि नयन राम की  
 बदन न देपन पायों ॥ ४ ॥ तुलसिदास यह विरह दसा  
 अति दारुन विपति घनेरो । दूरि करै को भूरिकुपा विनु  
 सोकजनित रुज मेरो ॥ ५ ॥ ५४ ॥

पदपंकज अजिरविहारी कहिये को यह भाव कि चरण कमल  
 सम कोमल हैं औ आंगन से बाहर न निकले सो वन में कैसे निबधि-  
 हैं ॥ ५॥५४ ॥ दि० यह शोक से उत्पन्न मेरे रोग को बिना भूरिकुपा-  
 ( रघुनाथ ) के कौन दूर करैगा ?

मेरो यह अभिलाष विधाता । कव पुरवै सपि सानुकूल  
 है हरि सेवक सुप्रदाता ॥ १ ॥ सीतासहित कुसल कौसलपुर  
 आवत हैं सुत दोऊ । श्रवन सुधासम बचन सयी कव भाइ  
 कहैगी जोऊ ॥ २ ॥ मुनि संदेस प्रेमपरिपूरन संभ्रम उठि  
 धावोंगी । बदन विजोकि रोकि लोचनजल हरयि दिधि  
 लावोंगी ॥ ३ ॥ जनकमुता कव सामु कहै मोहि राम

लपन कहें मैया । बांह जोरि कब अजिर चलेंगे स्याम गौर  
दोउ मैया ॥ ४ ॥ तुलसिदास एहि भांति मनोरथ करत  
प्रीति अति वाढी । थकित भई उर आनि रामछवि मनहुं  
चित्र लिपि काढी ॥ ५॥५५ ॥

सुगम ॥ ५ ॥ ५५ ॥

सुन्यौ जव फिरि सुमंत पुर आयो । कहिहै कहा प्रान-  
पतिकी गति नृपति विकल उठि धायो ॥ १ ॥ पायँ परत मंत्री  
अति व्याकुल नृप उठाय उर लायो । दसरथ दसा देपि न  
कह्यो कछु जो संदेस पठायो ॥ २ ॥ वृष्णि न सकत कुसल  
प्रीतम की हृदय यहै पछितायौ । साचेहु सुतवियोग सुनिवे  
कहुं धिग विधि मोहिं जिआयौ ॥ ३ ॥ तुलसिदास प्रभु  
जानि निठुर हौं न्याय नाघ विसरायो । हा रघुपति कहि  
पखौ अवनि जनु जल ते मीन विलगायो ॥ ४॥५६ ॥

सुगम ॥४॥५६॥

सुएहु न मिटैगो मेरो मानसिक पछिताउ । नारि वस न  
विचार कीन्ही काज सोचत राउ ॥ १ ॥ तिलक की बोले दियो  
वन चौगुनो चित चाउ । हृदौ दारिम ज्यों न विहग्यो समुक्ति  
सौल सुभाउ ॥ २ ॥ सौय रघुवर लपन विनु भय भभरि भग्यो  
न पाउ । मोहि वृष्णि परत न याते कवन कठिन कुघाउ  
॥ ३ ॥ सुनि सुमंत की आनि सुंदर सुवन सहित जिपाउ ।  
दास तुलसी न तरु मो कहं मरन अमिय पिपाउ ॥ ४॥५७ ॥

सुएहु इति० सु० ॥१॥ दाटिम अनार ॥२॥ भाग्यो न धाउ आर-  
दाय न भाग्यो ॥३॥ हे सुमंत मुनो कि सुंदर पुत्र आनि कर हितमरि  
जिआउ भाव पुत्र बिना जिभावना अदितसारि है । इहां महाराज अति  
पीडित हैं ताते\_मुनु के स्थान में मुनि करे ॥ ४ ॥ ५७ ॥



अवध विलोकिहीं जीवत रामभद्रविहीन । कहा करि  
 भाद्र सानुज भरत धरमधुरीन ॥१॥ राम शोक सनेह संकु  
 तनु विकल मन लीन ॥ टूटि तारागनन मग ज्यों होत कि  
 छिन छीन ॥ २ ॥ हृदय समुक्ति सनेह सादर प्रेम पाव  
 मोन । करी तुलसिदास दशरथ प्रीति परिमिति पीन ॥१५॥

राम भद्र के बिना अवध देखि करि के हम जीवत हैं । अनुज स  
 धर्मधुरीन जो भरत सो आय करि के कहा करि है । भाव प्रथम  
 आए होते तो अस शोक न भोगिवे को परत अर्थात् कैकेई को न  
 देते क्योंकि धर्मधुरीन हैं । वा भरत धर्मधुरीन हैं यह अन्याय-  
 जनित दुख को न सहि सकिहें ताते आइके कहा करिहें अर्थात्  
 जिन आवैं ॥ १ ॥ श्रीराम के शोक से तन विकल है औ सनेह ते पूर्ण  
 हैं ताते मनलीन भयो जात है । तारा टूट के आकाश के मग में जैसे  
 छिन छिन छीन होत जात है तस होत है ॥ २ ॥ नेह सहित आदर  
 सहित मीन के प्रेम को हृदय में पवित्र समुक्ति के गोसाईजी कहत हैं कि  
 दशरथ महाराज प्रीति की मर्यादा को पुष्ट करत भए । भाव जैसे जल  
 बिना मछरी शरीर त्यागत तस त्यागे ॥ ३॥५८ ॥

राग गौरी । करत राय मन मो अनुमान ॥१॥ शोक  
 विकल सुप वचन न आवै विकुरे कृपानिधान ॥ राज देन कह  
 बोलि नारिवस मैं जो कछो बन जान । आयमु सिर धरि बलि  
 हरषि हिय कानन भवन समान ॥ २ ॥ ऐसे सुरा के विरह  
 अवधि लों जो रायौ यह प्रान । तो मिटि जाइ प्रीति की  
 परिमिति अजस सुनौ निज कान ॥ ३ ॥ राम गए अजहूँ  
 हीं जीवत समुक्त हीं अकुलान । तुलसिदास तन तजि  
 रघुपति हित कियौ प्रेम परवान ॥ ४॥५९ ॥

करत इति मृगप ॥ ४॥ ५९ ॥

सोरठ । ऐसी तें क्यौं पाटुवचन कछोरो । राम जाइ

रानन कठोर तेरो कैमे धीं छट्ट रछोरी ॥१॥ दिनकर वंस  
 पता दसरथ मो राम लपन से भाई । जननी तू जननी तो  
 कहा कहीं विधि केहि पोरि न लाई ॥ २ ॥ छों लहिहीं  
 सुप राजमातु है मुत मिर छव धरैगो । कुल कलंक मल-  
 मूल मनोरथ तो विनु कौन करैगो ॥ ३ ॥ ऐहैं राम सुपी  
 सब तैहैं ईस अजस नेरो हरिहैं । तुलसीदास मोको घडो  
 मोच तू जनम कवन विधि भरिहैं ॥ ४ ॥ ६० ॥

वशिष्ठ जू को कास्मीर दून भेजव औ भरत जू को आउव आदि  
 गया छोड़ दिष्ट अब भरतजी की उक्ति केकेई प्रति लिखत हैं ॥ १ ॥  
 दिनकर ऐसो वंश भयो औ दसरथ महाराज सम पिता औ श्रीराम  
 लपन से भाई भए तहां हे जननी तू जननी भई तो कहा कहीं विधाता  
 के कोहि को खोटाई नहीं लगाई है । वा हे जननी तूं अपने जननी सम  
 भई यह कथा वाल्मीकी रामायण में स्पष्ट है ॥ २ ॥ कुल को कलंक  
 मूल को मूल अस मनोरथ तो विना कौन करैगो कि पुत्र सिर पर छत्र  
 धारण करैगो, हम राजा की माता हैं के मुख पावेंगी ॥ ३ ॥ भरिहै  
 विताइहै ॥ ४ ॥ ६० ॥

ताते हीं देत न दूपन तोह्र । रामविरोधी उर कठोर ते  
 प्रगट कियो विधि मोहू ॥ १ ॥ सुंदरसुपद सुसील सुधानिधि  
 जरनि जाय जेहि जोए । विष वारुनी दंधु कहितय विधु  
 नातो मिटत न धोए ॥ २ ॥ होते जौ न सुजानसिरोमनि  
 राम सब के मन माहीं । तौ तेरो करतूति मातु सुनि प्रीति  
 प्रतीति कहाहीं ॥ ३ ॥ मृटु मंजुल सांची सनेह सुचि सुनत  
 भरत वरवानी । तुलसी साधुसाधु सुर नर मुनि कहत प्रेम  
 पहिचानी ॥ ४ ॥ ६१ ॥

राम विरोधी जे कठोर उर तातें विधाता ने हमहूं को प्रगट कियो  
 भाव तव दोषी हमहूं वदरे ताते तोह्र को दोष नहीं देत हों ॥ १ ॥ सुंदर

मुखदाता मुनील अमृत की राह जोहि की देखिबे ते तपनि जात है ॥  
 विधु को भी विप और वारुणी को भी बंधु कहियत है, तो निधै भयो  
 किं नाता धोयवे तें नहीं भिठत है ॥ २ ॥ मुजाननि में शिरोमणि और  
 सब के मन माहीं श्रीराम जो न होते तो हे माता तेरी करतूति सुनि  
 के हमारी प्रीति प्रतीति कहां रही अर्थात् कहीं नहीं रही ॥ ३ ॥ बांघ  
 सुंदर सांची नेह सहित औ शुद्ध ऐसी जो भरत की श्रेष्ठ जाना ताको  
 सुनत मात्र सुर नर मुनि प्रेम पहिचानिकै ठीक है ठीक है कर  
 हैं ॥ ४ ॥ ६१ ॥

जौं पै हौं मातुमते महुं छै हौं । तौ जननी जग में  
 सुप की कहां कालिमा ध्यै हौं ॥ १ ॥ क्यौं हौं आजु होत सु  
 सपयनि कौन मानिहैं सांची । भहिमा मृगी कौन सुकत  
 को षल वचन बिसिष ते बांघी ॥ २ ॥ गहि न जाति रसन  
 काह की कहीं जाहि जोइ सूकै । दोनबंधु कारन्यसि  
 विनु कौन हिये की बूझै ॥ ३ ॥ तुलसी रामवियोग विष  
 विप विकल नारि नर भारी । भरत सनेह सुधा सीचे स  
 भये ते समय सुपारी ॥ ४ ॥ ६२ ॥

कौसल्याजी के प्रति भरतजी की उक्ति ॥ १ ॥ आजु सपयनि  
 हम कैसे शुद्ध हे सकत हैं । हमारी बात को कौन साचो मानैगो । करत  
 शुकती की महिमा रूप मृगी खल के वचन रूप वान ते बची है । भा  
 नहीं बची है ॥ २ ॥ ३ ॥ ४ ॥ ६२ ॥ टि० महुं में, रसना जीभ ।

काह की पीरि कौकडहि लावों । धरहु धीर बलि कर  
 तात मोको आजु विधाता वावों ॥ १ ॥ सुनिवे योग वियोग  
 राम को हौं न हौंउ मेरे प्यारे । सो मेरे नयननि आगे ते  
 पुपनि बनहिं सिधारे ॥ २ ॥ तुलसिदास समुझाइ भरत  
 बांसु पोछि उरलाए । उपजी प्रीति जानि प्रमु के हित  
 मनहुं राम फिरि पाए ॥ ३ ॥ ६३ ॥

कौसल्याजी की उक्ति है । टि० पोरि दोष । रघुनाथ जी का वियोग में मुनने योग्य नहीं रही, सो मेरे नेत्रों के सामने घन सिधाये, में जीवत रही क्योंकि विधाता हम से धाम हैं ॥ २ ॥ ६३ ॥

मेरी अवध धौं कहहु कछा है । करहु राज रघुराजचरन तनि लै लटि लोगु रहा है ॥ १ ॥ धन्य मातु धौं धन्य लागि जेहि राजसमान दृष्टा है । ता पर मोसों प्रभु करि चाहत सब विनु दृष्टन दृष्टा है ॥ २ ॥ राम सपथ कोउ कछू कहै जिनि में दुप दुसह सहा है । पित्रकूट चलिहीं प्रातहि चलि क्मिऐ मोहि हहा है ॥ ३ ॥ यों कहि भोर भरत गिरिवर को मारग बूझि गहा है । सकल सराहत एक भरत जग जनमि सुखाहु लहा है ॥ ४ ॥ जानिहि सिय रघुनाथ भरत को सील सनेह सहा है । कै तुलसी जाको रामनाम सों प्रेम नेम निवहा है ॥ ५ ॥ ६४ ॥

श्रीभरतजी की उक्ति है । मेरी अयोध्याजी में फरो तो क्या है अर्थात् कुछ नहीं है । रघुनाथ को चरण छोड़ि के राज करहु अस लै लगाइ के लोग कहैं रटि रहा वा मानै में लोग लटि रहा है ॥ १ ॥ हमारी माता धन्या हैं औ हम धन्य हैं फारे ते कि जेहि के निमित्त राजसमाज दहा है कहैं विगारि गया है, ताह पर हमारे ऐमे को स्वामी करि के बिना अगिनि के सब जरा चाहत हैं ॥ २ ॥ मेरी दहा कहैं विनती है छमा फीजिये हम प्रातःकाल चलंगे, आप सब चलिये ॥ ३ ॥ गिरपर कामदनाथ, जगत में जनमि के एक भरते ने सुंदर लाम को लहा है अस सकल सराहत हैं ॥ ४ ॥ ५ ॥ ६४ ॥

भाई धौं अवध कछा रहि लहिहीं । राम लपन सिय चरन विलोकन कालि काननहि लैहीं ॥ १ ॥ जद्यपि मो में कै

मुखदाता मुशील अमृत की राह जोहि की देखिवे ते तपनि जात है ॥  
 विधु को भी विप और वारणी को भी बंधु कहियत है, तो निश्चै मंग  
 कि नाता धोयवे तें नहीं मिठत है ॥ २ ॥ मुजाननि में शिरोमणि ३  
 सब के मन माहीं श्रीराम जो न होते तो हे माता तेरी करतूति सुं  
 के हमारी प्रीति प्रतीति कहां रही अर्थात् कहीं नहीं रही ॥ ३ ॥ कोमल  
 सुंदर सांची नेह सहित औ थुद ऐसी जो भरत की श्रेष्ठ वानी तां  
 सुनत मात्र सुर नर मुनि प्रेम पहिचानिकै ठीक है ठीक है का  
 है ॥ ४ ॥ ६१ ॥

जौ पै हौं मातुमते महुं छै हौं । तौ जननी जग में वा

सुय की कहां कालिमा ध्वै हौं ॥ १ ॥ क्यों हौं आजु होत सुवि

सपथनि कौन मानिहैं सांची । नहिमा मृगी कौन सुकृती

को पल वचन विसिष ते वांची ॥ २ ॥ गहि न जाति रसना

काह्र की कहीं जाहि जोडू सूझै । दोनबंधु कारुन्यसिंधु

विनु कौन हिये की बूझै ॥ ३ ॥ तुलसी रामवियोग विषम

विष विकल नारि नर भारी । भरत सनेह सुधा सींचे सब

भये ते समय सुपारी ॥ ४ ॥ ६२ ॥

कौसल्याजी के प्रति भरतजी की उक्ति ॥ १ ॥ आजु सपथनि ३

हम कैसे थुद हे सकत हैं । हमारी बात को कौन साचो मानैगो । कते

सुकृती की महिमा रूप मृगी खल के वचन रूप वात ते बची हैं । भा

नहीं बची है ॥ २ ॥ ३ ॥ ४ ॥ ६२ ॥ टि० महुं में, रसना जीभ ।

काहे की पोरि कौकडूहि लावों । धरहु धीर बलि ३

तात भोको आजु विधाता वावों ॥ १ ॥ सुनिवे योग विर्य

राम को हौं न हौं उ मेरे प्यारे । सो मेरे नयननि आगे ।

रघुपति बनहिं सिधारे ॥ २ ॥ तुलसिदास समुझाडु भारत

काहं घांसु पोछि उरलाए । लपजी प्रीति जानि प्रभु के हित

मनुहुं राम फिरि पाए ॥ ३ ॥ ६३ ॥

कौसल्याजी की उक्ति है । टि० पोरि दोष । रघुनाथ जी का बियोग मैं सुनने योग्य नहीं रही, सो मेरे नेत्रों के सामने धन सिधाये, मैं जीवत रही क्योंकि विधाता हम से धाम हैं ॥ २ ॥ ६३ ॥

मेरो अवध धौं कहहु कहा है । करहु राज रघुराजचरन तजि लैं लटि लोगु रहा है ॥ १ ॥ धन्य मातु धौं धन्य लागि जेहि राजसमाज ढहा है । ता पर मोसों प्रभु करि चाहत सब विनु दहन दहा है ॥ २ ॥ राम सपथ कोउ कछू कहै जिनि में दुष दुसह सहा है । चित्रकूट चलिहीं प्रातहि चलि क्मिऐ मोहि हहा है ॥ ३ ॥ यों कहि भोर भरत गिरिवर को मारग वृक्ति गहा है । सकल सराहत एक भरत जग जनमि सुलाहु लहा है ॥ ४ ॥ जानिहि सिय रघुनाथ भरत को सील सनेह सहा है । कै तुलसी जाको रामनाम सों प्रेम नेम निवहा है ॥ ५ ॥ ६४ ॥

श्रीभरतजी की उक्ति है । मेरो अयोध्याजी में कहे तो क्या है अर्थात् कुछ नहीं है । रघुनाथ को चरण छोड़ि के राज करहु अस लै लगाइ के लोग कहैं रटि रहा वा मालै में लोग लटि रहा है ॥ १ ॥ हमारी माता धन्या हैं औ हम धन्य हैं काहे ते कि जेहि के निमित्त राजसमाज ढहा है कहैं विगिरि गया है, ताहु पर हमारे ऐसे को स्वामी करि के बिना अग्नि के सब जरा चाहत हैं ॥ २ ॥ मेरी दहा कहैं विनती है छमा कीजिये हम प्रातःकाल चलेंगे, आप सब चलिये ॥ ३ ॥ गिरपर कामदनाथ, जगत में जनमि के एक भरत ने सुंदर लाभ को लहा है अस सकल सराहत हैं ॥ ४ ॥ ५ ॥ ६४ ॥

भाई धौं अवध कहा रहि लहिहीं । राम लपन सिय चरन विलोकन कालि काननहि लैहीं ॥ १ ॥ जद्यपि मो तैं कै

कुमातु ते ह्यै शार्ङ्ग अति पोची । सनमुंघ गये सरन रांपरि  
रघुपति परम सकोची ॥ २ ॥ तुलसी यों कहि चले भोरा  
लोग विकल संग लागे । जनु वन जरत देपि दारुन द  
निकसि विहंग मृग भागे ॥ ३॥६५ ॥

मुगम ॥ ६५ ॥ टि०—पोची अत्यन्तधुराई, दारुन भयंकर, द  
वनडाढ़ा ।

सुक सों गहवर छिय कहै सारो । वीर कीर सिय रा  
लपन विनु लागत जग अधियारो ॥१॥ पापिन चेरि अयानि  
रानि नृप हित अनहित न विचारो । कुल गुर सचिव साधु  
सोचत विधि को न वसाइ उजारो ॥२॥ अवलोकी न चलत  
भरि लोचन नगर कोलाहल भारो । सुने न वचन करुना  
कर के जव पुर परिवार संभारो ॥ ३ ॥ भैया भरत भाव  
के संग वन सब लोग सिधारो । हम पर पाइ पीजरन त  
सत अधिक अभाग हमारो ॥४॥ सुनि पग कहत अंब सींगी  
रहु समुक्ति प्रेमपथ न्यारो । गए ते प्रभु महुंचाय फिरि पुनि  
करत करम गुनगारो ॥ ५ ॥ जीवन जग जानकी लपत  
को मरन महीप संवारो । तुलसी और प्रीति की चरवा  
करत कहा कहु चारो ॥ ६॥६६ ॥

मैना मुगा सो व्याकुल हृदय कहै हैं । हे भाई सुआ श्री सीता रा  
लखन विना जगत अधियारो लागत है ॥ १ ॥ पापिन जो चो  
औ बुद्धिहीन रानी और महाराज ने हित अनहित नहीं विचार  
किया । वशिष्ठ जी औ मुपंत्रादि मंत्री और साधुजन सोचत हैं कि  
विपाता ने वसाप के कौन को नहीं उजारेउ अर्थात् सब को उतार  
॥ २ ॥ चलत के नेत्र भरि देखे नहीं और जव पुर परिवार को समा  
श्रीरापव कियो तब नगर में महत शब्द रह्यो ताते करुनाकर हैं

कवन न मुने ॥ ३ ॥ प्रिय जो भैया भरत तिन के संग वन में सब  
 लोगे गए औ हम पंख पाय के पींजरन में तरसत हैं । भाव जिन के  
 पंख नाहीं ते गए औ हम नाहीं, ताते अधिक अभाग हमारो है । ४॥  
 मुआ मुनि के कहत है कि हे अम्ब मैना प्रेम को पथ न्यारो है यह  
 सम्राज्ञि के मौगी कहैं मौन रहू जे प्रभु के संग गए ते पहुंचाय के कर्म के  
 करतव की निंदा करत पुनि किये ॥५॥ जीवन तो जग में श्री जानकी  
 औ लखन लाल को है औ महाराज ने मरन बनायो है और प्रीति  
 की चरचा काहे को करत हैं काहे ते कि कुछ डे सकत नाहीं । भाव न  
 मरतै बना न संग जातै बना ॥ ६॥६७ ॥

कहै सुक मुनहि सिखावन सारो । विधि करतव विप-  
 रीत वामगति राम प्रेमपथ न्यारो ॥१॥ को नर नारि अवध  
 पग मृग जेहि जीवन राम ते प्यारो । विद्यमान सब की गवने  
 वन वदन कारभ को कारो ॥ २ ॥ अंब अनुज प्रिय सपा सुसे-  
 वक देखि विपाद विसारो । पत्नी परवस परे पींजरनि लेपौ  
 कौन हमारो ॥ ३ ॥ रहि नृप की विगरो है सब को अब  
 एक संवारनिहारो । तुलसी प्रभु निजचरनपीठ मिस भरत  
 प्रान रपवारो ॥ ४ ॥ ६७ ॥

सुक कहत है कि हे मैना सिखावन मुनो । विधि के विपरीत करतव  
 से बक्र गति है औ श्रीराम के प्रेम को पथ न्यारो है ॥ १ ॥ अवध में  
 कवन नर नारि खग मृग अस हैं कि जेहि के राम ते प्यारो जीवन  
 है परंतु सब के रहत जो श्रीराम वन को गए तां करम को मुह फारो  
 है ॥ २ ॥ माता औ वंधुवर्ग औ प्रियसखा औ सुसेवक देखि के विपाद  
 को विसरायो वा अनुज प्रिय सखा सुसेवकों को देखि के माता सब  
 विपाद को विसरायो तो हम तो पत्नी हैं ताहू में परवस पींजरन में परे हैं  
 तो हमारो कवन लेखो है । ३ । एक महाराज की तो रही और सब की  
 विगरी अब एक संवारनिहारो है जो प्रभु निज चरण पादुका के  
 पदाना ते भरत के प्रान को रपवारो है ॥ ४ ॥ ६७ ॥



तादिन मृगवेरपुर आए । रामसपा ते समाचार सुनि  
वारि विलोचन काए ॥१॥ कुससाधरी देपि रघुपति की हंतु  
अपनपौ जानौ । कहत कथा सिय राम लघन की वैठहि  
रैन विहानी ॥ २ ॥ भोरहि भरद्वाज आश्रम द्वै करि निपाद-  
पति आगे । चले जनु तक्यों न डाग टपित गज घोरघाम के  
लागे ॥ ३ ॥ वृक्षत चित्रकूट कहं जेहि तेहि मुनिवालकनि  
वतायो । तुलसी मनहुं फनिक मनि दूँढत निरपि शरि  
हिय धायो ॥ ४ ॥ ६८ ॥

पद सुगम ॥ ६८ ॥

विलोकि दूरि ते दोउ वीर । उर आयत आजानु सुमग  
भुज स्यामल गौर सरौर ॥ १ ॥ सीस जटा सरसीरुह, लोचन  
वने परिधनु मुनिचीर । निकट निषंग संग सिय सोभित  
करनि धुनत धनु तीर ॥२॥ मन अगहुड तन पुलकि सिधिल-  
भयो नलिन नयन भरे नीर । गडत गोड मानो मकुचपंक मंग  
कठत प्रेम बलधोर ॥ ३ ॥ तुलसिदास दसा देपि भरत की  
उठिधाये अतिहि अधीर । लिए उठाइ उरलाइ ह्यपानिधि  
धिरहजनित हरि पीर ॥ ४ ॥ ६९ ॥

आयन विसाल, आजानभुज जानु पर्यंत वाहुं ॥ १ ॥ वने परिधनु  
मुनिचीर मुनिचीर जे बलकल ते परिधन कहैं बस्य वने हैं ॥ २ ॥ अ-  
हुड अग्रवर्ती ॥ ३ ॥ हरि कहैं हरि लिए ॥ ४ ॥ ६९ ॥

राग केदारा । भरत भए ठाढे करजोरि । ह्यै न सकत  
सकुच यस समुक्ति मातुलत पोरि ॥१॥ फिरिहैं किधैं  
कहिहैं प्रभु कल्पि कुटिलता मोरि । हृदय सोच लव  
विलोचन देख नद भद्र भोरि ॥ २ ॥ वनवासी पुर लोच

कर्मणि शिष्टे सं जाठ उ से होरि । ईई यवन मुनिवे  
 होई नई नई नई तेन मन होरि ॥ ३ ॥ तुलसी राम मुभाव  
 कर्मणि इर धरि धीरकहि वहीरि । बोनि वचन विनीत  
 कर्मणि रित कर्मनामहि निहोरि ॥ ४१० ॥

कर्मणि कर्मना कर्मि के अर्थात् विचारि के । देह नेह भई मोर  
 कर्मणास मरिष मय ॥ ३ ॥ जाठ केमे स्वल्प मे बनाए भए ई भाव  
 कर नई मे ई नई ई, मेम मन चोगि मेम मे मन को चोरि रहे  
 ॥ ३ ॥ ७० ॥

जानत ही मयही की मन की । तटवि कृपाल करीं  
 दिनगी सोइ माटर गुनहु दीनहित जन की ॥१॥ ए सेवक  
 भंगत अनन्य अति ज्यो चातकहि एक गति घन की । यह  
 विधारि गयनहु पुनात पुर हरहु टुमह चारत परिजन की  
 ॥ २ ॥ मेरी पुनि जीयन जानिए ऐसोइ जिय जैसो अहि  
 जामु गई मनिजन की । मेटहु कुलकर्मक कोसलपति  
 अन्ना देहु नाथ सोइ पन की ॥ ३ ॥ मोको छोड़ छोड़  
 लाइए लागे सोइ सोइ जीं उतपति कुमातु ते या तन की ।  
 तुलसीदास सय दोष दूरि करि प्रभु अय खान करहु निज  
 पन की ॥ ४१७१ ॥

ए अवधारणी सय निरंतर अति अनन्य सेवक हैं । जैसे चातक को  
 एक मेघ की गति है भाव तैसे इन जनन को एक आप की गति है  
 ॥ २ ॥ पुनि हमारो जीवन अस जानिए कि जेहि सर्प के फणि की  
 मणि गई जैसे सो जायै । हे कोसलपति कुल को कलंक मेटहु । हे नाथ  
 मोको घन जावे की आज्ञा देहु । इहां कुल को कलंक छोटे को राज्य  
 होना बड़े को घन जानो है ॥ ३ ॥ जो या तन की उतपत्ति कुमातु से  
 है याते मोको जेई जेई दोष लगाए सोई सोई लागे । निज पन की कई  
 घरनागत पालिये की लज्जा । ४ ॥ ७१ ॥

तात विचारो धौं धौं क्यों आवों । तुम्ह सुचि मुद्द  
सुजान सकल विधि बहुत कहा कहि कहि समुझावों ॥१॥ निज  
फर घाल पैचि या तन ते जौं पितु पग पानहीं करावों । होउ  
उरिन पिता दसरथ तें कैसे ताको वचन मेटि पति पावों  
॥ २ ॥ तुलसिदास जाको सुजस तिहूं पुर क्यों तेहि कुलहि  
कालिमा लावों । प्रभु रूप निरपि निरास भरत भए जान्यौ  
है सबहि भांति विधि वावों ॥ ३॥७२ ॥

हे तात भरत विचारो तो कि मैं क्यों वन को आयो ॥१॥ कावों  
कहैं वनवावों, पति पावों कहैं मर्यादा पावों । २ ॥ कुलहि कालिमा-  
लावों कहिये को यह भाव सत्यप्रतिज्ञ कुल है ॥ ३ ॥ ७२ ॥

राग सौरठ । बहुरों भरत कछो कछु चाहै । सकुच  
सिन्धु बोहित विवेक करि बुधि बल वचन निवाहै ॥१॥ छोटेहु  
में छोह करि आए मैं सामुहे न हेरो । एकहि वार आउ  
विधि मेरो सील सनेह निबेरो ॥ २ ॥ तुलसी जौं फिरिबो  
न बनै प्रभु तौ हीं आयसु पावों । घर फेरियै लपन लरिका  
हैं नाथ साथ हीं आवों ॥ ३॥७३ ॥

फेरि भरत कछु कहा चाहत हैं सकुच रूप समुद्र में अपने विवेक  
जो जहाज करि के तेहि जहाज को बुद्धि औ वचन के बल तें निवारत  
हैं अर्थात् कुठौर में नहीं परै देत हैं । वा बुद्धि औ वचन रूप सेना को  
तेहि जहाज पर निवाहत हैं ॥ २ ॥ निबेरो कहैं दूरि कियो, हीं आवों  
हम चलें । ३ ॥ ७३ ॥

रघुपति मोहि संग किन लीजै । बार बार पुर जाइ  
नाथ केहि कारन आयसु दीजै ॥१॥ जद्यपि हीं अति अधम  
कुटिलमति अपराधिनि को जायो । प्रजतपाल कोमल  
सुभाउ जिय जानि सरन तकि आयो ॥ २ ॥ जौ मेरे तनि

चरन जानि गति कहैं हृदय कछुं राषी । तौ परिहरहुं  
 दयाल दोनहित प्रभु अभिअंतरसापी ३ ॥ ॥ ताते नाथ  
 कहौ मै पुनि पुनि प्रभु पितु मातु गोसाईं । भजनहीन नर-  
 देह दृष्या पर खान फेरु की नाईं ॥ ४ ॥ बंधुवचन सुनि  
 श्रवन नयन राजीव नीर भरि आए । तुलसिदास प्रभु परम  
 कृपा गहि वांछ भरत उर जाए ॥ ५ ॥ ७४ ॥

जो मो कों चरन छोड़ि के आन गति होय औ हृदय में कछु राखिं  
 के कहत होउं तौ हे दयाल, हे दिनहित, हे प्रभु, हे अंतरजामी त्यागि  
 देहु ॥ ३ ॥ फेरु शृगाल ॥ ४ ॥ ५ ॥ ७४ ॥

काहे को मानत हानि दिये हो । प्रीति नीति गुन-सील  
 धरम कहैं तुम अवलंब दिये हो ॥ १ ॥ तात जात जानिबे  
 न ए दिन करि प्रमान पितुवानी । ऐहौं बेगि धरहु धोरज  
 उर कठिन कालगति जानी ॥ २ ॥ तुलसिदास अनुजहि प्रबोधि  
 प्रभु चरनपीठ निज दीन्है । मनहुं सवन की प्राणपाइरु भरत  
 सोस धरि लौन्है ॥ ३ ॥ ७५ ॥

हो भरत काहे को हानि हृदय में मानत हो । प्रीति औ नीति औ  
 गुण औ शील औ धर्म को तुमहीं अवलंब दिए हो ॥ १ ॥ हे तात  
 ए जे चौदह वर्ष के दिन हैं तिन के जाते न जानोगे ॥ २ ॥ ३ ॥ ७५ ॥

द्विनधी भरत करत कर जोरे । दीनबंधु दीनता दीनकी  
 कवहुं परै जानि भोरे ॥ १ ॥ तुम्ह से तुम्हहिं नाथ मोकों मो से  
 जन तुम को बहुरे । यहै जानि पछिचानि प्रीति छमिबे  
 अध भीगुन मेरे ॥ २ ॥ यौं कहि सीय राम पायन परि लवन  
 लाइ उर लौन्है । पुलक सरौर नीरभरि लोचन कहत प्रेम  
 पनु कीन्है ॥ ३ ॥ तुलसी वीते अवध प्रथमदिन जौ रघुवीर न

ऐही । ती प्रभुचरनसरोज सपय जीवत परिजनहि न  
पैही ॥ ४ ॥ ७५ ॥

सु० ॥७१॥ टि०—पुलक शरीर से नेत्रों में जल भरि के प्रप का  
मतिज्ञा से कहा कि अबधि बीतने पर पहलेही दिन यदि न आवेंगे तो  
परिजन को जीवित नहीं पावेंगे ।

अवसि हौं आयसु पाय रहौंगो । जनमि कौकई कोवि  
कूपानिधि क्यों कछु चपरि कहौंगो ॥ १ ॥ भरत भूप सिय  
राम लपन बन सुनि सानंद सहौंगो । पुरपरिजन अवलोकि  
मातु सब सुप संतोष लहौंगो ॥ २ ॥ प्रभु जानत जेहि भांति  
अंधलों वचन पालि निवहौंगो । आगे की बिनती तुलसी  
तव जब फिरि चरन गहौंगो ॥ ३ ॥ ७७ ॥

चपरि चाव पूर्वक ॥ १ ॥ भरत राजा हैं श्रीसीता राम लपन क  
में हैं यह वचन सुनि के आनन्दसहित सहौंगो । पुरपरिजन औ स  
मातन को देखि के अर्थात् बिकल देखि के सुख औ संतोष को पावेंगे  
॥ २ ॥ जेहि भांति अबधि लों वचन पालि के निवहेंगे सो प्रभु जान  
हैं । जब फेरि चरण गहेंगे तब आगे की बिनती करेंगे भाव आ  
सिंहासन पर बैठि यह बिनती करेंगे ॥ ३ ॥ ७७ ॥

प्रभुसो में ठीठ्यौ बहुत दर्द है । कौबी छमा नाथ भारि  
ते कही कुजुगुति नई है ॥ १ ॥ यौ कहि बार बार पायनि पा  
पांवरि पुलकि लई है । अपनी अदिन देपि हौं डरपत जि  
विपवेलि बई है ॥ २ ॥ आयी सदा सुधारि गोसाईं जन  
विगारि गई है । धके वचन पैरत सनेहसरि पखी मानो धी  
घई है ॥ ३ ॥ चिचकूट तेहि समय सबनि को बुधि विप्रा  
हई है । तुलसी राम भरत की विकुरत सिलासिप्रेम भा  
है ॥ ४ ॥ ७८ ॥

प्रभु सों में बहुत दिठाई करी है आँ आरति ते नई कुजुगुति कही है । हे नाथ ताको छमा कीजिएगा । १ ॥ पांवरि पादुका, हों कहैं हम ॥ २ ॥ हे गोसाईं जो जन ते विगरी गई है ताको आप सदा सुधारत आए हौं । एतना काहि बचन थकित भए, मानों सनेह रूप नदी के पैरत में घोर प्रवाह में परचो है । ३ । तेहि समै चित्रकूट में सवनि के बुद्धि को विपाद ने नाशी है । गोसाईं जी कहत हैं कि श्रीभरत जू को विछुरत में और को को कहैं शिलो प्रेमसहित भई है, भाव पधिलि गई है । ४।७८

घबते चित्रकूट ते आए । नंदियामपनि अबनि डासि-कुस परनकुटी करि छाए ॥ १ ॥ अजिन वसन फल असन जटा धरे रहत अबधि चित दौन्हे । प्रभुपद प्रेम निम ब्रत निरपत मुनिन्ह नमित मुख कौन्हे ॥ २ ॥ सिंहासन पर पूनि पादुका वारहिं वार जीहारे । प्रभु अनुराग मागि आयसु पुरजन सब काज संवारे ॥ ३ ॥ तुलसी ज्यों ज्यों घटत तेजतनु त्यों त्यों प्रीति अधिकारै । भए न हैं न हीहिंगे कवहूं भुअन भरत से भाई ॥ ४ ॥ ७९ ॥

अजिन मृगचर्म, मुनिन्ह नमित मुख कौन्हे कहिवे को यह भाव कि राजकुमार होय के जस तप ए करत हैं तस हम नहीं करि सकत हैं ॥ २ ॥ अनुरागपूर्वक प्रभु जो चरनपादुका तिन्ह से आज्ञा मांगि करि के पुरजनन के सब काज संवारे हैं ॥ ३ ॥ ४ ॥ ७९ ॥

राग रामकली—रापी भगति भलीभलाई भलीभांति भरत । स्वारथ परमाथ पथी जय जय जग करत ॥ १ ॥ जो ब्रत मुनिवरनि कठिन मानस आचरत । सो ब्रत लियो घातक ज्यों सुनत पातक हरत ॥ २ ॥ सिंहासन सुभग रामचरन-पीठ धरत । चालत सब राजकाज आयसु अनुसरत ॥ ३ ॥ आपु अबधि विपनि बंधु सोच जरनि जरत । तुलसी सम विषम सुगम अगम लपि न परत ॥ ३ ॥ ८० ॥

भली भांति ते भरत ने भली भगति औ भली भलाई राती है  
 वा भली भलाई ते भली भांति भरत ने भगति राखी है। भरत जू  
 स्वारथ औ परमारथ के पथी हैं अस कहि जगत जैजै कहत है  
 वा जगत में जेतने स्वारथ औ परमारथ के पथी हैं ते जैजै कहत  
 हैं ॥ १ ॥ कठिन मानस हठयोगादि ते वा कठिन करि मन को अर्थात्  
 रोकि के ॥ २ ॥ चरनपीठ के आज्ञानुसार सब राजकान चलावत  
 हैं ॥ ३ ॥ आप तो अवध में हैं औ वन में भाई हैं ताते सोच रूप  
 जरनि ते जरत हैं। गोसाईं जी कहत हैं कि भरत जी को सम विपम  
 सुगम अगम कछु नहीं लखि परत हैं। अर्थात् अत्यंत सोच है ताते वा  
 सम औ सुगम ठौर में भरत जू औ विपम औ अगम ठौर में राम  
 हैं पर लखि नहीं परत कि के कहाँ हैं। भाव भरत जू यद्यपि सम सु  
 ठौर में है पर जय सोच जरनि में जरत हैं तब विपम अगम में हैं अ  
 श्रीराम जू यद्यपि विपम अगम में हैं पर शोचरहित हैं तो सम सुगम  
 में हैं ॥ ४ ॥ ८० ॥

मोहि भावति कहिआवति नहिं भरतजू की रहनि।

सजल नयन सिधिलि वयन प्रभुगुनगन कहनि ॥१॥ असन  
 वसन अयन सयन धरम गरुअ गहनि। दिन दिन पन प्रेम

नेम निरुपधि निरवहनि ॥२॥ सीता रघुनाथ लघन विरह पीर  
 सहनि। तुलसी तजि उभय लोक रामचरन चहनि ॥३॥ ८१ ॥

असन भोजन, वसन वस्त्र, अयन गृह औ सैन औ भारी धर्म का  
 ग्रहन करना ॥ २ ॥ ३ ॥ ८१ ॥

जानी है संकर इनुमान लपन भरत रामभगति। कह

अंगम करत सुगम सुनत मीठो लगति ॥ १ ॥ लहत सहा

चहत सवाल जुग जुग जगमगति। रामप्रेमपथ ते कवधूँ डोलत

नहिं डगति ॥ २ ॥ रिधि सिधि विधि चारि सुगति जा विनु

गति अगति। तुलसी तेहि सनमुप विनु विषय ठगति

ठगति ॥ ३ ॥ ८२ ॥

श्रीशंकर श्रीहनुमान श्रीलपनलाल श्रीभरत जू ने रामभक्ति  
 जानी है । वह रामभक्ति कंसी है कि कहिये में सुगम है औ करिवे  
 गम है औ मुनत में मीठी लगति है ॥ १ ॥ तेहि भक्ति को सकल  
 है पर कोऊ एक पावत है औ जुग जुग में जगमगाति रहति है ।  
 कबहुं मलानि परत नाहीं औ श्री राम के प्रेम रूप पथ ते कबहुं  
 ते आ टगति नहीं है ॥ २ ॥ रिद्धि सिद्धि औ चारो भांति की  
 कहैं उपाय सो जा विना अगति है तेहि भक्ति के सन्मुख विना  
 रूपी ठगिनि ठगति है ॥ ३ ॥ ८२ ॥

राग गौरी—कैकिई करो धीं चतुराई कौन । राम लपन  
 वनहिं पठायि पति पठयो सुरभौन ॥ १ ॥ कहा भलो  
 भयो भरत को लगे तरुन तन दौन । पुरवासिन की नैन  
 विनु कबहुं तो देपति हौंन ॥ २ ॥ कौसल्या दिनराति  
 रति वैठि मनहिं मन मौन । तुलसी उचित न होइ  
 वो प्रान गए संग जौन ॥ ३ ॥ ८३ ॥

कौशल्या जी की उक्ति है ॥ १ ॥ दवन कहैं विरदानल ॥ २ ॥  
 ति । चता कराति प्रान गए संग जौन जो प्रान संग न गए ॥३॥८३  
 हाग मीजिवो हाथ रघ्यो । लगी न रंग चित्रकूटहु ते  
 कहा जात वृद्धो ॥ १ ॥ पति सुरपुर सिय राम लपन वन  
 व्रत भरत गद्यो । हौं रहि घर मसान पावक ज्यों  
 रोइ मृतक दद्यो ॥ २ ॥ नेरोइ हियो कठोर करिवे कहुं  
 कहुं कुलिस लद्यो । तुलसी वन पहुंचाय फिगी सुत  
 कहु परत कद्यो ॥ ३ ॥ ८४ ॥

हां कहां जात बद्यो इहां फा वहा जात रहा । भाव जेहि सन्दार हेतु  
 ॥ १ ॥ हम घर रहि के मसान को पावक जैसे मृतक को जरावन  
 र्द मरिवेई रूप मृतक को जराय दियो ॥२॥ हमारही दिय पट्टार



फरिब के लिए विधाता ने कतहुं कुलिस पायो है । भाव वाली को  
हमारो हृदय बनायो है ॥ ३ ॥ ८४ ॥

हों तो समुझ रही अपनो सो । राम लपन सिय को  
सुपमा कहुं भयो सधो सपनो सो ॥ १ ॥ जिन्ह के विरह विषाद  
वटाउन्ह पग मृग जीव दुपारो । मोहि कहा सजनी समुभा-  
वति हों तिन की महतारी ॥ २ ॥ भरतदसा सुनि सुमिनि  
भूपगति देखि दीन पुरवासी । तुलसी राम कहत हों सकु-  
चति हैहै जग उपहांसी ॥ ३ ॥ ८५ ॥

सखी समुझावति है ता प्रति श्री कौशल्या जी कहति हैं कि हे  
सखी मैं तो आपे समुझि रही हों । भाव तब समुझाइवे को क्या प्रयोजन  
है ॥ १ ॥ २ ॥ कौशल्या जी कहति हैं कि राम कहत में हम सकुच  
हैं । भाव लोग कहि हैं कि कैसी माता हैं कि ऐसे पुत्र के विछोर पर भी  
घोलत हैं । बोलनो हमारो जग में उपहास करावनिहारो होयगो ॥ ३ ॥ ८५

आली हों इन्हहि बुभावों कैसे । जित हिये भरि भरि  
पति के हित मात हित सुत जैसे ॥ १ ॥ बार बार हिहि-  
नात हेरि उत जौ बोलै कोउ द्वारे । अंग लगाइ लिये द्वारे  
ते करुनामय मुत प्यारे ॥ २ ॥ लोचन सजल सदा सोवत  
से पान पान विसराए । चितवत चौंकि नाम सुनि सोवति  
राम सुरति उर आए ॥ ३ ॥ तुलसी प्रभु के विरह वधिका  
इठि राजहंस से जोरे । ऐसेउ दुषित देखि हों जीवति राम  
लपन के घोरे ॥ ४ ॥ ८६ ॥

हे आली इन घोड़न के में कैसे समुझायों । अपने स्वामी जे भीतर  
लपन तिन के हित अपने हृदय में शोक को भरि भरि लेत हैं, जंत  
महतारी के हेतु पुत्र ॥ १ ॥ जो फोज द्वारे बोलत है तब द्वार के आं  
ताकि के बार बार दिहिनान हैं । भाव श्रीराम लपन तो नहीं बोनन

हैं । करुनामय हमारे प्यारे पुत्र लरिकई ते इन घोरन को अंग लगाइ लिए हैं ॥ २ ॥ सदा लोचन सजल रहत है औ खान पान जस सोअत में विसारि जात है तस विसराए रहत है औ श्रीराम लक्ष्मण को नाम मुनि चहुंकि के देखत हैं । जब नाम मुनिव ते श्रीराम की सुरति घर में आय जाति है तब सोच करत हैं ॥ ३ ॥ गोसाईं जी कहत हैं कि प्रभु के विरह रूप अधिक ने राम लपन के घोड़े जो राजहंस के घोड़े सम हैं तिन को दृष्टि करि के दुखित किए सो भी देखि के मैं निअत हौं ॥ ४ ॥ ८६ ॥

राघो एक वार फिरि आवो । ए वर वाजि विलोकि आपने बहुरो वनहिं सिधावो ॥ १ ॥ जे पय प्याइ पोपि कर पंकज वार वार चुचुकारे । क्यों जीवहिं गेरे राम लाडिलि ते अब निपट विसारे ॥ २ ॥ भरत सैगुनी सार करत हैं अतिप्रिय जानि तिहारि । तदपि दिनहुं दिन होत भांवरे मनहुं कमल हिम मारे ॥ ३ ॥ सुनहुं अधिक जौ राम मिलहिं वन कहियो मातु संदेसो । तुलसी मोहि और सब-दिन ते इन्ह को बडो अंदेसो ॥ ४ ॥ ८७ ॥

सार कहें पालन ॥ ८७ ॥

राग, कीदारा । काहू सो काहू समाचार अस पाए । विचकूट ते राम लपन सिय मुनियत अनत सिधाए ॥ १ ॥ सैलसहित निरभर वन मुनिघल देपि देपि सब पाए । कहत मुनत सुमिरत सुपदायक मानस सुगम मुहाए ॥ २ ॥ बडि अवलंब वामविधि विघटित विषम विषाद बटाए । सिरस मुमन सुकुमार मनोहर बालक विंध चटाए ॥ ३ ॥ अथ सकल नर नारि विकल अति अकनि वचन अनभाए । तुलसी रामबिदोग सोगवस समुक्त नहिं समुभाए ॥ ४ ॥ ८८ ॥

परवत नदी झरना वन मुनिन के आश्रम हम सब देखि देखि  
 आए हैं सुगम औ सुंदर हैं वसिन्हे को को कहै कहत मुनत सुनि  
 में मन के सुखदायक हैं, बहि अवलंब को वाम विधात नि तोड़े औ  
 तीक्ष्ण विपाद को बढ़ाए । सिरिस के सुमन सम सुकुमार मनो  
 धालकन को विंध्य परवत पर चढ़ाए ॥२॥३॥ अकनि मुनि, अनभा  
 श्रमिय ॥४॥८८॥

सुनी मैं सषी मंगल चाह सुहाई । सुभपत्रिका निपाद  
 राज की आजु भरत पहं आई ॥ १ ॥ कुंभर सो कुशल धिस  
 तेहि अवसर कुलगुरु कहं पहुंचाई । गुर कृपाळ संभम पु  
 घर घर सादर सवाह सुनाई ॥ २ ॥ बधि विराध सुर साध  
 सुषी करि रिषि सिष्य आसिष्य पाई । कुंभजशिष्य समेत  
 संग सिष्य मुदित चले दोउ भाई ॥ ३ ॥ रेवा विध बोव  
 सुपास घल बसे हैं परनगृह छाई । पंधकथा रघुनाथ  
 पधिक की तुलसिदास सुनि गाई ॥ ४॥८९ ॥

॥ १ ॥ सो कुशल छेम तेही अवसर कुंभर भरत ने बशिष्ठ ब  
 कहं पहुंचाई है ॥ २ ॥ कुंभज शिष्य सुतीक्ष्ण ॥ ३ ॥ रेवा नर्मदा  
 ॥ ४ ॥८९ ॥

सौख्य न्याय वेदांत की, छोदि छांदि सब जंग ।

सीता रघुपति चरन महं, हरिहर करहु उमंग ॥

इति श्रीरामगीतावलीप्रकाशिका टीकायां श्रीसीतारामकृपापात्र श्री

॥ सीतारामाय हरिहर मसादकृतौ अपोध्याकाण्डः समाप्तः ।

श्रीनीलागमाभ्यां नमः ।

## सटीक गीतावली—आरण्यकाण्ड ।

मद्ग्लान्तरण-वर्षा ।

रक्ष रक्ष रघुनायक भुनिपयपाल ।

पाटि पाटि फरुनाकर दुर्जनकाल ॥

मृग ।

राग मझार । देघे राम पथिक नाचत सुदित मोर ।

मानत मनहु सतडिता ललित घन धनु सुरधनु गरजनि

टंकोर ॥ १ ॥ कांपे कलाप घर वरहि फिरावत गावत कल

कोकिल किसोर । जहं जहं प्रभु विचरत तहं तहं सुपट

कवन कौतुक न घोर ॥ २ ॥ सघन छाँह तम रुचिर रजनि

भम वदन चन्द चितवत चकोर । तुलसी मुनि पग मृगनि

सराहत भये हैं सुकृत सब इन की चोर ॥ ३॥१ ॥

टीका ।

देखे० कवि की उक्ति है कि श्रीराम पथिक के देखिवे ते दपित

मोर नाचत है । मानो श्रीराम को तडिता सहित सुंदर घन मानत है ।

इहां उड़िता श्रीजानकी जी हैं या पीतपट है औ सारङ्ग धनु जो सो

रुद्रधनु है औ ताको टंकोर जो सो गरज है ॥१॥ वरही कहैं मयूर सो

कलाप कहैं पक्ष को कंपाय के फिरावत है औ युवा कोकिल जो सो

मधुर गावत है । जहाँ जहाँ दण्डकवन में प्रभु फिरत हैं तहाँ तहाँ सुत  
 औ कौतुक थोर नहीं है ॥ २ ॥ सघन छाँह की अंधेरी में सुंदर रात्रि  
 के भ्रम ते औ मुख चन्द के भ्रम ते चकोर चितवत है । गोसाईं जी  
 कहत हैं कि खग मृगनि को मुनि सराहत हैं औ कहत हैं कि सा  
 मुकृत इन के ओर भए हैं ॥ ३॥१ ॥

राग कल्याण । सुभग सरासन सायक जोरे । बिलत  
 राम फिरत मृगया वन बसति सो मृदु मूरति मन मोरे ॥  
 पीत बसन कटि चारु चारि सर चलत कोटि नट सो बन  
 तोरे । स्यामल तनु श्रमकन राजत ज्यों नव घन सुधासरोवर  
 पोरे ॥ २ ॥ ललित कांध बर भुज विसाल उर लेहि कंठरं  
 चित चोरे । अवलोकत मुष देत परम सुष लेत सरद ससि  
 की छवि छोरे ॥ ३ ॥ जटा मुकुटःसिर सारस नयननि गोईं  
 तकत सुभौंह सकोरे । सोभा अमितः समाति न कानन  
 उमगि चली चहुं दिसि मिति फोरे ॥ ४ ॥ चितवत चकित कुरंग  
 कुरंगिनि सब भये मगन मदन की भोरे । तुलसिदास प्र  
 वान न भोचत सहज सुभाय प्रेम बस थोरे ॥ ५ ॥ २ ॥

सुभग ६० । मृगया शिकार । १ ॥ कटि चारु चारि सर कटि में  
 चारि वान धरे हैं । नव घन सुधा सरोवर खोरे मानो नवीन  
 अमृत के तालाव में स्नान किए ॥ २ ॥ ३ ॥ जग को मुकुट सिर  
 है औ सारस कहैं कमल ता सम नैन हैं । सुंदर भौंह को सकोरे म  
 यात ताकत हैं । सोभा भितरहित है ताते वन में समाति नहीं है वर्षा  
 को फोरि के चहुं दिसि उमगि चली ॥ ४ ॥ मृगा मृगी चकित चितवत  
 हैं मदन के भ्रम ते सब मगन भए हैं । भाव मदन के पाँव बाण  
 हैं । एक एक बाण हाथ में औ चार बाण कटि में धरे हैं । गोसाईं जी  
 कहत हैं कि प्रभु बाण नहीं छोड़त हैं काहे ते कि प्रभु को यह सार  
 सुभाय है अर्थात् बनापट करि नही कि थोरे प्रेम के वच होत हैं ॥ ५ ॥ ३ ॥

राग धीरा—देहु हैं राम लज्ज यह मोता । पंचवटो वर  
 कपटपुरंग कनक-  
 विन्दु लज्जि लो कर्षि रंमि दाला । पाइ पालिवे योग  
 संजुग मारु संजुग दाला ॥ २ ॥ प्रियादहन मुनि विहंसि  
 अरुम संदरि आदर नीर्त् । चण्डो सी भाजि फिरि फिरि  
 रीत मुनिमद रज्जवरे चीर्त् ॥ ३ ॥ मोहति मधुर मनोहर  
 मूर्ति रमहरिन के पाछे । धावनि नवनि बिलोकनि  
 बिचरनि दम तुलमोडर पाछे । ४३ ॥

श्लो १० पद सु० ॥३॥ श्लो-पुरंग रनि, हेपरनि सोने का मृग,  
 विपनि विशेष प्रकार ।

राग कान्गान—कर मर धनु कटि रुचिर निपंग । प्रिया  
 प्रीति प्रेरित दनधीघिन विपरत कपट कनकमृग मंग ॥ १ ॥  
 भुज विमान कमनीय कत्र उर वरमसीकर मोहै सांघरे अंग ।  
 मनो मुकुतामनि मरकतगिरि पर कसत ललित रविकिरन  
 प्रमंग ॥ २ ॥ नैननमिन मिरजटा मुकुटविष सुमनमाल  
 मानो मिथसिरगंग । तुलसिदाम अस्ति मूर्ति की वलि छवि  
 बिलोकि लार्जे अमित अनंग ॥ ३ ॥ ४ ॥

श्लो १० । गुजा विसाल है आं कंप छाती सुंदर है आं अम कण  
 सांघरे अंग पर मोहन है । मानो मुक्तामणि मरकत के परवत पर सुंदर  
 रविकिरन के प्रसंग ते सोभत है । नैन कमल सम हैं सिर में जटा को  
 छुट्ट है बीच में श्वेत सुमन की माला है सो मानो शिव के शिर पर  
 गंगा है । गोसाई जी कहत है कि ऐसी मूर्ति की छवि देखि कै एक  
 को को कहै अनेक काम लाजत है ॥ ३ ॥ ४ ॥

राग कैदारा—राघव भावति मोहि बिपिन की वीथिन्ह  
 धवनि । अरुन कंज वरन चरन सोकहरन अंकुस कुलिसं  
 केतु अंकित अवनि ॥ १ ॥ सुन्दर स्यामल अंग वसन पीत-

सुरंग काटि निपंग परिकर गिरवनि । कनक सुरंग सं  
 साजि वार सर चाप राजियनयन इत उत चितवनि ॥ २ ॥  
 सोहत सिर सुकुट जटापटल निकर मुमन लया सञ्चित रचो  
 वनयनि । तैसेई खमसोकर रुधिर राजत सुंप तैसिचै ललित  
 भृकुटिन्ह की नवनि ॥ ३ ॥ दीपत पगनिकर मृग रवनिन्दन  
 यकित विसारि लहं तहं वी भवनि । हरि दरसन फल पायो  
 है ज्ञान विमल जाचत भक्ति मुनि चाहत जवनि ॥ ४ ॥ जिन  
 की मन मगन भये हैं रस सगुन तिन के लिये चगुन मुक्ति  
 कवनि । खवनसुपकारनि भवसरितांतरनि गायत तुलसिदास  
 कोरति पवनि ॥ ५ ॥ ५ ॥

राघो० राघो की विपिनि वीथिन की धावनि मोको भावति  
 जेहि धाइये ते शोकहरन लाल कमल सम जो श्रेष्ठ चरण में अंडु  
 कुलिश ध्वज हैं ताते अंकित अवनि हैं गई है ॥ १ ॥ औ सुंदर श्यामल  
 अंग औ सुंदर पीत रंग को वसन औ कटि में जो तरकस औ पदुका  
 तें फेट को बांधनि मोको भावति है औ कनकमृग के संग में जो ह  
 में सर चाप साजे हैं औ कमल सम नैन से जो इत उत देखत हैं औ  
 मोको भावति है ॥ २ ॥ औ सिर में जटासमूह को सुकुट जो सोहत है औ  
 अनेकन पुष्प लता ते जो बनावरी रची है सो मोको भावति है औ  
 तैसेई सुंदर श्रमकण जो मुख पर शोभत औ तैसेई सुंदर जे भृकुटि  
 की नवनि है सो मोको भावति है ॥ ३ ॥ खगन औ मृगिनयुग ह  
 जहाँ तहाँ के भ्रमनि विमारि के थकित देखत हैं । हरि के दरसन को  
 फल विमल ज्ञान पायो है ताते भक्ति जाचत हैं । जेहि भक्ति को मुनि  
 चाहत हैं ॥ ४ ॥ कदापि कोऊ कहै कि सब ते दुर्लभ ज्ञान है तेहि  
 पाए पर भक्ति क्यों जाचत हैं ता पर कहत हैं जिन्ह के मन सगुन वे  
 प्रेम में मगन भए हैं तिन्ह के लेखे निर्विशेष मुक्ति क्या है । अतएव  
 गीता में कहा । ब्रह्मभूतः मसन्नात्मा न शोचति न कांक्षति । समस्तसंशु  
 भूतेषु मद्भक्तिं लभते पराम् । पवनि कहें पावनि ॥ ५ ॥ ५ ॥

मोरठ । रघुवर दूरि छाड मृग माग्यो । लपन पुकारि  
 नाम हरण कहि मरतेहुं वयर संभाग्यो ॥ १ ॥ सुनहु तात  
 कोउ तुमहिं पुकारत प्राननाथ की नाई । काह्यो लपन हत्यो  
 हरिन कोपि मिय हठि पठये वरिआई ॥ २ ॥ वभ्यु बिबोधि  
 कहत तुलसी प्रभु भाई भली न कीन्ही । मेरे जान जानकी  
 काह पन छल करि हरि लीन्ही ॥ ६ ॥

रघु० । हरण धीरे अपर पद सु० ॥३॥ ६ ॥

भारत वचन काहति वैदेही । बिलपति भूरि बिसूरि दूरि  
 गये मृगसंग परम मनेही ॥१॥ कहे काटु वचन रेप नाथी मैं  
 तात छमा सो कौजै । देपि बधिकावस राजमरालिनि लपन  
 लाल छिनि लीजै ॥२॥ वन देवनि सिय कहन कहति यों छल  
 करि नीच हरी हैं । गोमरकर सुरधनु नाथ ज्यों त्यों पर-  
 हाथ परी हैं ॥३॥ तुलसिदास रघुनाथ नाम धुनि अकनि  
 गोध धुकि धायो । पुत्रि पुत्रि जनि डरहि न जैहै नीच मीघ  
 ही आयो ॥४॥ ७ ॥

भारत ३० । भूरि बिसूरि बहु चिंता करि वा बहुत उसास लेइ  
 ॥१॥ २ ॥ वनदेवतीन सो सीता जू श्री राम जू सो यों कहिये को  
 कहति है कि मोको छल करि के नीच ने हरी है । गोमर कहै कसाई  
 मोहि के कर सुरधनु जैसे पर तैसे परहाथ परी हैं ॥३॥ धुकि कहै वेग  
 करि नीच मीघ हैं आयो नीच जो रावण ताके मृत्यु राम में आयो ॥४॥ ७

फिरत न वारहिं वार प्रचाग्यो । चपरि चींच चंगुल हय  
 हति रघु पंड पंड करि डाग्यो ॥१॥ बिरय विकल कियो  
 छोन लीन्हि सिय वन-घायनि अकुलान्यो । तव अस्ति कांठि  
 कांठि पर पांबर लै प्रभुप्रिया परान्यो ॥२॥ रामकाज-धगराज



आज लखी जियत न जानकि त्यागी । तुलसिदास सुर सिद्ध  
सराहत धन्य विहग बड भागी ॥ ३८ ॥

चपरि चटकई करि ॥१॥ घन घायन बहुत घायन से ॥२॥३॥८॥  
टि०—असि तलवार । प्रभुप्रिया सीता । खगराज जटाघु ।

राग गौरी । हेम को हरिन हनि फिरे रघुकुलमनि  
लपन ललित कर लिये मृगछाल । आश्रम आवत बलि सगुन  
न भये भले फरके वाम बाहु लोचन विसाल ॥ १ ॥ सरित  
जल मलिन सरनि सूषे नलिन अलिन गुंजत कल कूजे न  
मराल । कोलनि कोलकिरात जहं तहं बिलपात बनन  
बिलोकि जात पग मृग माल ॥ २ ॥ तरु जी जानकौ लार्थे  
ज्याये हरि करि कपि हेरै न हुंकरि भरे फल न रसाल । जी  
सुकसारिका पाले मातु ज्यौं ललकि लाले तेऊ न पटत न  
पंढावै मुनिवाल ॥ ३ ॥ समुक्ति सहमे सुठि प्रिया तो न  
थाई उठि तुलसी विवरन परनहनसाल । चोरै सी सब  
समाजु कुसल देवीं आनु गइवरि हिये कहैं कीसलपाल ॥४॥८॥

हेम को हरिन जो मारीच ताको मारि के रघुकुलमनि फिरे । ताको  
सुंदर छाल लपनलाल हाथ में लिए । अतएव इनुमचाटक लंकाकाण्ड में  
एही मृगचर्म पर रघुनाथ को बैठव लिखे । अङ्के कृत्वोत्तमार्द्रं पुत्रगवलपतेः  
पादमक्षस्य हंतुर्भूमौ विस्तारितायां त्वचि कनकमृगस्याङ्गुशेपं निधाय ।  
बाणं रसःकुलद्रं प्रगुणितमनुजेनापितं तीक्ष्णमक्ष्णोः कोणेनोद्दीक्ष्यमाणस्त्र-  
दनुजवचने दत्तकर्णोपमास्ते ॥ १ ॥ माल समूह ॥ २ ॥ ज्याए जे हरि  
करि, कपि, सिंह, शर्पा यानर जे जानकी जी जिआए रहीं ॥३॥४॥९॥

आश्रम निरधि भूले द्रुम न फले फूलें अलि पग मानी  
कयहुं नहे । मुनिन मुनिबधूटी उजरी परनकुटी पंचवटी  
पश्चानि ठाटेई रटि ॥ १ ॥ उठि न सलिल लिये प्रेम प्रभु-

दिए बिटे टिका न उमरि टिक टहन करे । पलव मानन  
 रंगे टानकमला न दीरे विरह टिकरि लछि लछन गहे ॥२॥  
 देहे मरुपति मति विदुष टिकन अति तुलसी गहन विनु  
 टहन मरे । अलुख टिकी भरोसो तौली है मोच परोसो सिय-  
 मलाचार प्रभु तौली न लहे ॥३॥ १ ॥

आश्रम १० । नरे कहे नहीं रहे ॥ १ ॥ पलवमान कहे पर्ण-  
 माल ॥ २ ॥ गहन विनु टहन रहे बन ये आगि को जरि गयो । हे प्रभु  
 शीश को मलाचार करयो न मरे मरली मोच परोसो कहे खर के  
 समान अर्थात् ननिह ॥ ३ ॥ १० ॥

राग भोरठ । अक्षरिं सियमृधि मध मुरनि मुनाई । भये  
 मुनि मजग टिकरसरि पैरत मके पाहभी पाई ॥ १ ॥ कसि  
 तूनीर तौर धनु धर धर धीर धीर टोउ भाई । पंचवटो गोदहि  
 प्रनाम कारि पुटी टारिभी लाई ॥२॥ चले वृक्षत वन बलि  
 बिटप पग मृग अलि अघलि मुहाई । प्रभु को दसा सो समो  
 करिबे को कविउर आर न आई ॥३॥ रटनि अकनि पछि-  
 चानि गीध फिरे कामनालय रघुराई । तुलसी रामहि प्रिया  
 बिसरि गड मुनिरि मनेह सगाई ॥४॥ ११ ॥

अबहि १० ॥ १ ॥ धुर धीर धीरन में अग्रवर्ती, गोदहि गोदावरी  
 को ॥ २ ॥ ता समय में प्रभु की दशा कहिये को कवि के उर में आह  
 न आई । भाव कहिये में कवि जो समर्थ भए हैं सो वही आश्रय की बात  
 है । या सो दशा कहिये को कवि के उर में आह कहे समर्थता न आई  
 ॥ ३ ॥ अकनि मुनि ॥ ४ ॥ ११ ॥

मरे एको हाथ न लागी । गयो वपु वीति वादि कानन  
 क्यों कलपमता द्य दार्गी ॥१॥ दसरथ सो न प्रेम प्रतिपाल्यो ।  
 हतौ सकल जग सापी । बरवस हरत निसाचरपति सो हठि

न जानकी रापी । २॥ मरतन में रघुवीर विलोके तापस धेव  
वनाये । चाहत चलन प्राण पांवर विनु सिय सुधि प्रमुहि  
सुनाये ॥३॥ वार वार कर मीजि सौसधुनि गीधराज पकि-  
ताई । तुलसी प्रभु कृपाल तेहि औसर चाइ गये दीउ भाई  
॥ ४१२ ॥

मेरे ३० । अब गीधराज को परित्ताप कहत हैं कि मेरे एको धात  
हाथ न लागी नाइक हमार शरीर समाप्त भयो जैसे धन में कल्पलता  
अग्नि ते जरि जाइ ॥ १ ॥ सब जग जानत रह्यो कि महाराज दशरथ  
से औ जटायु से प्रेम है पर सो प्रेम महाराज दशरथ सो न प्रतिपात्यो ।  
भाव महाराज दशरथ की इच्छा रही कि श्रीराम राजा होई । तेहि में  
हम सहाय न किया । नाटके । न मैत्री निर्व्यूढा दशरथनुपे राज्यविषयान  
वैदेही त्राता दृढहरणतोरारक्षसपतेः । नरामस्यास्येन्दुर्नयनविषयोभूत्सुकृति-  
नोजटायोर्जन्मेदं वितथमभवद्भाग्यराहितम् ॥ याही श्लोक के अनुसार पर  
पद है ॥ १२ ॥

राघो गीध गोद करि लीन्हो । नयनसरोज सनेह सलिल  
मुंचि मनहुं अर्द्धजल दीन्हो ॥ १ ॥ सुनहु लपन पगप्रतिहि  
मिलि बन में पितु मरन न जान्यो । सहि न सक्थीं सो कठिन  
विधाता पडो पच्छ आजु भान्यो ॥ २ ॥ बहुविधि राम कछो  
तन रापन परमधीर नहि डोल्यो । रोकि प्रेम पावलोकि  
षटनविधु वचन मनोहर बोल्यो ॥ ३ ॥ तुलसी प्रभु भूठे  
जीवमलगि समय न धोपे लैहीं । जाको नाम मरत सुनि-  
दृष्टभ तुमहिं कहां पुनि पैहीं ॥ ४ ॥ १३ ॥

राघो ३० । खगपति गीधराज, भान्यो तोरथो, अपर पद सु० ॥३॥  
॥१३॥ टिप्पणी—अर्द्धजल मरनसमय जल देना ।

नीके के जानत रामचियो हीं । प्रनतपाल सेवक कृपाल-

चित पितु पटतरहि दियो हों ॥ १ ॥ तृणगजोनिगत गीध  
 जनम भरि पाद कुजन्तु जियो हों । महाराज सुकृती समाज  
 सब ऊपर आचु कियो हों ॥ २ ॥ स्रवन वचन सुप नाम  
 रूप चप राम उछंग लियो हों । तुलसी मो समान बडभागी  
 को कहि सकै वियो हों ॥ ३॥१४ ॥

नीकेइ० । अपने हृदय में श्रीराम को नीके के जानत हों । वा यों  
 कहैं एहि भांति ते नीके के जानत हों ॥१॥२॥ धवन सों श्रीराम को  
 वचन सुनत हों आ मुख से नाम लेत हों नेत्र सों रूप देखत हों आ  
 देह को श्रीराम गोद में लिए हें तो मो समान बड भागी वियो कहैं  
 दूसरे को को कहि सकेंगे ॥ ३॥१४ ॥

मेरे जान तात कछू दिन जीजै । देखिये आपु सुधन-  
 सेवा सुप मोहि पितु को सुप दीजै ॥ १ ॥ दिव्य देह इच्छा  
 जीवन जग विधि मनाइ मांगि लीजै । हरि हर मुजस मुनाय  
 दरस दे लोग कृतारथ कीजै ॥ २ ॥ देखि बदन सुनि वचन  
 अमिय तन राम नयन जल भीजै । बोल्यो विहग विहसि  
 रघुबर बलि कहीं सुभाय पतीजै ॥ ३ ॥ मेरे मरिवे सम  
 न चारि फल हींहि तो क्यों न कहीजै । तुलसी प्रभु दियो  
 उत्तर मौनहीं परीमानो प्रेम सहीजै ॥ ४॥१५ ॥

मेरेइ० । पुत्र की सेवा को मुख आप देखिए औ हम को पिता  
 का मुख दीजिये ॥ १ ॥ विधाता को मनाइ के दिव्य देह औ जग में  
 इच्छाजीवन मांगि लीजिये । हरिहर को जस मुनाय के औ आपन  
 दर्शन देइ के लोगन को कृतार्थ कीजिये ॥ २ ॥ रघुनाथ के मुख  
 को देखि कै औ वचनामृत को सुनि के औ श्रीराम के नयन जल से  
 तन को भीजै कै ॥ ३ ॥ मौने रूप उत्तर श्रीराम दियो मानों प्रेम में  
 सही परी । भाव रघुनाथ ऐसे वक्ता निरुत्तर भए ॥ ४॥१५ ॥

मेरो सुनियै तात संदेसी । सीयहरने जिनि कहिहु पिता  
 सों द्वैहै अधिक अंदेशी ॥ १ ॥ रावरे पुन्य प्रताप अनल महं  
 अल्प दिननि रिपु दहिहै । कुलसमेत सुरसभा दसानन  
 समाचार सब कहिहै ॥ २ ॥ मुनि प्रभुवचन आनि उर  
 मूरति चरनकमल सिर नार्द्ध । चल्यो नभ सुनंत रामे कल  
 कीरति अरु निजभाग बडार्द्ध ॥ ३ ॥ पितु ज्यों गीध क्रिया करि  
 रघुपति अपने धाम पठायो । ऐसे प्रभु बिसारि तुलसी सठ  
 तूं चाहत सुप पायो ॥ ४ ॥ १६ ॥

पद सु० ॥ १६ ॥

राग सूडव । सवरी सोड छठी फरकत वाम विलोचन  
 वाहु । सगुन सुहावने सूचत मुनि मन अगम उछाहु ॥  
 छन्द । मुनि अगम उर आनन्द लोचन सजल तनु पुलका-  
 वली । तन पर्नसाल वनाइ जल भरि कलस फल चाहन  
 चली ॥ मञ्जुल मनोरथ करति सुमिरति विप्रवर वानी भली ।  
 ज्यों कल्पवेलि सकेलि सुकृत सुफूल फूली सुप फली ॥ १ ॥  
 प्राणप्रिया पाहुने ऐहै राम लपन मेरे आजु । जानत जन  
 जियकी मृदु चित राम गरीवनेवाजु ॥ छन्द ॥ मृदुचित  
 गरीवनेवाजु आजु विराजिहैं गृह आइ कै । ब्रह्मादि संकर  
 गौरिपूजित पूजिहैं अब जाइ कै ॥ लहि नाथ हों रघुनाथ  
 वानो पतितपायन पाइ कै । दुहुं और लाहु अघाइ तुलसी  
 तीसरेहु गुन गाइ कै ॥ २ ॥ दोना रुचिर रचे पुरन खंद  
 मूल फल फूल । अनुपम अमियहु ते अंयक अयलोकत अनु-  
 फूल ॥ छन्द ॥ अनुफल अंयक अंय ज्यों निज डिंभ हित  
 सब आनि छै । सुंदर सनेहु सुधा सहस जनु सरस राधे

सानि कै ॥ छन भवन छन बाहिर बिलोकति पंथ भू परि-  
यानि कै । दोउ भाइ आये सवरि काकी प्रेमपनु पहिचानि  
कै ॥ ३ ॥ स्वयन सुनत चली आवत देखि लपन रघुराउ ।  
सिधिल सनेहु कहे हैं सपनी विधि कैधीं सतिभाउ ॥ छन्द ॥  
सतिभाउ कै सपनी निहारि कुमार कोसलराय कै । गहे  
वरन जे अघहरन नतजन वचन मानस काय कै ॥ लघु  
भाग भाजन उदधि उमग्यो लाभ सुप चित चाय कै । सो  
जननि ज्यौं आदरी सानुज राम भूपे भाय कै ॥ ४ ॥ प्रेम  
पट पांवरे देत सुषर्ष बिलोचन वारि । आश्रम लै दिये  
प्रासन पंकज पाय पधारि ॥ छन्द ॥ पद पंकजात पधारि  
पूजे पंथसम विरहित भये । फल फूल अंकुर मूल धरे  
सुधारि भरि दोना नये ॥ प्रभु पात पुलकित गात खाद  
सराहि आदर जनु जये । फल चारिहुं फल चारि देत पर-  
वारि फल सवरी दये ॥ ५ ॥ सुमन वरपि हरपे सुर मुनि  
सुहित सराहि सिद्धात । केहि रुचि केहि छुधा सानुज  
मांगि मांगि प्रभु पात ॥ छन्द ॥ प्रभु पात मांगत देति  
सवरी राम भोगी याग कै । बालक सुमित्रा कौसिला कै  
पाहुने फल साग कै ॥ पुलकत प्रसंसत सिद्ध सिध सनकादि  
भाजन भाग कै । सुनि समुक्ति तुलसी जानि रामहिं बस  
अमल अनुराग कै ॥ ६ ॥ रघुवर अंचइ उठे सवरी करि  
प्रनाम कर जोरि । हीं बलि बलि गर्इ पुरइ मंजु मनोरथ  
मोरि ॥ छन्द ॥ पुरइ मनोरथ स्वारथहु परमारथहुं पूरन करी ।  
अथ औगुनन की कीठरी करि कृपा मुद मंगल भरी ॥

तापस किरातनि कोल मृदु मूरति मनोहर मन धरो । सिर  
नाइ आयसु पाइ गवनी परम निधि पाले परी ॥ ७ ॥ सिध  
सुधि सब कष्टी नप सिप निरपि निरपि दीउ भाइ । दैदे  
प्रदच्छिना करत प्रनाम न प्रेम अवाइ ॥ छन्द ॥ अति प्रेम  
मानस रापि रामहिं रामधामहिं सो गर्इ । तेहि मातु ज्यो  
रघुनाथ अपने हाथ जल अंजलि दई ॥ तुलसी भनत सवरी  
प्रनति रघुवर प्रकृति करुनामई । गावत सुनत समुक्त  
भगति छिय छोइ प्रभुपद नित नई ॥ ८ ॥ १७ ॥

इति श्री रामगीतावल्यां चारण्यकाण्डः समाप्तः ।

सवरी ३० । सवरी सोय उठी वा काल में वाम नेत्र औ बाहु फर-  
कत जे ते सोहावने सगुन मुनिमन अगम उछाहु को सूचन करत हैं ।  
मुनिन को जो अगम सो आनन्द उर में है । नेत्र सजल हैं । तन में  
रोमांच हैं ऐसी जो सवरी सो तृन औ परन के गृह को संवारि के अर्थात्  
झारि बटोरि के औ कलस में जल भरि के फल लेइवे के अभिलाष  
से चली । चलत में सुंदर मनोरथ करति है औ विप्रवर जो मतंग ऋषि  
तिन की जो भली बानी ताको सुमरति है । जो बानी रूप कल्पवेलि  
सुकृत बटोरि के सुंदर फूल फूली रही सो अब मुख रूप फल फली ॥ १ ॥  
अब सवरी को मनोरथ कहत हैं । सवरी कहति है । हम नाय पाइ के  
अघाय के लाहु लहव औ श्रीरघुनाथ पतितपावन बाना पाय के अघाइ  
के लाहु लहव याते दूनो ओर लाभ अघाइ के है औ तुलसी से तीसरो  
गुन गाइके अघाय लहु लहव अपर सु० ॥ २ ॥ दोना सुंदर  
रचे ताको कंद मूल फल फूल ते पूरन किए । ते मूलादि कैसे हैं कि  
अमृतहु ते अनूप हैं औ अम्बक कहें नेत्र ता से देखतो में अनुकूल हैं  
अर्थात् सुंदरो हैं । नेत्रन के प्रिय जो फल हैं जैसे माता अपने बालक  
के हित आनै तैसे सब आनि के सुंदर सनेह जो है सो हजार गुन  
अमृत से सरस है मानो तासो सासो राखे । छन भीन छन बाहर भूमि  
पर हाथ दैके राह देखति है । सवरी के प्रेम की प्रतिज्ञा पहिचानि के

कर्म का अर्थ है। एतद् वाक्य कर्मिणो को परमात्मनि जो फल आदि  
 कर्म के फल हैं। माया को लक्ष्य आदि विचारों न हो ॥ ३ ॥ रघुना  
 काव्य है। एतद् अर्थान् गुणान् कर्मणो नो राम कर्मणो के भावत देखि  
 कर्म के विचार हैं। यह है कि हे विद्यावाचक सरना है कि माय है भाग्य  
 का फल नहीं है। जो काम गुणों को आनन्द के समुद्र समझो। अपर  
 ॥ ४ ॥ प्रेम रूप पद के शब्दों देन जो नेत्र जल को अर्पित और  
 काव्य में कल्याण के आसन दिए। फल चरणचमम पन्वारि के पूजे।  
 काव्य पदकर्म के विशेष रहित भय। फल फल अंशु मूल नए नए  
 होना से सुचारि के भवि भवि के भंग। तुल्यकित गान मने मगादि के मधु  
 पद मान हैं। मानों मगाहन नहीं हैं। आदर उन्मत्त कर्म हैं। मवरी ने  
 काव्य मायि के फल दिए। भाव कर आदि भय, मरीका आदि भोज्य,  
 काम आदि पोष्य, नासिकेन राम आदि पेय, जो फल कर्म हैं कि चारि  
 फल को मन्थारि हैं लक्ष्यारि देन हैं ॥ ५ ॥ गिरान फरिबे को यह  
 भाव कि हाय हम मवरी न भय। राम अमल अनुगम के निर्मल अनुगम  
 के वम हैं या अनुगम रूप अमल के वम हैं। अपर पद सुगम ॥ ६ ॥  
 कर्मनिधि पाले परी राम भक्ति पाई गई ॥ ७ ॥ तुलसी भानित गावत  
 मवरी मन्थारि गुनन करुनामयी रघुवर मरुत समुद्रत प्रभुपद भक्ति  
 निल नो हिय में होइ ॥ ८ ॥ १७ ॥

गिधु मोटे मोटे मुनिव, उगि से रहे किरात ।

सुंदर नहिं फोड रामराम, हरि हर कहु कादि जात ॥१॥

इति श्रीरामगीतावलीमहाशिकाटीकायां श्रीसीतारामकृपापात्र  
 श्रीसीतारामाय हरिहरमसादकृतौ आरण्यकाण्डः समाप्तः ।





श्रीसीतारामाभ्यां नमः ।

सटीक गीतावली—किष्किन्धाकाण्ड ।

मङ्गलाचरण—सोरठा ।

त्यागि बालि बलवान, दीन पीन सुग्रीव कहं ।  
मात कियो भगवान, को कृपाल अस हेतु विनु ॥ १ ॥

मूल ।

राग केदारा । भूपन वसन विलोकत सिय के । प्रेमवियस  
मन वेपु पुलक तन नीरज नयन नीरभरे पिय के ॥ १ ॥ सकुचत  
कहत सुमिरि उर उमगत सील सनेह सुगुनगन तिय के ।  
खामि दसा लपि लपन सया कपि पधिले हैं आंच भाठ  
मानो धिय के ॥ २ ॥ सोचत हानि मानि मग गुनि गुनि  
गये विघटि फल सकल सुखिय के । वरने यामवन्त तेहिं  
पपसर वचन विवेक वीर रस विय के ॥ ३ ॥ धीर वीर सुनि  
समुक्ति परसपर बल उपाय उघटत निज हिय के । तुलसिदास  
कह समउ कहि ते कवि । लागत निपट निठुर जड जिय के  
॥ ४ ॥ १ ॥

टीका ।

भूपण ३० । ऋष्यमूक पर्वत पर सुग्रीव ने श्रीजानकी जी को  
भूपण वसन श्रीराम जी को दिष्ट तेहि विलोकत मात्र श्रीराम जू को

मन प्रेम के विशेष बस भयो औ तन कंप औ पुलकावलीयुक्त भयो  
 औ कमल नैन में आंसू भरि आए ॥ १ ॥ सखा कपि सुग्रीव और  
 बांदर, माठ मटुका ॥ २ ॥ मन में हानि मानि के गुनि गुनि के सोचत  
 हैं कि सुकिय कहैं सुकृत के सकल फल विघटि कहै वीति गए हैं वीर  
 रस विय के वीर रस के बीज के ॥ ३ ॥ उघटत प्रगट करत ॥४॥१॥

प्रभु कपि नायक बोलि कह्यो है । बरषा गई सरद नृत  
 भाई अब लौ नहिं सिय सीधु लह्यो है ॥ १ ॥ जा कारन  
 तजि लोकलाज तनु राषि विद्योग सद्यो है । ताकी तो  
 कपिराजु आजु लागि कछु न काज निबह्यो है ॥ २ ॥ सुनि  
 सुग्रीव सभौत नमित भुष उतरु न देन चह्यो है । भाइ गये  
 हरि जूथ देखि उर पूरि प्रमोद रह्यो है ॥३॥ पठये वदि वदि  
 अवधि दसहुं दिसि चलि बल सबनि गह्यो है । तुलसी सिय  
 लागि भवदधि मानो फिरि हरि चहत मह्यो है ॥ ४॥१६ ॥

इति श्री रामगीतावल्यां किष्किन्धाकाण्डः समाप्तः ।

प्रभु ३० ॥ १ ॥ २ ॥ हरि वानर ॥ ३ ॥ अवधि वदि वदि पत्र  
 अवधि चौपाई रामायण में स्पष्ट है । मास दिवस महं आयेहु भाई ।  
 दशो दिशा को चलत भए पराक्रम को सब ने गह्यो है, गोसाई जी  
 कहत हैं कि जानकी जी के लागि संसार रूप समुद्र को मानो फेर हरि  
 महा चाहत हैं ॥ ४ ॥ २ ॥

इति श्री रामगीतावलीप्रकाशिकाटीकायां श्रीसीतारामकृपापाव  
 श्रीसीतारामीय हरिहरप्रसादकृतौ किष्किन्धाकाण्डः समाप्तः ।

श्रीसीतागमाभ्यां नमः ।

सटीक गीतावली—सुन्दरकाण्ड ।

सूक्त ।

राग केदारा—रजायसु राम को जव पायो । गाल सेलि  
मुट्टिका मुदितमन पयनपूत सिरनायो ॥ १ ॥ भालुनाथ  
नल नील साध चले वक्ती वालि को जायो । फरकि सुअंग भये  
सगुन कहत मानो भग मुद मंगल छायो ॥ २ ॥ देखि विवह  
सुधि पाइ गौध सो सबनि अपनो बलु मायो । सुमिरि राम  
तकि तरकि तोयनिधि लंक लूक सो आयो ॥ ३ ॥ खोजत  
घर घर जनु दरिद्रमन फिरत लागि धनु धायो । तुलसी  
सिय विलोकि पुनक्यो तनु भूरि भाग भयो भायो ॥ ४ ॥ १ ॥

टीका ।

रजायसुं ३० ॥ १ ॥ २ ॥ मायो कहैं तौल्यौ, तरकि कहैं कूदि, लंक  
लूक सो आयो लंका में लूक सम आयो । भाव लूक उत्पात सूचक होत है  
॥ ३ ॥ श्रीहनुमानजू श्रीजानकीजू को घर घर खोजत हैं जैसे  
दरिद्र को मन धन लागि धायो फिरत है भायो कहैं मन भायो ॥ ४ ॥ १ ॥  
देखी जानकी जव जाइ । परम धीर समीरमुत के प्रेम  
घर न समाइ ॥ १ ॥ कस सरीर सुभाय सोभित लगी उडि  
उडि धूलि । मनहु मनसिजमोहनी मनि गयो भोरि भूलि ॥ २ ॥

रटति निसिवासर निरंतर राम राजिवनयन । जात निकट  
न विरहिनी अरि अकनि ताते वयन ॥ ३ ॥ नाथ के गुन-  
गाथ कहि वापि दई मुदरो डारि । कथा मुनि उठि लई कर-  
पर रुचिर नाम निहारि ॥ ४ ॥ हृदय हर्ष विपाद अति पति-  
मुद्रिका पहिचानि । दास तुलसी दसा सो कहि भांति कहै  
वयानि ॥ ५ ॥ २ ॥

देखी इ० ॥ १ ॥ स्वाभाविक शोभित जो श्रीजानकीजू तिन को  
कृशित जो शरीर है तामें धूरि उड़ि उड़ि लगी है मानो काम भ्रम से  
अपने मोहनी मणि को भूलि गयो है ॥ २-॥ राति दिन निरंतर  
श्रीराम राजिवनैन रटति हैं । तात गरम वानी मुनि के विरहिनी अरि जो  
वायु सो निकट नहीं जात है । भाव जरि जावे के डर ते ॥३॥ करवर  
श्रेष्ठ कर में ॥ ४ ॥ ५ ॥ २ ॥

राग सोरठ—बोली वली मुदरी सानुज कुसल कोसल-  
पालु । अभिय वचन सुनाइ भेटहि विरह ज्वालाजालु ॥ १॥  
कहति हित अपमान भै कियो होत छिय सोइ सालु । रोप  
छमि सुधि करत कवहुं ललित ललिमन लालु ॥२॥ परसपर  
पति देवरहि का होति चरचा चालु । देवि कहु कीहि हेतु  
बोली विपुल वानर भालु ॥ ३ ॥ सीलनिधि समरथ मुसाहिव  
दीनबंधु दयालु । दास तुलसी प्रभुहि काहु न कछो नेरो  
हालु ॥ ४ ॥ ३ ॥

बोलीइ० । श्रीजानकीजू मुदरी से पूछति हैं कि हे मुदरी अनुज-  
सहित कोशलपाल को कुशल बोलु ॥ १ ॥ लपनलाल के हित कहते  
में मैं अपमान कियो सो सुमिरि हृद में साल होत है । पति जो श्रीराम  
औ देवर जो लखनलाल तिन्ह के आपुस में केहि चाल की चरचा  
होति है । हे देवि बहुत वानर भालु केहि हेतु बोलाए । संका । वानर  
भालु के बोलाइव श्रीजानकीजू कैसे जानी । उत्तर । मुदरी दारते में

ब्रह्मण जी रहे रहे । "नाथ के गुनगाय कहि कपि दियो मुदरी डारि"  
॥ ३१४॥३ ॥

सदग मनपन हैं कुमक हापालु कोमलगाउ । सीलसटन  
सतेहमागर सहज सरल मुभाउ ॥ १ ॥ नौद भूप न देव-  
रहि परिहरि को पछिताउ । धीर धुर रघुवीर को नाहिं सप-  
नेहं चितचाउ ॥ २ ॥ मोधु विनु अनुरोध रिपु को बोधु  
विहित उपाय । करत हैं सोइ समय साधन फलति बनति  
वनाउ ॥ ३ ॥ पठैं कपि दिमि दसहुं जी प्रभु काज कुटिल न  
काउ । बोलि लियो हनुमान करि सनमान जानि समाउ ॥ ४ ॥  
दई हों संकेत कहि कुसलात सियहि मुनाउ । देपि दुर्ग  
विनेपि जानकि जानि रिपु गति आउ ॥ ५ ॥ कियो सीय  
प्रबोध मुदरी दियो कपिहि लपाउ । पाइ अवसर नाइ सिर  
तुलसी सगुन गन गाउ ॥ ६ ॥ ४ ॥

सदल० । मुदरी की उक्ति कि दलसहित लखनलालसहित  
कुशल हूँ कुशलनाथ सो कुशल हैं ॥ १ ॥ देवर जो लपनलाल तिन  
को न नौद हैं न भूप है औ छोड़ि के जावे को पछिताव है । भाव मर्म  
बचन सहि लेत उहां से न जाते तो काहे को दुख भोगते वा दूर  
जाइ गए नर्गाच छप काहे न रहे औ धीरन में अग्रवती जे श्रीरघु-  
वीर तिन के चित्त में सपनो में आनंद नहीं है ॥ २ ॥ रिपु को खबर  
पय विना अनुरोध कहे रोक रहत है अर्थात् कुछ बनत नहीं तब रिपु  
बोध में जो विहित उपाय ताको लोक करत हैं सोई उपाय रूप  
मन समय पाय के फलति है औ वनाय बनत है एही न्याय के  
नुमार प्रभु ने रिपु के जानिये हेतु दसो दिसा में वानरों को पठए ।  
वानर प्रभु के काज में कुटिल कोऊ नहीं हैं । हनुमान में समाई जानि,  
बुलाय लियो हुनि सनमान करि के संकेत की धान यदि के हम को  
औ करत भए कि हमारी कुशलात जानकी जी को जाय मुनाओ

औ लंका गढ़ को औ विशेष जानकी जी को देखि कै औ रिपु की पराक्रम जानि कै हमारे ढिग आबो ॥३॥४॥५॥ एहि प्रकार ते मुदरी ने श्रीजानकी जी को विशेष बोध कियो औ हनुमान को देखाय दियो श्रीहनुमान जू अवसर पाय सिर नाथ कै श्रीराम के गुनसमूह कहन लगे ॥ ६॥४ ॥

सुअन समौर को धीर धुरीन वीर बडोइ । देखि गति सिय मुद्रिका की बाल ज्यों दियो रोइ ॥ १ ॥ अकनि कटु-बानी कुटिल की क्रोध विंध्य बढोइ । सकुचि सम भयो ईस आयसु कलस भव जिय जोइ ॥ २ ॥ बुद्धि बल साहस परा-क्रम अछत राघे गोइ । सकल साज समाज साधक समउ कह सब छोइ ॥ ३ ॥ उतरि तरु ते नभत पद सकुचात सोचत सोइ । चुके अवसर मनहु सुजनहिं सुजन सनमुष होइ ॥४॥ कहे बचन विनीति प्रीति प्रतीति नीत निचोइ । सीय सुनि हनुमान जान्यो भली भांति भलोइ ॥५॥ देवि विन कारतूति कहिबो जानिहै लघु खोइ । कहौंगो मुष की समर सरि कालिकारिष धोइ ॥ ६ ॥ कत कछु नहिं बनत हरि हिय हरष सोक समोइ । कहत मन तुलसीस लंका करौ सघन घमोइ ॥ ७॥ ५ ॥

सुअनइ० । धीरन में अग्रवर्ती बड़े वीर जो पवन को पूत से श्रीजानकीजू औ मुद्रिका की कुगति देखि कै जैसे बालक रोवे तैसे रोय दियो ॥ १ ॥ कुटिल रावन की कटुबानी सुनि कै हनुमान जी को क्रोध रूप विंध्य पर्वत बढ़त भयो पर श्रीराम की आज्ञा रूप अगस्ति को देखि कै सकुचि कै सम है जात भयो ॥ २ ॥ बुद्धि बल साहस पराक्रम के रहते इन सब के छपाय राखे फांइ ते कि सकल साज समाज के साधक समय है अस सब कोई कहत हैं ॥ ३ ॥ एत ते उतरि कै श्रीजानकी जू के पद में नमस्कार करत भए औ सो बात

कहना आ मोचन भए । भाव जब गवन कहु कहत रहा तब कुछ  
 वचनो अचमर के नृके पर मानो मुजन के से सन्मुख मुजन होय  
 ॥ ४ ॥ प्रीति पिश्राम नीति में निचोरि के नम्र वचन बोले श्रीजानकी  
 जो वचन सुनि के हनुमान को जान्यो औ यह विचारयो कि अब  
 क्या मर्त्यो भानि ते है ॥ ५ ॥ हनुमान जू बोले कि हे देवि विना  
 कृपि किए कहिये ते लोग लघु जानिई ताते कालिह समररूपी नदा  
 में मुव की करिखा घोड़ के तब कर्होगो ॥ ६ ॥ हरप, शोक में हृदय  
 मिलि रगो है ताते हनुमान जू सो कुछ करत नहीं बनत है । इहां हरप  
 वचन करि औ शोक दशा देखि । तुलसी के ईश जे हनुमान ते मन में  
 करत है कि लंका में सघन घमोड़ करौंगो । भाव अस चौपट करौंगो कि  
 करे जायंगो । घमोड़ को फोऊ देशवाले भंडभांड फोऊ देसवाले घमोड़  
 फोऊ देशवाले फटीला फोऊ देशवाले सत्यानाशी फोऊ देशवाले बंग  
 परत है ॥ ७॥५ ॥

राग केशरा । छौं रघुवंसमनि को दूत । मातु मानु  
 प्रतीति जानकि जानु मारुतपूत ॥ १ ॥ मै सुनी वाते  
 असेली कहि जे निधर नीच । क्यों न मारे गाल बैठो काल  
 हाठनि बीच ॥ २ ॥ निदरि अरि रघुवीर वल लै जाउं जौं  
 हाठि पाजु । डरौं आयसुभंग ते अरु विगरिहै सुरकानु ॥ ३ ॥  
 शोधि वारिध साधि रिपु दिन चारि में दोउ वीर । मिल-  
 दिगै कपि भालु दल संग जननि उर धरु धीर ॥ ४ ॥ चित्र-  
 कृतया कुसल कहि सीस नायो कीस । सुहृद सेवक नाथ  
 को लधि दई अचल असोस ॥ ५ ॥ भये सीतल सयन तन  
 मन मुने वचन पिथूप । दास तुलसी रही नयननि दरस ही  
 । भूप ॥ ५ ॥ ६ ॥

हो ६० ॥ १ ॥ चारें असेली अमर्जाद की चारें फाल के मुख में  
 चौपटि है ताके बीच में बैठयो है तब क्यों न गाल मारें । भाव गाऊ



नहीं मारत है सन्निपात करि जल्पत है ॥ २ ॥ श्रीरघुवीर के बल ते  
अरि की निरादर करि कै हठि करि जो आप को ले जावं तो श्रीराम  
जू की आज्ञाभंग ते डरत हौं औ देवतन को काज विगरैगो ताते डरत  
हौं ॥ ३ ॥ इहां चारि दिन अल्प दिन को बोधक है ॥ ४ ॥ चित्रकूट  
की कथा अर्थात् जयंत की कथा औ श्रीराम की कुशल कहि के हनुमान  
ने शीस नवाए । चित्रकूट की कथा जो कहे ताको यह भाव कि तुम्हारे  
हेतु इन्द्र के वेदा की कैसी दुर्दशा किए तब और की कहा चली ॥५॥६॥

तात तोह्र सों कहत छोति हिये गलानि । मन को  
प्रथम पनु समुक्ति अछत तन लखि नई गति भई मति  
मलानि ॥ १ ॥ प्रिय को वचन परिहयो जिय के भरोसि  
संग चली वन बडो लाभ जानि । प्रीत विरह तौ समेह  
सरवसु सुत ओसर को चूकियो सरिस न जानि ॥ २ ॥  
आरंजसुभन के तौ दया दुअवनहु पर मोहि सोच मोते सब  
विधि नसानि । आपनौ भलाई भलो कियो नाथ सब ही  
को मेरे ही अदिनवस विसरौ वानि ॥ ३ ॥ नेम तो पपीहा  
ही के प्रेम प्यारी मीन ही के तुलसी कछो है नीके हृदय  
पानि । इतनो कछो सो कछो सोय ज्योंही त्योंही रही  
प्रीति परि सछो सो न वसानि ॥ ४ ॥ ७ ॥

तात ३० । हे तात तुमहें से कहत हृदय में गलानि होति है । मन  
को जो प्रथम पनु रह्यो भाव श्रीराम विनु हम निभय नाहीं सो तन  
को विद्यमान समुक्ति के यह नई गानि देखि के हमारी गानि मन्थन भई  
॥ १ ॥ प्रिय कहत रहे कि तुम पर में रहो नेहि वचन को त्याग्यो  
निभये के भरोसे मे भी वन में यदा लाभ जानि के भंग अछि पर  
मनेह को गरवत जो पीतम तिन को विरह भयो तब हे सुन अरम  
पुनरे मगि हानि नहीं है । भाव विदग्धने नगिर छोड़ि देना रहा । का  
‘नानिदाविन्द ने तनेह सर्वग’ पाठ होय तो भग भय करना कि वहाँ

भ्रम नन में जानी शून न्याय जानी कि प्रीतम के विरह ते प्रीतम को  
 नन सरवम है । भाव नाने गंग चलना चाहिए सो प्रीतम को विरह  
 नन भयो तानो हम मदे याने अयमर चुकियो सरिस दानि नहीं है  
 नन त्याग देना गहा ॥ २ ॥ आर्जे जो श्रेष्ठ दशरथ महाराज तिन  
 दुष्ट का दया दुष्टो पर है । भाव नव जो मरनागत हैं तिन को को  
 नन । सो ते सब दिनमाय गई है याने हम को सोच है आपने भलाई ते  
 नन सब को भलो कियो है पर मेरी ही अदिनवश नाथ हूँ की भलाई  
 की नानि दिसरि गई है ॥ ३ ॥ नेम तो पर्याई को ठीक है । भाव वाको  
 प्रीतम पंच केतनो निरादर करन है ताको नहीं मानत है औ प्यारी  
 प्रीतम को प्रेम है भाव प्रीतम जो जल तेहि विनु नहीं जीअत है । नीके  
 हृदय में आनि के जानकी जू ने यह कही है । यतनी कही सो कही  
 जानकी जू ज्यों के त्यों रही भाव काष्ठवत् है रही । प्रीति की तो सही  
 परी अर्थात् अपनपो भूलि गई पर विधाता सो कुछ न बसान ॥४॥७॥

मातु काहे को कहति अति वचन दीन । तब की तुहीं  
 कहांति अब को होहिं कहत सब के जिय की जानत प्रभु  
 प्रवीन ॥ १ ॥ ऐसे तो सोचहिं न्याय निठुर नायक रत  
 सबभ कुरंग पग कमल मीन । करुनानिधान की ती ज्यों  
 ज्यों तनु छीन भयो त्यों त्यों मन भयो तेरे प्रेम पीन ॥ २ ॥  
 सिय को सनेह रघुवर की दसा सुमिरि पवनपूत देख्यो  
 प्रीतिलोन । तुलसी जन को जननिह्न प्रबोध कियो समुक्ति  
 तात जग विधिअधीन ॥ २२॥८ ॥

मातु इ० । हे मातु काहे को अति दीन वचन कहांति हो । तब की  
 तुहीं जानति हो । भाव कैसे प्रीति तुम्हारे में रही औ अब जैसी है  
 हम हम कहत हैं औ सब के जिय की प्रभु प्रवीन जानत हैं । भाव तुम  
 को विरहिनी जानी क्यों न विरही होहिंगे ॥ १ ॥ जस तुम सोचति  
 सो तस निठुर नायक में जे रत हैं ते सोचहिं तो न्याय कहें युक्त हैं जैसे  
 कुरंग, पर्याहा, हरिन, कमल, मीन को निठुर नायक दीपसिखा, मेघ,

राग, सूर्य, जल ये सब हैं ते सोचहिं औ करुनानिधाने श्रीराम को तो  
ज्यों ज्यों तन छीन भयो त्यों त्यों तुम्हारे प्रेम में मन पीन भयो ॥२॥  
श्रीजानकी जू को नेह औ रघुवर की दशा सुमिरि के जब पवनपूत  
प्रीति में लीन भयो तब जानकी जू देखि हनुमानजी को प्रबोध कियो  
कि हे तात विधाता के आधीन जग जानो ॥ ३ ॥ ८ ॥

राग जयतिश्री । कछो कपि कब रघुनाथ कृपा करि  
हरिहैं निज वियोगसंभव दुष । राजिवनयन मयन अनेक  
छवि रवि कुल कुमुद सुपद मयंक सुप ॥ १ ॥ विरह-अनल  
सहाय समीर निज तनु जरिवे कहं रही न कछु सक । अति  
बल जल वरषत दोउ लोचन दिन अरु रदनि रहत येकहि  
तक ॥ २ ॥ सुदृढ ज्ञान अवलंबि सुनुहु सुत रापति प्राण  
विचारि दहन मत । सगुन रूप लीला विलास सुप सुमिरन  
करत रहत अंतरगत ॥ ३ ॥ सुनु हनुमंत अनंत बंधु करुना  
सुभाव सुशील कोमल अति । तुलसिदास एहि त्रास जानि  
जिय बरु दुष सहीं प्रगट न कहि सकति ॥ ४ ॥ ९ ॥

कहो ३० । निज वियोग सम्भव अपने वियोग ते उत्पत्ति ॥ १ ॥  
निज स्वास रूप वायु के सहाय युक्त जो विरहानल तामें तन के जरिवे  
कहं कछु संदेह न रही । पर दिन औ राति एकै तार से दोउ लोचन  
मवल जल वर्षत हैं । भाव नैन रूप भेष जरिवे नहीं देत हैं ॥ २ ॥ हे  
सुत सुन्दर दृढ़ ज्ञान को अवलम्बन करि के भाव राघो जा को अपना-  
वत हैं ताको त्यागते नहीं एहि ज्ञान के अवलम्बन करि जराइवे के मत  
ते विचारि के प्राण को राखति हैं औ भीतर सगुन रूप के लीला  
विलास को सुख सुमिरन करत रहत हैं ॥ ३ ॥ हे हनुमंत लपनलाल  
भाई कारुण्य सुशील औ अति कोमल हैं एहि त्रास ते प्रगट नहीं  
सकति हैं भाव तुम जब जाय कहोगे तब विकल होय जाहिगे  
ते बरु दुख सहत हैं ॥ ४ ॥ ९ ॥

राग केदारा । कवहुं कपि राघव आवहिंगे । मेरे  
 नयन चकोर प्रीतिवस राकाससिमुष दीपरावहिंगे ॥ १ ॥  
 मधुप मरान मोर चातक है लोचन बहु प्रकार धावहिंगे ।  
 अंग अंग छवि भिन्न भिन्न सुप निरपि निरपि तहं तहं छाव-  
 हिंगे ॥२॥ विरह अग्नि जरि रही लता ज्यों कृपादृष्टि जल  
 पलुहावहिंगे । निजवियोगदुप जानि दयानिधि मधुरवचन  
 कहि समुक्तावहिंगे ॥ ३ ॥ लोकपालु सुर नाग मनुज सब  
 परे वंदि कव मुकुतावहिंगे । रावनवध रघुनाथ विमल जस  
 नारदादि मुनि जन गावहिंगे ॥ ४ ॥ यह अभिलाष रदनि  
 दिन मेरे राज विभोपन कव पावहिंगे । तुलसिदास प्रभु मोह-  
 जनित भ्रम भेद बुद्धि कव विसरावहिंगे ॥ ५ ॥ १० ॥

कवहुं ३० । हमारे प्रीतिवस नैन रूप चकोर को मुख रूप पूर्ण-  
 चन्द्र को कव देखरावेंगे । राका नाम पूर्णवांसी को है ॥ १ ॥ लोचन  
 जो सो भ्रमर हंस मोर पपीहा है के बहुत प्रकार ते कव धावेंगे औ  
 अंग अंग की छवि में भिन्न भिन्न मुख देखि देखि के तदां तदां कव  
 छाय रहेंगे । भाव भ्रमर है मुख नेत्र कर पद रूप कमलन में औ हंस  
 है के नाभी रूप सर में औ मोर है के गंभीर गिरा रूप गर्जन में औ  
 पपीहा है स्वाम शरीर रूप घन में कव छावेंगे ॥ २ ॥ ३ ॥ मुक्तावहिंगे  
 छोड़ावहिंगे ॥ ४ ॥ गोसाईजी कहत हैं कि जानकीजी कहति हैं कि  
 मधु हमारे मोह जनित भ्रम को अर्थात् कनकमृग विषयक जो भ्रम  
 भयो ताको औ भेद बुद्धि को अर्थात् लक्ष्मणजू में जो आनि भाति की  
 बुद्धि भई ताको कव विसराइ देहिंगे । भाव यह दूनों दोष हमारे कव  
 भूलि जाहिंगे ॥ ५ ॥ १० ॥

सत्य वचन सुनु मातु जादना । जन के टुप रघुनाथ  
 दुपित अति सहज प्रकृति करुनानिधान की ॥ १ ॥ तुव

वियोग संभव दारुन दुःख विसरि गई महिमा सुवान की ।  
 नत कहुं कहं रघुपति सायक रवि तम अनीक कहं जातु-  
 धान की ॥ २ ॥ कहं हम पसु सायक चंचल वात कहौं  
 विद्यमान की । कहं हरि सिव अज पूज्य ज्ञान धन नहिं  
 विसरति वह लगनि कान की ॥ ३ ॥ तुव दारुन संदेश  
 सुनि हरि को बहुत भई अवलंब प्रान की । तुलसिदास गुन  
 सुमिरि राम के प्रेममगन नहिं सुधि अपान की । ५॥१॥

सत्य वचन ३० ॥ १ ॥ तुम्हारे वियोग ते उत्पन्न जो कठिन दुःख  
 ताते सुंदर जो वान की महिमा सो विसरि गई । नहिं तो तुम ही कहो  
 कहां रघुपति को शायक सूर्यसम कहां राक्षसों की सेना तमसम ॥२॥  
 कहां हम पशुन में चंचल वांदर औ कहां विष्णु शिव ब्रह्मा करि के  
 पूज्य ज्ञानस्वरूप श्रीराम । वात कहौं मैं विद्यमान की हमारे पर जो वीती  
 है सो वात कहत हौं जेहि प्रकार ते हमारे कान में लागि वात कहे सो  
 विसरत नहिं । इहां श्रीराम की अति करुना जनाए । तथा च स्मृतिः ।  
 “ब्रह्मविष्णुमहेशाद्या यस्यांशा लोकसाधकाः । तमादिदेवं श्रीरामं विशुद्ध-  
 म्परमभजे” ॥ १ ॥ ३ ॥ तुम्हार दर्शन तुम्हार संदेशा सुनि के हम  
 जानत हैं कि श्रीराम को प्रान की बहुत अवलंब भई । हनुमान जी श्री-  
 राम को गुनगन सुमिरि के प्रेम में मगन भये ताते अपनपो भूलि गए  
 ॥ ४ ॥ ११ ॥

राग कान्हरा । रावन जो मैं राम रन रोषि । की सहि  
 सकै सुरासुर समरथ विसिप काल दसननि ते चोषे ॥ १ ॥  
 तपवल मुजवल कै सनेहवल सिव बिरंचि नीकी विधि  
 तोषे । सो फल राज समाज सुचन जन आपुन नास आपन  
 पोषे ॥ २ ॥ तुला पिनाक साह नृप त्रिभुजन भट बटीरि  
 सब के बल जोषे । परसुराम से सूर सिरोमनि पल में भये  
 पित के से धोषे ॥ ३ ॥ कालि की वात बालि की सुधि करि

समुक्ति हितहित पोलि भरीये । कछो कुमंविन को न  
मानियै बड़ी हानि जिय जानि त्रिदोषे । ४॥जासु प्रसाद जन्मि  
जग पुरुषनि सागर सृजि पने अरु सोये । तुलसिदास सो  
स्वामि न सूभयो नयन बौस मंदिर कैसे मोये ॥ ५ ॥ १२ ॥

रावन ३० । अब श्रीहनुमान जी औ रावन को संवाद लिखत  
है ॥ १ ॥ तपबल ते कै भुजबल ते कै सनेहबल ते शिव विरंघि  
को नीको विधि से प्रसन्न किए, ताको फल राज समाज औ पुत्र सेवक  
पाए सो आप ने पोपे को आपुहि मति नाशो ॥ २ ॥ राजा जनक  
रूप साहु ने त्रिभुवन के भट बटोरि के सब के बल को पिनाक रूप  
तराजू पर जोपे, भाव सब का पलरा उठि गया, श्रीरामहि का पलरा  
न उठा औ जेहि श्रीराम के आगे मूरशिरोमणि परसुराम से पल में  
खेत के धोपे से भए, भाव देख ही मात्र के रहि गए ॥ ३ ॥ अब ही  
बाल की बात कालि की है भाव थोड़े दिन की है ताको मुधि करि  
के हृदय रूप झरोपा को पट खोलि के हित अहित समुझि कुमंविन को  
त्रिदोषे जानि अर्थात् कालवश जानि इन को क्यों न मानिए कोह  
ते कि बड़ी हानि है ॥ ४ ॥ जेहि के प्रसाद ते जगत में पुरुषं जनम  
के समुद्र को उत्पन्न किए औ खंदे औ सोखे । समुद्र को छेजे नियग्रन  
ने, औ खोदे सगर महाराज के पुत्रों ने, सोखे अगस्ति ने । मांगे करे  
सरांखे ॥ ५ ॥ १२ ॥

राग मारु—जौं हीं प्रभु धायसु लै चलतो । तौ यहि  
रिसि तोहि सहित दसानन जातुधान दल दलतो ॥ १ ॥  
रावन सो रसराज सुभट रस सहित लंक पल पलतो ।  
करि पुट पाक नाकनायक हित घने घने घर घलतो ॥ २ ॥  
बहे समाज लाज भाजन भयो बडो काज विनु दलतो ।  
लंकनाथ रघुनाथ वयर तरु बाजु फेलि पुलि फलतो ॥ ३ ॥  
काल कर्म दिगपाल सकल लग लाल लामु परतलतो ।

भाव जो तन न छूटा तो कहा प्रेम ॥ ३ ॥ कहूँगा श्रीजानकी जू की  
दशा देखि कोप रावण पर लाज जस चाहिए तस न करने को भय  
विनु आज्ञा लंका जराइवे को तासो भरयो चरण कमल सिर नाय के  
मौनहीं कपि गमन कियो यह समय स्नेह को सर्वस्व है औ तुलसी की  
रसना रूखी है ताही ते गायो परत है । भाव सरस होती तो वाझ जाती  
॥ ४॥१५ ॥

राग वसंत—रघुपति देपो आयो आयो हनुमंत । लंकेस  
नगर पैल्यो वसंत ॥ श्रीरामराजहित सुदिन सोधि । साथी  
प्रबोधि लांघो पयोधि ॥ १ ॥ सिय पाय पूजि आसिपा पाय ।  
फल अमिय सरिस पाये अघाय ॥ कानन दलि होरो रचि  
वनाय । हठि तेल वसन बालधि बंधाय ॥ २ ॥ दिय डोल  
धले संग लोग लागि । बरजोर दर्ई चहुँओर आगि ॥ आपत  
आहुति किये जातुधान । लपि लपट भभरिं भागें विमान ॥३॥  
नभ तल कौतुक लंका विलाप । परिनाम पचहिं पातकी  
पाप ॥ हनुमान हांक सुनि बरष फूल । सुर वार वार वरनहिं  
लंगूल ॥ ४ ॥ भरि भुञ्जन सकल कल्याण धूम । पुर जारि  
वारिनिधि वोरि लूम ॥ जानको तोपि पोपेउ प्रताप । जै  
पवनसुञ्जन दलि दुञ्जनदाप ॥ ५ ॥ नाचहिं कूदहिं कपि  
करि विनोद । पीवत मधु मधुवन मगन मोद ॥ यों कहत  
लपन गहे पाय आय । मनिसहित मुदित भेंख्यो उठाय ॥६॥  
लगे सजन सैन भयो हिय हुलास । जय जय जस गावत  
तुलसिदास ॥ ७ ॥ १६ ॥

रघुपति ३० ॥ १ ॥ साथी जामवंत आदि ॥ २ ॥ बालधि लंगूर  
॥ ३ ॥ आहुति को आपत रूप निसाचरों को किए । भभरि भद्रकि  
परिनाम पचहिं पाप ने पातकी अंत में पचत हैं तो क्यों न लंका में

। तोर ॥ ४ ॥ नृमि न्दुर ॥ ५ ॥ पोप्यो मनाप लेका जराइ

। गगन मनाप को पुष्ट कियो । दृभन टाप कहं दुष्टन को अहंकार ॥ ६ ॥  
 । दृदापनि । शंका । ए मय नक्ष्मण जी कैमे जाने । उत्तर । सर्व-  
 जा करि ॥ ७ ॥ १६ ॥

राग अथतिथो । गुनहु राम यिस्वामधाम हरि जनक-  
 सुता पति विपति जैम महति । हे सौमित्रि वंधु करुणा-  
 निधि मन महु रटति प्रगटहु नहिं कहति ॥ १ ॥ निज पद  
 बनज बिलोक भीकरत नयननि वारि रहत न एक कन ।  
 मनहु नोत नौरज समि संभव रवि वियोग दोउ स्रवत सुधा-  
 कन ॥ २ ॥ बहु राक्षसो महित तरु के तर तुम्हरे विरह  
 निज जन्म दिगोवति । मनहुं दुष्ट इन्द्रिय संकट महं बुद्धि  
 विवेक उदय मगु जोवति ॥ ३ ॥ सुनि कपिवचन विचारि  
 हृदय हरिं अनपाइनी सदा सो एक मन । तुलसिदास दुष  
 दुघातीत हरि मोच करत मानहु प्राकृत जन ॥ ४ ॥ १७ ॥

हे सौमित्र वंधो हे करुणानिधि अस जानकी जू मन महं रटति हैं  
 औ प्रगट नहीं कहति हैं भाव, अति वियोग ते बोलि नहीं सकति हैं  
 वा राक्षसन के भय ते ॥ १ ॥ अपने चरणकमल को देखत रहति हैं  
 नीचे सिर करना एक शोकमुद्रा है औ शोक में रतह हैं औ भांखिन  
 में आंशु एक छन टिकत नहीं मानो चंद्रमा ते उत्पन्न जे दोऊ स्याम  
 रंग के कमल ते सूर्य के वियोग ते सुधाकण श्रवत हैं । इहां दोऊ श्याम  
 कमल नेत्र हैं । मुख समि है । रवि श्रीराम हैं । सुधाकण आंशु हैं । २ ॥  
 तरु के तर में बहुत राक्षसिन के सहित तुम्हारे विरह में आपन जन्म  
 बिनावति हैं मानो बुद्धि दुष्ट इन्द्रिय के संकट में विवेक उदई की राह  
 ताकति हैं । इहां दुष्टेन्द्री राक्षस हैं, पुद्धि श्रीजानकी जू हैं औ विवेक  
 श्रीरायव हैं ॥ ३ ॥ हरि कपि की वार्ते सुनि कै औ हृदय में अस विचारि  
 के कि सो जानकी जू एक मन में सदा अनपायनी कहें नागरहित



भाव जो तन न छूटा तो कदा प्रेम ॥ ३ ॥ करुणा श्रीजानकी जू  
 दशा देखि कोप रावण पर लाज जस चाहिए तस न करने को भ  
 विनु आज्ञा लंका जराइवे को तासो भरयो चरण कमल सिर नाप  
 मौनहीं कपि गमन कियो यह समय स्नेह को सर्वस्व है औ तुलसी क  
 रसना खुली है ताही ते गायो परत है । भाव सरस होती तो वाक्षि जर्त  
 ॥ ४॥१५ ॥

राग वसंत—रघुपति देयो आयो आयो हनुमंत । लंकेस  
 नगर पैल्यो वसंत ॥ श्रीरामराजहित मुदिन सोधि । साथी  
 प्रबोधि लांघो पयोधि ॥ १ ॥ सिय पाय पूजि आसिया पाय ।  
 फल अमिय सरिस पाये अघाय ॥ कानन दलि हीरो रचि  
 वनाय । हठि तेल बसन बालधि बंधाय ॥ २ ॥ दिग्ग ठोल  
 चले संग लोग लागि । वरजोर दर्ई चहुंओर आगि ॥ आपत  
 आहुति किये जातुधान । लपि लपट भभरि भागे विमान ॥३॥  
 नभ तल कौतुक लंका विलाप । परिनाम पचहिं पातको  
 पाप ॥ हनुमान हांक सुनि वरप फूल । सुरं वार वार वरनहिं  
 लंगूल ॥ ४ ॥ भरि भुवन सकल कल्याण धूम । पुर जारि  
 वारिनिधि वोरि लूम ॥ जानको तोपि पोपेउ प्रताप । कै  
 पवनसुअन दलि दुअनदाप ॥ ५ ॥ नाचहिं कूदहिं कपि  
 करि विनोद । पीवत मधु मधुवन मगज मोद ॥ यों कइत  
 लपन गहे पाय आय । मनिसहित मुदित भेंव्यो उठाय ॥६॥  
 लगे सजन सैन भयो हिय हुलास । जय जय जस गावत  
 तुलसिदास ॥ ७ ॥ १६ ॥

रघुपति ३० ॥ १ ॥ साथी जामवंत आदि ॥ २ ॥ बालधि संगूर  
 ॥ ३ ॥ आहुति को आपत रूप निसाचरों को किए ।  
 परिनाम पचहिं पाप ने पातकी अंत में पचत हैं तो

परि के उर पर गिरावति हैं मानो हृदय में विरह के तुरन्त को घाव  
 देखि के धीरज धरि के तकि तकि के ततारनि कहैं छीटा देति हैं । अंतर  
 गति हाराति भीतर से हाराति हैं ॥ ३ ॥ १९ ॥

तुम्हरे विरह भई गति जौन । चित दै सुगहु रामबानना-  
 निधि भानौ वाहु पै सकों कहि छौ न ॥ १ ॥ लोचन नीर  
 रूपन के धन ज्यों रहत निरंतर लोचन यौन । छा धुनि  
 पगी लाज पिंजरी महं रापि छिये वडे वधिक छठि मौन ॥ २ ॥  
 जेहि वाटिका बसति तहं पग मृग तजि तजि भजे पुरातन  
 मौन । स्वास समीर भेंट भई भोरहुं तेहि मगु पगुं न धख्यो  
 तिहु पौन ॥ ३ ॥ तुलसिदास प्रभु दसा सीय की मुप करि  
 कहत होति अतिगौन । दीजि दरस दूरि कीजै दुप छौ तुम  
 चारति चारतदोन ॥ ४ ॥ २० ॥

तुम्हरे ३० । हे करुणानिधि राम तुम्हरे विरह में जानकी जू की जौ  
 गति भई हैं ताको चित दै के सुगहु रूप फलु जानत हैं पै कहि नहीं  
 सकत हों ॥ १ ॥ निरंतर नेत्रन के कोन में नेत्रन को जल रस दे  
 जैसे कृपिन को धन कोने में रहत है । लाजरूपी पिंजरा महं रापुनि  
 रूपी पक्षिणी को वडे वधिक रूप मान ने छठि करि के राग्यो है ॥ २ ॥  
 जेहि वाटिका में श्रीजानकी जू बसति हैं तहां ते रस मृग अपना  
 माचीन भौन छोड़ि के भजे । भाव शरीर से विरहानल की तपनि जो  
 छत्रि है ताको न सहि सकी । स्वास औ समीर ते जो भूरीठ के भेट  
 भई तो फेर तेहि पग तीनों समीर शीतल मंद सुगंध पग न धरयो ।  
 भाव एक धार काहू भाग से बधि गए फेर जाइवे ते स्वास दण्ड  
 देगो ॥ ३ ॥ हे प्रभु सीय की जो दसा है मो मुप करि कहिये ते  
 अनि गाण होनि है दरशन दीजे औ दुख को दूर जाने पावे ते दि  
 हम आर्ष की आर्षि दादक हो ॥ ४ ॥ २० ॥

कपि के मुनि फल कोमल यदन । प्रेमदुलकि रुद माल

भक्ति में स्थित हैं। गोसाईं जी करते हैं कि दुख सुख ते रहित जो हरि  
सो प्राकृत जन सम शोच करत हैं ॥ ४१७ ॥

राग कैदारा—रघुकुलतिलक वियोग तिहारे। मैं दीपी  
जब जाइ जानकौ मनहुं विरहमूरति मनमारे ॥ १ ॥ चित्र  
से नैन भरु गढे से चरन कर मढे से सयन नहि सुनति सु-  
कारे। रसना रटनि नाम कर सिर चिर रहै नित निजपद  
कमल निहारे ॥ २ ॥ दरसन आस लालसा मन महं राधे  
प्रमुध्यान प्रान रपवारे। तुलसिदास पूजति चिजटा नीके  
रावरे गुनगन सुमन सवारे ॥ ३ ॥ १८ ॥

रघुकुल इ०। मानो विरह की मूरति हैं ताहू में उदास ॥ १ ॥  
तसवीर के नेत्र सम नेत्र हैं। भाव अचल है रहे हैं औ गढे से चरन  
कर हैं। भाव चेष्टा रहित हैं। मूदे सम कान हैं। ताते धीरे से को  
पुकारे से भी नहीं सुनति हैं। जीभ ते नाम को रटति हैं औ बहुत दे  
तक माथ पर हाथ धरे रहाति हैं औ अपने चरणकमल को सदा निहारे  
रहाति हैं ॥ २ ॥ आप के दर्शन की आशा औ लालसा मन में राखे  
हैं। ताते प्राण के रक्षा करनिहारो प्रभु को ध्यान राखे हैं औ रावरे  
गुनगन रूप संवारे भए फूल ते वृजदा नीके पूजति है ॥ ३ ॥ १८ ॥

अतिहि अधिक दरसन की आरति। रामवियोग असोक  
विटपतर सौय निमेष कल्पसम टारति ॥ १ ॥ बार बार वर-  
वारिज लोचन भरि भरि वरत वारि उर टारति। मनहुं  
विरह के सद्य घाय हिये लपि तकि तकि धरि धीर ततारति  
॥ २ ॥ तुलसिदास यद्यपि निसिवासर छन छन प्रभु मूरतिहि  
निहारति। मिटति न दुसह तापतउ तनु की यह विचारि  
अंतरगति हारति ॥ ३ ॥ १९ ॥

आति इ० ॥ १ ॥ बार बार श्रेष्ठ कमल लोचन में गरम जल भारि



सिद्धिल भये भरे सखिल सरसीकहनयन ॥ १ ॥ सियवियोगी-  
सागर नागर मनु वूडन लग्यो सहित चितचयन । लहरी  
नाव पवनजप्रसन्नता वरवस तहां गह्यो गुनमयन ॥ २ ॥  
सकात न वृष्णि कुसल वृष्णे विनु गिरा विपुल व्याकुल उर  
अयन । ज्यों कुलीन सुचि सुमति वियोगिनि सनमुष सहै  
विरह सर पयन ॥ ३ ॥ धरि धरि धीर वीर कोसलपति किये  
यत्न सके उतन न दयन । तुलसिदास प्रभु सपा अनुज र  
सयनहिं कछो चलहु सजि सयन ॥ ४ ॥ २१ ॥

कपि ३० ॥ १ ॥ श्री जानकी जू के वियोग रूपी समुद्र में श्रीराम  
जू के मन जो नागर सो; अपने चित्त के आनन्दसहित वूडन लग्यो  
तहां पवनसुत की प्रसन्नता रूप नौका लहरी पर तहज वरवस ते काम  
ने गुन को गह्यो । भाव मन को खीच्यो पवनजप्रसन्नता को नवका  
कहिये को यह भाव कि इन की प्रसन्नता ते जानि परत है शीघ्र रावण  
जीत्यो जायगो ॥ २ ॥ श्रीराम कुशल नहीं बुझि, संकत हैं औ कुशल  
बुझे विना उर रूप घर में वानी अति व्याकुल है । जैसे कुलीन, पवित्र  
सुंदर मतिवाली वियोगिनी नायिका विरह को चोखो वान सन्मुख सहै  
है । भाव कुछ उपाय नहीं करि सकति है ॥ ३ ॥ ४ ॥ २१ ॥

राग मारु । जब रघुवीर पयानो कौन्ही । कुसित मिंधु  
डगमगत महीधर सजि सारंग कर लीन्ही ॥ १ ॥ सुनि, काठोर  
टकोर घोर अति चौके विधि त्रिपुरारि । जटापटल ते चली  
सुरसरी सकात न संभु संभारि ॥ २ ॥ भये विकल दिगपाल  
सवाल भय भरे भुवन दस चारि । परभर लंघ ससंक दसा-  
नन गर्भ स्रवहिं भरिनारि ॥ ३ ॥ काटकाटात भट भातु  
विकट मकट करि कहरिनाद । कूदत करि रघुनाथ सपथ  
उपरीउपरा वदि याद ॥ ४ ॥ गिरि तरु धर नय सुष, कराल

एक कालहु कंगत विपाद । चले (स दिसि गिसिभरि धरु  
 धरु कहि को वराक मनुजाद ॥ ५ ॥ पवन पंगु पावक पतंग  
 मनि टुरि गए यके विमान । जाचत सुर निसेप सुरनायक  
 नयन भार अकुलान ॥ ६ ॥ गये पुरि सर धूरि भूरि भय  
 भंग धल जलधि समान । नभ निमान इनुमान छांक मुनि  
 समुभत कोउ न अपान ॥ ७ ॥ दिग्गज कमठ कोल सहसा-  
 नन धरत धरनि धरि धीर । वारहिं वार अमरपत करपत  
 करके परी सरीर ॥ ८ ॥ चली चमू चहुं ओर सोर कछु  
 वनै न वरनत भीर । झिलझिलात कसमसत कोलाइल  
 होत नीरनिधित्तीर ॥ ९ ॥ जातुधान पति जानि काल-  
 वस मिले विभीषन चाइ । सरनागतपालक कृपाल कियो  
 तिलक लियो अपनाइ ॥ १० ॥ कौतुक ही वारिधि दंघाइ  
 उतरे सुबेलतट जाइ । तुलसिदास गठ देवि फिरे कपि  
 प्रभु भागमन सुनाइ ॥ ११ ॥ २२ ॥

जब १० । छुभित कहै चलायमान ॥ १ ॥ २ ॥ ३ ॥ केहरिनाद  
 सिहनाद उपरिउपरा चढ़ा चढ़ी । ४ । धर धांगन किए, रद दांत,  
 वराक तुच्छ, मनुजाद राक्षस ॥ ५ ॥ वायु बंद है गयो, अग्नि भूय चन्द्रमा  
 सब छिवि गए, विमान थकि गए, देवता निसेप जाचत भए, औ इन्द्र  
 ननन के भार ते अकुलाय उठे । भाव बहु नेवन में धूरि परी जाने ॥ ६ ॥  
 धूरि से तलाव पुरि गए, परवत औ धल सब समुद्र के समान है गए ।  
 भाव चरनन के आघात से आकाश में नगारा औ हनुमान नृ को हांक  
 एनि के फोज अपनपो नहीं समुद्रत है । अर्थात् देहाध्याम रहित भए  
 ॥ ७ ॥ दिग्गज कमठ वाराह शेष धीर धरि के भूमि को धरत है औ  
 सरीर में कहके परी है ताने वारंवार आमपेयुक्त होइ खींचत है । अर्थात्  
 सरीर को सीधा करत है ॥ ८ ॥ कसममय एक में एक दिशि गए है  
 जाने ॥ ९ ॥ १० ॥ ११ ॥ २२ ॥

राग असावरी । आए दूत देखि सुनि-सोच-सठ मन में ।  
 बाहिर बजावै गाल भालु कपि कालवस मोसे वीर सो  
 चहत जीव्यो रारि रन में ॥ १ ॥ राम छाम लरिका लपन  
 बालिबाल कहि घालि को गनत रिच्छ जल ज्यों न घन में ।  
 काज को न कपिराज कायर कपिसमाज मेरे अनुमान  
 हनुमान हरि गन में ॥ २ ॥ समय सयानी रानी मृदुबानी  
 कहैं पिय पावक न होहि जातुधानबेनुवन में । तुलसी  
 जानकी दिये स्वामी सो सनेह किये कुसल न तरु सब छै है  
 छार छन में ॥ ३ ॥ २३ ॥

आए इ० ॥ १ ॥ क्षाम कहैं दुर्वल, बालिबालक अंगद, जल ज्यों  
 न घन में जैसे बेजल को चंदर बेगनती को होत है । हरिगन वानर  
 को समूह ॥ २ ॥ राक्षस रूप जो वांस का वन है तामें अग्नि मति  
 होहि ॥ ३ ॥ २३ ॥

आपनी आपनी भांति सब काह्न कही है । मंदोदरी  
 मछोदर मालिवान महामति राजनीतिपाहुंघि जहां लो  
 जाकी रहो है ॥ १ ॥ महामद अंध दसकंध न करत कान  
 मीचवस नीचु इठि कुगहनि गही है । हंसि कहै सचिय  
 सयाने मीं सो यीं कहत चहत मेरु उडन बडो बयार बही  
 है ॥ २ ॥ भालु नर वानर अछार निशरनि को सोऊ नृप बाल-  
 कनि मांगो धारि लही है । देखो काल कौतुक पिपोलकनि  
 पछ लागे भाग मेरे लोगनि के भई चित चही है ॥ ३ ॥  
 तोमो न तिगोक आजु साहम समाजु माजु महाराजु आयसु  
 भो छोड़े सोड़े मछो है । तुलसी प्रनाम कै विभीषन विनोति  
 कहैं प्याल देधे ताल कपि केलि लंका दही है ॥ ४ ॥ २४ ॥

आपनी इ० । धारि कहैं फौज अपर पद सु० ॥ ४ ॥ २४ ॥

दूमरो न देपियत साहिव सम रामे । वेदज पुरान  
 कोविद विरतरत जाको जसु सुगत गावत गुन घामे  
 ॥ भाषा लीव जग जाल सुभाव करम काल सब  
 नामकु सब मै मय जामे । विधि से करनिहार हरि  
 शाननिहार हर से हरनिहार जपै जाके नामे ॥ २ ॥ सोई  
 वय जानि जन की विनती मानि मतो नाथ सोई जाते  
 परिनामै । सुभटसिरोमनि कुठार पानि सारिपेहुं  
 सो लपाई इष्टां किये सुभ सामे ॥ ३ ॥ वचनविभूषन  
 पन वचन सुनि लागें दुप दूपन से दाहिनेउ वामे ।  
 दूधो हुमकि हिये हन्यो लात भले तात चल्थो सुरतरु  
 तकि तजि घोर घामे ॥ ४ ॥ २५ ॥

दूसरी ३० । कोविद पंडित, विरतरत वैराग्यरत ॥ १ ॥ सासकु  
 भूषनकर्ता ॥ २ ॥ सुभटन में शिरोमणि परशुराम ऐसहुं देखि औ  
 के थीराम से शुभ जानिकें सामे किए अर्थात् मिलाप किए ॥ ३ ॥  
 जनन को विशेष भूषनकर्ता जो विभीषन का वचन है ताको छानि के  
 विदाहिने वचन है पर दुख औ दूपन समान वाम लगे वा दाहिने औ  
 ने बडे रहे निन के दुख दूपन समान लगे । गोसाई जी फरत है  
 दूपकि करि के हृदय में लात मार्यो, हे तात भला किए अम फदि  
 हो वाम मय जो रावन है ताको तजि के सुरतरुसमान जो थीराम  
 निन्द को ताकि के चल्थो ॥ ४ ॥ २५ ॥

जाय माय पाय परि काधा सो मुनाई है । समाधान  
 जाति विभीषन को वार वार कष्ट भयो तात नात नारे  
 कष्टो भाई है ॥ १ ॥ साहिव पितुसमान जातुभान को  
 निपुण ताके घपमान तीरो बडीये बडाई है । गरत गलानि  
 नि सनमानि सिप दैति रोष किये दोष महे मनुभे



भलाई है ॥ ३ ॥ द्रुह्यं ते विमुष भवे राम की सरन गये  
भलो मेकु लोधु राखे निपट निकार है । मातुपगं सौस  
नाई तुलसी असीस पाइ चले भले सगुन कहत मन भाई  
है ॥ ४ ॥ २६ ॥

जाय ६० । विभीषन अपने माता को दिगं जाय के पांय परि  
के लात मारिबे की कथा सुनाई ॥ १ ॥ एक तो साहिव है दूसरे  
पितुसमान है । अर्थात् बड़ा भाई है और राक्षसन को राजा है ताके अप-  
मान ते तेरी बडिण बड़ाई है । विभीषन को गलानि में गरतं जानि के  
माता सनमानि के शिक्षा देति है कि समुझे ते क्रोध किए में दोष है  
और सहे में भलाई है ॥ २ ॥ यद्यपि रावन किहां ते विमुख भए में  
औ श्रीराम जू के शरन गए में भलो है पर तथापि किंचित् लोक  
राखे में निपट सुंदराई है । भाव लोग कहेंगे कि संकटसमय में भाई  
को छोड़ दियो ॥ ४ ॥ २६ ॥

भाई कैसे करों डरों काठिन कुंफेरें । सुकृत संकट पंगो  
घातु है गलानि गखो कृपानिधि को मिलो पै मिलि कै  
कुबेरें ॥ १ ॥ जाय गहे पाय धाय धनद उठाय मेखो समा-  
चार पाय पोच सोचत सुमिरें । तहई मिलि महेस दियो इत  
उपदेश राम की सरन जाहि सुदिन न हरे ॥ २ ॥ जाकी  
नाम कुंभज कलिस सिंधु सोंपिवे की मेरी कछो मानि तात  
बांधे जनि वरे । तुलसी मुदित चले पाय है सगुन भले रंक  
लूटिवे को मानो मनिगन ठेरें ॥ ३ ॥ २७ ॥

भाई-६० । विभीषन अपने मन में विचार करत हैं कि हे भाई इस  
कैसा करै काठिन कुंफेरें हैं । धर्म संकट में परत भए । भाव राम विरोधी  
किहां न रहना चाहिए आ त्यागिवे में लोकोपहास, कि आपदकाल में  
छोड़े भागे एहि गलानि में गरे जात हैं । फेर यह निश्चै कियो कि कुबेर  
से मिलि करि के फेर श्रीरघुनाथ सो मिलो ॥ १ ॥ फेर कुबेर के शिग



विधाता ने भली भांति वात राखी ॥ ३ ॥ ४ ॥ ॥ कृपासिंधु गूलपा  
 वे परिश्रम अनुकूल भए । मुद को मूल रूप जो मार्ग ताको जनाय  
 सनमानि कै दीनजन जानि कै अपनाय लियो ॥ ५ ॥ स्वारथ  
 परमारथ दोऊ हस्तगत भयो औ श्रमपथ वीति गयो यह सपना  
 कैधौ सौतुख है कि मुख रूप धान को देवता सीचत औ निराय दे  
 हैं । निराइवे सोडिबे को कहत हैं ॥ ६ ॥ गुरु गौरीश मिले अब सा  
 सीताशक्ति औ हित हनुमान ते जाय के मिलि हौं अब हम को को  
 करिवे को है । वांछित की सीमा अघाय कै मिली ॥७॥ मैं जो लालच  
 सो लटि के ललचाइ के को जानै कहां जाय मरतो अब अभै रू  
 नंगारा बजाय कै श्रीरघुवीर को भजि हौं ॥ ८ ॥ २८ ॥

पदपदुम गरीब निवाज के । देपिहीं जाइ पाइ लोचन  
 फल हित सुर साधु समाज के ॥ १ ॥ गई बहोर और निर्वा  
 हक साजक विगरे साज के । संवरीसुपद गीधगतिदायक  
 समन सोक्त कपिराज के ॥ २ ॥ आरति हरन सरन समर्थ  
 सब दिन अपने की लाज के । तुलसी याहि कहत नतपालक  
 मोसे निपट निकाज के ॥ ३ ॥ ४६ ॥

पद ६० ॥१॥ जो वात गई है ताको बहोरनिहारे हैं औ अन्तर्  
 निर्वाह करनिहारे हैं औ विगरे भए साज को साजनिहारे हैं ॥ २ ॥  
 आरति के हरनिहारे हैं औ सब दिन में अपने भक्त की लाज के  
 समर्थ सरन कहैं रक्षक है । “शरणं गृहरक्षित्रोरित्यमरः” । नतपालक  
 शरणागत रक्षक ॥ ३ ॥ २९ ॥

महाराज राम पछि जाउंगी । मुय स्वारथ परिहृति  
 करिहीं सोइ जो साहिवहि सोहाउंगी ॥ १ ॥ सरनागत  
 मुनि धनि वोलिहैं हैं निपटहिं सकुचाउंगी । राम गरीब  
 निवाज निवाजि हैं जानिहैं ठाकुर ठाउंगी ॥ २ ॥ धरि

शाय हाथ माथे एहि ते केहि लाभ अघाउंगो । सपनो सौ  
 न कछू लपि लघु लालच न लोभाउंगो ॥३॥ कछिहो  
 रोटिहा रावरो विन मोलही विक्राउंगो । तुलसी पठ  
 कतरे सोदिहो उवरी लूठन पाउंगो ॥ ४ ॥ ३० ॥

टी० । महा ६० ॥१॥ जानि हँ ठाकुर ठाउंगो ठाँव कहँ स्थान गयो  
 नयो ठाकुर मोको जानि हँ अर्थात् स्थानभ्रष्ट ॥२॥ लघु लालच लौकिक  
 भादि ॥ ३ ॥ ४ ॥ ३० ॥

पाइ सचिव विभीषन के कही । कृपासिंधु दसकंध बंधु  
 धनु चरन सरन आयो सही ॥ १ ॥ विषम विषाद वारिनिधि  
 बूडत घाह कपीस कथा लही । गये दुप दोष देपि पद पंकज  
 न साध एकौ रही ॥ २ ॥ सिधिल सनेह सराहत नप  
 सिप नीकि निकाई निरवही । तुलसी मुदित दूत भए मन  
 महुं अमिय लाहु मागत सही ॥ ३॥३१ ॥

आप ६० । विभीषन के सचिव ने श्री रामचंद्र से आइ के कही ॥१॥  
 विषम विषाद रूप समुद्र में बूडत रहे तहां सुग्रीव की कथा समुक्ति थाह  
 में, भाव वालि के वास से सुग्रीव के उवारे तो हमहूँ को उवारेंगे ॥२॥  
 गये ते सिख लो जो नीकी निकाई निरवही है ताको मराहन हँ औ  
 निह ते सिधिल हँ । दूत हर्षित होत भयो, मानो छाँउ को मागत रहे  
 अमृत पाए । इहां छाँउ सनेसा है औ अमृत छुंदराई को देगिबो  
 ॥ ३ ॥ ३१ ॥ टि०—पद पंकज देखतही सभी दुख और दोष दूर  
 और एक भी वासना ( सोध ) बाकी न रही सब पूर्ण होगई ।

पिनती सुनि प्रभु मुदित भए । रीहराज कपिराज  
 नल बोलि वाखिनंदन लये ॥ १ ॥ वृक्षिऐ कहा बजाइ  
 नय धर्मसहित जतर दये । बली बंधु ताको दिमोह  
 बघर बोज परवस वये ॥२॥ बाँह पगार हार हँ में कसत

न कबहूँ फिरि गये । तुलसी असरन सरन स्वामि के विरद  
विराजत नित नये ॥ ३॥३२ ॥

विनती ॥ १ ॥ श्रीरामजू कहे तुम सब के वृक्षिवे में कहा है, अस  
आज्ञा पाइ के नीति धर्म सहित उत्तर देत भए । तेहि रावण बली को  
बंधु है जेहि ने विशेष मोह के वश बैर को बीज बोए । एह नीति कहे  
अब धर्म कहत हैं ॥ २ ॥ हे बांह पगार तेरे द्वार ते भय सहित जे पुरुष  
ते कबहूँ फिरि न गए । स्वामी के अशरण शरण जे विरद हैं ते नित्य  
नए विराजत हैं । पगार नाम यद्यपि भित्ति का है पर इहां प्रबल के अर्थ  
में जानना ॥ ३ ॥ ३२ ॥

द्विय विहसि कहत हनुमान सीं । सुमति साधु सुचि  
सुदृढ विभीषन वृक्षि परत अनुमान सीं ॥ १ ॥ हौं बलि  
जाउं और को जानै कहि कृपानिधान सीं । छली न होइ  
स्वामि सनमुष ज्यों तिमिर सातहयजान सीं ॥ २ ॥ घोटो  
परो सभीत पालियै सो सनेह सनमान सीं । तुलसी प्रभु  
कीषो जो भलो सोइ वृक्षि शरासन वान सीं ॥ ३॥३३ ॥

हिय ३० ॥ १ ॥ कृपानिधान सो हनुमान जू यह बात कही कि  
में बलि जाउं । आप छोड़ि और अस को जानै छली पुरुष स्वामी के  
सन्मुख नहीं होत है, सातहयजान जो सूर्य तिन्ह सो जैसे अंधकार  
सन्मुख नहीं होत है ॥ २ ॥ खोटो है वा खरो है पर सो विभीषण  
सभीत है ताते सनेहयुक्त सन्मान सो पालिये । शरासन औ बाण सो  
वृक्षि कहैं जानि के जो आप करव सो भलो है । भाव शरासन टेढ़ा औ  
बाण सूधा आप दौड़ को राखे हैं । वा शरासन बाण सो वृक्षि के आप  
जो करव सो भला है । भाव दूसरे से वृक्षिवे को क्या प्रयोजन है । आप  
के पराक्रम को को भेद ले सकैगो ॥ ३ ॥ ३३ ॥

सांचेहु विभीषन पाइ है । वृक्षत विहसि कृपालु लपन  
सुनि दाहत सकुचि सिर नाइ है ॥ १ ॥ एहै कहां नाय

ज्यो है छां ज्यों कृति जाति बनाइ है । रावनरिपुहि राषि  
 बुद्धा विनु को विभुवन पति पाइ है ॥ २ ॥ प्रभु प्रमन्न सब-  
 समा सराहत दूतबचन मन भाइ है । तुलसी बोलिय वेगि  
 बचन सों भइ महाराज रजाइ है ॥ ३ ॥ ३४ ॥

मानेहु ३. लपनलाल मो श्रीरामकृपाछु विहंमि के ज्ञान हैं कि  
 मानेहु विर्भाषण आवेगो । यह मुनि गिर नवाइ सकुचि के लपनलाल  
 जात है ॥ १ ॥ हे नाथ आवेगो कहा अर्थात् भविष्य आप काहे को  
 जात है विर्भाषण आइ गया हे आ आप के इहाँ बनाइ के क्यों कहि  
 जा सकत हे आप के बिना रावण के रिपु को राखि के ऐसो को  
 विभुवन से हे जो प्रतिष्ठा पावेगो ॥ २ ॥ प्रभु प्रमन्न हैं सब सभा सरा-  
 हात हे आ यह बचन विर्भाषण के दूत के मन में भावत भयो । लपन-  
 लाल सों श्रीमहाराज रामचन्द्र की आज्ञा भई कि विर्भाषण को शीघ्र  
 जाइ लीजिये ॥ ३ ॥ ३४ ॥

बली लीन लपन हनुमान हैं । मिले सुदित वृक्ति कुसल  
 रम्यर सकुचत करि सनमान हैं ॥ १ ॥ भयो रजायसु पाउं  
 रिये बोलत कृपानिधान हैं । दूरि तें दौमबंधु दिखे जनु दंत  
 भय वरदान हैं ॥ २ ॥ सील सहस हिमभानु तेज मत कोटि  
 नहुं के भानु हैं । भक्तनि को हित कोटि मातु पितु चरिन्ह  
 कोटि कृसानु हैं ॥ ३ ॥ जनगुन रज गिरि गनि सकुचत  
 ज गुनगिरि रज परवान हैं । बाहुं पगार बोल की अविचलु  
 करत गुनगान हैं ॥ ४ ॥ चरचा चलति विभीषन की सीढ़  
 त सुचितु है कान हैं । चाहुचाप तूनीर तामरस करनि  
 रत वान हैं ॥ ५ ॥ हरपत सुर वरपत प्रसून सुभ सगुन  
 त कल्याण हैं । तुलसी ते कृतज्ञत्व की मुमिरत ममयं  
 धन ध्यान हैं ॥ ६ ॥ ३५ ॥

चले ३० । लवाइये के हेतु लपनलाल आँ हनुमान जू चले हैं, जब विभीषण के दिग गए तव द्रपित परस्पर मिले आँ कुगल वृक्षि के सन्मान करि के सकुचत हैं । सकुचने को यह भाव जस सन्मान किया चाही तस नाहीं बनत है वा करि के अर्थ से जानना अर्थात् सन्मान से विभीषण जू सकुचत हैं ॥ १॥२ ॥ प्रभु सहस्र चन्द्र सम शीलवान हैं, शतकोटि भानुहू के भानु सम तेजस्वी हैं, कृशानु कहैं अग्नि ॥ ३ ॥ जन को गुण जो रज सम है ताको गिरि सम गनि के सकुचत हैं आँ आपन गुण जो गिरि सम है ताको रज सम मानत हैं ॥ ४ ॥ सुन्दर चाप आँ तरकस है हर कमलनि ते वाण सुधारत हैं ॥५॥६॥३५॥

रामहिं करत प्रनाम निहारि कै । उठि उमगि चानंद प्रेम परिपूरन विरद विचारि कै ॥ १ ॥ भयो विद्वेह विभीषन उत इत प्रभु अपनपो विसारि कै । भली भांति भावते भरत ज्यों भेद्यो भुजा पसारि कै ॥ २ ॥ सादर सवहि मिलाइ समानहि निपट निकट वैठारि कै । वृभक्त कुसल येस सप्रेम अपनाइ भरोसीं भारि कै ॥ ३ ॥ नाथ कुसल कल्याण सुमंगल विधि सुष सकल सुधारि कै । देत लेत जे नाम रावरो विनय करत सुषचारि कै ॥ ४ ॥ जो भूरत सपने न विलोकत मुनि भहेस मन मारि कै । तुलसी तेहि हीं लियो अंक भरि कहत काहु न सँवारि कै ॥ ५ ॥ ३६ ॥

रामहि ३० । विरुद विचारि कै अशरण के शरण हम हैं यह वान विचारि कै ॥ १ ॥ २ ॥ ३ ॥ हे नाथ जे रावरो नाम लेत हैं तिनहै ब्रह्मा कुशल कल्याण सुमंगल सकल सुख सुधारि कै देत हैं आँ चारि सुख से विनय करत हैं ॥ ४ ॥ ५ ॥ ३६ ॥

करुनाकर की कहना भई । मिठी मीचु लहि लंक संख गइ काहू सीं न पुनिस पई ॥ १ ॥ दसमुष तज्यो दूध सापी ज्यों आपु काढ़ि साढ़ी लई । भव भूपन सीइ

विधो विभीषणु मुद्ग मंगल मरिमा मई ॥ २ ॥ विधि हरि-  
 र मुनि मित्र मंगलत मुद्रित त्रय दुर्गुभि दई । वारहिं वार  
 सुमन परपत दिय हरपत कादि जय जय जई ॥३॥ कौसिक  
 मिना जनक संकट हरि सृगुपति को टारी टई । पग मृग  
 कर निमाघर सब की पूंजी दिनु वाढी मई ॥ ४ ॥ युग  
 युग कोटि कोटि करतव करनी न कछु करनी नई । राम  
 भजन मरिमा दुगमी दिय तुलसीदास की वनि गई ॥५॥ ३७॥

कृष्णा ३० । कृष्णाकर जो श्रीराम ने तिन्ह की कृष्णा होती  
 थी विभीषण की मृत्यु भित्री लंका मिली औ सब शंका गई औ काहू  
 सो सुनुस औ इपा न भई । भाव विना परिश्रम ई सब बात भई ॥१॥  
 दशमुख ने विभीषण को दूध के माग्वी सम तज्याँ औ आप सादी  
 सम लंका के मुख को लई सोइ विभीषण को श्रीराम ने भव जो  
 संसार ताको भूषण औ मुद्ग मंगल मरिमा मई कियो ॥ २ ॥ ३ ॥  
 विधावित्र अहल्या औ जनक को संकट हरि के परशुराम की टई कहे  
 गर्व टारे औ खग मृग भिद्व औ निशाचर इन्ह सब की विन पूंजी की  
 बरती वादी ॥ ४ ॥ युगयुग में कोटि कोटि श्रीराम के करतव हैं कछु  
 नई करनी नहीं करनी गई ॥ ५॥३७ ॥

मंजुल मूरति मंगल मई । भयो विसोक विलोक विभी-  
 षणु निह देह सुधि सीध गई ॥ १ ॥ उठि दाहिनी ओर तें  
 सन्मुख सुपट मागि बैठक लई । नय सिय निरपि निरपि  
 रुप पावत भावत कछु कछु ऐ भई ॥ २ ॥ वार कोटि सिर  
 काटि साटि लटि रावन संकर पै लई । सोइ लंका लपि  
 अतिथि अनवसर राम तृनामन ज्यौ दई ॥३॥ प्रीति प्रतीति  
 रीति सोभा सरि थाहत जहं जहं तई घई । वाहु बली वा  
 नैत बोल को वीर विज्र बिजई नई ॥४॥ यो दयानु दूसरी



दुनी जेहि जरनि दीन हिय की हई । तुलसी काकी नाम  
जपत जग जगती जामति विनु बई ॥ ५॥३८ ॥

मंजुल ३० । नेह कहै सांसारिक प्रेम और देह की सुधि की मर्यादा  
गई वा श्रीराम के नेह ते देह की सुधि की मर्यादा गई ॥ १ ॥ दाहिनी  
ओर बैठे रहे तहां ते बठि के सुखद सन्मुख बैठवे की श्रीराम सो  
आज्ञा मांगि लई । अर्थात् जामें रूप भली भांति देखि परै । भावत कछु  
कछु पे भई महा दुख की भावना करत रहे सो सुख की भावना करण  
लगे ॥ २ ॥ अनंत बार सिर काटि कै ऊख समान लटिके जो रावण  
ने श्रीशंकर पै लंका लई सोई लंका को विभीषण को अतिथि मानि  
कै अनवरस समुक्षि कै अर्थात् वनवास समुक्षि कै तृण के आसन  
समान दई । भाव यह विचारे कि हम कुछ न दिये ॥३॥ प्रीति प्रतीति  
रीति औ शोभा रूप नदी को जहां जहां थाह लेत हैं तहां तहां अथाह  
पावत हैं । बाहु के बली बोल के बाना बाले अर्थात् जो कहत सोई  
करत और विश्व के विजय करनेवाले वीर औ नीतिवान और दयाल  
कौन दूसरो दुनियां में है, जेहि ने दीन के हिय की जरनि नाशी है  
औ काकी नाम जपत संसारमें पृथ्वी बिना बोए जामति है ॥४॥५॥३८॥

सब भांति विभीषन की बनी । कियो कृपालु अभय  
कालहु ते गई संसृति सासति धनी ॥ १ ॥ सघां लपन हनु-  
मान संभु गुरु धनी राम कोसल धनी । हियेहि और और  
कौन्ही विधि रामकृपा औरै ठनी ॥ २ ॥ कलुष कलंक  
कलिस कोस भयो जो पद पाइ रावन रनी । सोइ पद पाइ  
विभीषन भो भव भूपन दलि दूषन धनी ॥ ३ ॥ बांछ पगार  
उदार सिंगेमनि नतपालक पावन धनी । सुमन वरपि  
रघुवर गुन वरनत हरपि देव दुदुंभि हनी ॥ ४ ॥ रंक  
निवाज रंस राजा किये गये गरब गरि गरि गनी । राम  
प्रनाम महा महिमा कर सकल सुमंगल मनि जनी ॥५॥ होय-

भनी ऐसैहि चङ्गुं गये राम मरन परिहरि लनी । भुजा  
हृदय मापि संकर करि कनम पाइ तुलसी भनी ॥६॥३८॥

भव मांनि ई० । मंगुनि मंगार ॥१॥ श्रीलखनलाल औ हनुमान  
रामना मण औ श्रीशिव ज गुरु मये औ कोशल धनी जो श्रीराम  
सो धनी कई म्वापी मण विभीषण के हृदय में और रहा भाव रावण  
को उपदेश करि दिन करै और विधाना ने और किया । अर्थात् रावण  
ने मान्यो और श्रीराम के कृपा ते और ठनत भई अर्थात् विभीषण ने  
लंका पाई ॥ २ ॥ जो राजपद पाय के रनी रावण पाय औ कलंक  
औ केश को खजाना भयो मोई राजपद पाय के दूषणगण को दलि के  
मंगार को भूषण विभीषण भयो ॥ ३ ॥ पावनपनी पवित्त जाकी  
शक्ति है ॥४॥५॥ रंक निवाजा कई गरीबनेवाज जो श्रीराम सो रंक  
जो विभीषण ता को राजा किए औ गनी कई धनी अपने गर्व ते गलि  
गलि गये अर्थात् विभीषण को ऐश्वर्य देखि के श्रीराम के मणाम की  
पदा महिमा की खानि ने सकल सुमंगल रूप मणि को उत्पन्न किये  
॥५॥ धनी कई अभिमान ताको छोड़ि के अजहूं श्रीराम शरण गए ऐसे  
हाथ छोड़े अर्थात् जस विभीषण को भयो भुजा उठाय के अर्थात् ईश्वर  
की ओर हाथ करि के और शिवजी के शास्त्री करि के शपथ खाय के  
तुलसी ने फही ॥ ६ ॥ सो० । इतनहु पर नहिं होय, सन्मुख सीता-  
नाथ जो । हरिहर पसु हय सोय, तरसत भूसा घास को ॥ ३९ ॥

कहो क्यों न विभीषण की वनै । गयो छाडि कुल सरन  
राम की जो फल चारि चाखो जनै ॥ १ ॥ मंगलमूल प्रनाम  
जामु जग मूल अमंगल के पनै । तेहि रघुनाथ हाथ माथे  
दियो की ता की महिमा भनै ॥२॥ नाम प्रताप पतित पावन  
किये जे न अघाने अघ अनै । कीउ उलटो कीउ सूधो जपि  
भये राजहंस धायस तनै ॥ ३ ॥ हुती ललात कृष्णगत पात-  
परि मोद पाइ कीटीकनै । सो तुलसी चातक भयो जावत  
रामस्याम सुंदर धनै ॥ ४ ॥ ४० ॥

कहो ३० । जो फल चारि चारथो जनै जो शरणागत चारो वेद  
में फल रूप है औ अर्थ धर्म काम मोक्ष चारो की उत्पत्ति करनिहारी  
है ॥ १ ॥ जाको प्रणाम मंगल को मूल है औ अमंगल के मूल को  
खोदत है ते रघुनाथ ने हाथ माथे पर दियो तब ताकी महिमा को को  
कहै ॥ २ ॥ अघ औ अनीति ते जे न अघाने ते पतितन को नाम ने  
अपने प्रताप ते पावन किये उलटो बाल्मीक जी जापि कै सूयो प्रहाद  
आदि जपि कै काक से हंस भए ॥ ३ ॥ दुर्बल शरीर ललचात जो  
खरी खात रह्यो औ कोदो के कनौ पाय कै आनन्द पावत रह्यो  
सो राम श्यामसुंदर घन को जाचत मात्र चातक भयो । इहां खरी  
लौकिक सुख को जानौ औ कोदो के कणवत् स्वर्गादि सुख जानौ  
औ चातक होव श्रीराम में अनन्य होव है ॥ ४॥४० ॥

अतिभाग विभीषन की भली । एक प्रणाम प्रसन्न राम  
भये दुरित दोष दारिद्र दली ॥ १ ॥ रावन कुंभकर्ण वर मागत  
शिव विरंचि बाचा कलि । रामदरस पायो अविचल पद  
सुदिन सगुन नीके चले ॥ २ ॥ मिलनि विलोकि स्वामि  
सेवक की उकटे तरु फूले फले । तुलसी मुनि सनमान वंधु  
को दसकंधर हसि हिय जले ॥ ३॥४१ ॥

अति ३० । दुरित दोष पाप जनित दोष वर पाप औ औगुन ॥१॥  
रावण औ कुंभकर्ण को वर मांगत में शिव विरंचि ने सरस्वती करि  
के छले अर्थात् आन कै आन कहवाय दिए औ वे वर मागे श्रीराम  
के दर्शन ते विभीषण अविचल पद पाए औ सुंदर दिन औ सुंदर  
सगुन भली भांति ते विभीषण के संग चले भाव विभीषण दिन सगु-  
नादि न विचारे रहे आप से आप संग लगे ॥ २ ॥ उकटे तरु फूले  
फले को यह भाव कि जे जड़ श्रीराम सनेहरहित रहे ते सनेहरहित  
भए हंसि हिय जले ऊपर से तो हंस पर भीतर से जले ॥ ३॥४१ ॥

गए राम सरन सब की भली । गनी गरीब बढो छोटो

बुध मृदु हीनदन्त पतियलो ॥ १ ॥ पंगु अंध निर्गुनी निसंवल  
 शे न लड़े जांचे जलो । सो निवह्यौ नोके जो जनमि जग  
 रामराज नाग्य चलो ॥ २ ॥ नाम प्रताप दिवाकर कर तें  
 दरत तुहिन ज्यों कलिमलो । मुत हित नाम लेत भवनिधि  
 हरि गयो अजामिल सो पलो ॥ ३ ॥ प्रभुपद प्रेम प्रनाम  
 कामतरु मद्य विभीषन की फलो । तुलसी सुमिरत नाम  
 सबनि को मंगलमय नभ जल घलो ॥४॥४२॥

गण ६० । शुभ पंडित ॥ १ ॥ निसम्बल विना खरच को राम  
 गन मारग चलो श्रीराम के राजमार्ग कहें भक्ति पथ में जो चलो ॥२॥  
 नाम प्रताप रूप नूर्य के तीक्ष्ण किरण ते कलिमलो वरफ सम गलत  
 है ॥ ३ ॥ प्रभु के पद में प्रेम और प्रणाम रूप कामतरु से तत्क्षण  
 विभीषण को भलो भयो नाम सुमिरतमात्र सब जीवन को आकाश  
 बरष पल मंगल मय होत है ॥ ४॥४२ ॥

सुजस मुनि स्रवन हैं नाथ आयो सरन । उपल केवट  
 एड सवरी मंछति समन सोक सम सीव सुयीव चारति  
 हरन ॥ १ ॥ राम राजीवलोचन विमोचन विपति स्याम,  
 नव तामरस दास वारिद वरन । लसत जट जूट सिर चारु  
 मुनि चोर कटि धीर रेघुवीर तूनीर सर धनु धरन ॥ २ ॥  
 कातुधानेस भ्राता विभीषन नाम दंधु अपमान गुरु ग्लानि  
 चाहत गरन । पतितपावन प्रनतपाल करुनासिंधु रापिए  
 मोहि सौमित्र सेवित धरन ॥ ३ ॥ दीनता प्रीति संकलित  
 मृदु वचन मुनि पुनक्ति तन प्रेम जल नयन लागे भरन ।  
 बोलि लंकेस कहि अंक भरि भेंटि प्रभु तिलकु दियो दीन  
 दुप दीप दारिद दरन ॥ ४ ॥ रातिचर जाति चाराति सब  
 भाति गत कियो सो कल्याण भाजन मुमंगल करन । दास

तुलसी सद्यै हृदये रघुवैसमनि पाहि कहि काहि कीन्हो न  
तारन-तेरन ॥ २॥६२ ॥

सुजस ३० ॥१॥ श्याम नव तामरस दाम नवीन नील कमल की माला  
सम, जूट समूह ॥ २ ॥ जातुधानेस रावण, गुरू ग्लानि, भारी ग्लानि  
से ॥ ३ ॥ संकलित संमिलित ॥ ४ ॥ रातिचर निशाचर, आराति  
शत्रु, इहां रावण की बंधु है ताते आराति कहै सद्य दयासहित ॥५॥४३॥

दीनहित बिरद पुराननि गायो । भारतवंधु कृपालु  
मृदुलु चित जानि सरन हो आयो ॥१॥ तुम्हरे रिपु की हो  
अनुज विभीषन बंस निसाचर जायो । सुनि गुन सोल  
सुभाव नाथ को में चरनहि चितु लायो ॥ २ ॥ जानत प्रभु  
दुष सुष दासनि को ताते कहि न सुनायो । करि करुना  
भेरि नयन विलोकहु तब जानी अपनायो ॥ ३ ॥ घचन  
विनीत सुनत रघुनायक हंसि करि निकट बुलायो । भेखी  
हरि भरि अंक भरत ज्यौ लंकापति मनु भायो ॥ ४ ॥ कर  
पैकज सिर परसि अभय कियो जन पर हेतु देखायो । तुल-  
सिदास रघुवीर भेजनु करि को न अभय पंद पायो ॥५॥४४॥

दीन ३० । हेतु प्रीति अपर पद सु० ॥ ४४ ॥

राग धनाश्री । संख कहीं मेरो सहज सुभाउ । सुनहु  
सपा कपिपति लंकापति तुम सन कौन दुराउ ॥ १ ॥ सब  
विधि झीन दीन अति जडमति जाको कतहु न ठाउ । आय  
सरन भजो न तज्यो तेहि यह जानत रिपिराउ ॥२॥ जिन  
को हो हित सब प्रकार चित नाहि न और उपाउ । तिनहि  
लागि धरि देह करौ सब डरों न सुजस नसाउ ॥ ३ ॥ पुनि  
पुनि भुजा उठाइ कहत ही संकल संभापति चाउ । नाहिन  
कोउ प्रिय मोहि दास सम कपट प्रीति वहि जाउ ॥ ४ ॥  
नुनि रघुपति के घचन विभीषन प्रेम संगन मेने चाउ ।

तुलसिदास तजि भास चास सब ऐसे प्रभु कहुं गाउ ॥५॥४५॥

गल्प ३० । सदन बनादरदिन ॥ १ ॥ भजो कहैं अंगीकार करत  
 धी, गिरिगाढ नारद ज्ञ ॥ २ ॥ दरौ न मृगज नसाइ कहिवे को यह  
 मत कि "भुवन अनेक गोम मनि जानू । यह महिमा कछु बहुत न ताम्" ।  
 इत्यादि ॥ ३ ॥ कपट प्रीति यहि जाउ कपट करि जो प्रीति होती है ।  
 को रोहिजाउ छांदि है । भाव हमारी प्रीति निष्कपट है अतएव अचल  
 है ॥ ४ ॥ ५ ॥ ४५ ॥

नाहि न भजिनि जोगु पियो । श्रीरघुवीर समान भान को  
 पृन कृपा दियो ॥ १ ॥ कहहु कौन मुर सिला तारि पुनि  
 केवट मीत कियो । कौने गौध प्रथम कां पितु ज्यों निज  
 कर पिंड दियो ॥ २ ॥ कौन देव सवरी के फल करि  
 भोजन सलिल पियो । वालिवास वारिधि बूडत कपि कीहि  
 यहि वांछ लियो ॥ ३ ॥ भजन प्रभाउ विभोपन भाष्यो सुनि  
 कपि कटक जियो । तुलसिदास को प्रभु कोसलपति सब  
 प्रकार बरियो ॥ ४ ॥ ४६ ॥

नादिन ३० । वियो कहैं दूसरो ॥ १ ॥ २ ॥ ३ ॥ बरियो कहैं  
 बलवान ॥ ४ ॥ ४६ ॥

राग जयतथी । कव देखोंगो नयन बड़ मधुर सूरति ।  
 राजिवदलनयन कोमल कृपा अयन मयननि बड़ कवि  
 संगनि दूरति ॥ १ ॥ सिरसि जटा कलाप पानि सायक  
 पाप उरसि रुचिर वनमान लूरति । तुलसिदास रघुवीर की  
 सीमा सुमिरि भई है मयन नहिं तनु की सूरति ॥२॥४७॥

श्री जानकी जू की अक्ति कमल के पत्र के समान नेत्र है जेहि  
 सूरति की आँ कोमल है आँ कृपा को यह है आँ काम समूह के छवि  
 को अंगानि ते दूर करति है ॥ १ ॥ दूरति लटकति ॥ २ ॥ ४७ ॥  
 राग केदारा । कछु कबहुं देखिहीं पानी हीं पारज

भुञ्जन । सानुज सुभग तन जब ते विक्रुरे वने तव ते दव  
सी लागी तीनहुं भुञ्जन ॥ १ ॥ मूरति मूरति किवे प्रगट  
प्रीतम हिये मन के करन चाहे चरन कुञ्जन । चित चढिगो  
विद्योग दसानन कहिवे जोग पुलकगात लागे लोचन चुञ्जन  
॥ २ ॥ तुलसि विजटा जानी सोय अति अकुलानी मृदुवानी  
कह्यो ऐहें दवन दुञ्जन । तमीचर तम हारी मुरकंज सुषकारी  
रविकुलरवि अब चाहत उञ्जन ॥ ३ ॥ ४८ ॥

कहुं इ० । आरज कहें श्रेष्ठ दवसी आगसी ॥ १ ॥ मन के करन  
मन के हाथन से ॥ २ ॥ दवन दुञ्जन शत्रुनाशक निशाचर रूप तम  
के नासनिहारे औ देवरूप कमल के मुख देनिहारे सूर्य कुल के सूर्य अब  
उगा चाहत है ॥ ३ ॥ ४८ ॥

अब लो मैं तोसों न कहेरी । मुनु विजटा प्रिय प्रान-  
नाथ विनु वासर निसि टुप दुसह सहैरौ ॥ १ ॥ विरह विषम  
विष बिलि बंढो उर तें मुप सकल सुभाय दहेरौ । सोइ  
सोचिवे लागि मनसिज के रहट नयन नित रहत न हेरी ॥ २ ॥  
सरं सरोर सुपे प्रान वारिचर जीवन आस तजि चलन  
चहेरौ । तें प्रभु मुजस सुधा सीतल करि राषे तदपि न तृप्त  
लहेरी ॥ ३ ॥ रिपु रिसि घोर नदी विवेक बल धीरसहित  
हुते जात बहे री । दै मुद्रिका टेक तेहि अवसर रुचि  
समीर सुत पैरि गहे री ॥ ४ ॥ तुलसिदास सब सोच पोच मृग  
मन कानन भरि पूरि रहे री । अब सषि सिय संदेह परि-  
हृष्ट हिय आइ गये दोउ बोर अहेरौ ॥ ५ ॥ ४९ ॥

अब लो ॥ १ ॥ उर तें तीक्ष्ण विरह रूप विष की बेली बड़ी  
तेहि बेली न स्वाभाविक सकल सुख को जराय दई औ तेहि बेली  
सोचव के अर्थ काम के रहट रूप हमारे नेत्र नित नधे रहत है ॥ २ ॥  
शरीर रूप तड़ाग मुख प्राण रूप मछली आदि जीवन की आशा छोड़ि

के जना चाहे पर मैंने मनु मुयज रूप अमृत ते शीतल करि के  
 रूप नशापि वामि न लहे ॥ ३ ॥ मनु का जां घोर रिस है। सो नदी  
 है चिरेक बल धारना सहिन नाम घेह जान रहे पर तोहि अवसर में  
 हिसा रूप लकड़ी में मन्दाह के हे मर्गों परि के पवनपूत गहत भए  
 ॥ ४ ॥ सब सोच सोच रूप मृगा मन रूप कानन में भरि पूरि रहे हैं  
 शना शनि विजटा चाली कि हे सखी श्रीजानकी जू अब संदेह को  
 पिने छोड़ो डांज गिकारी कुंभर आइ गए। भाव सोच पोच रूप मृग  
 अब न बर्चगे ॥ ५॥४६ ॥

राग बिलावल—सो दिन सोने को कहू कब ऐहै । जा  
 दिन बंधो मिंधु विजटा मुनु तूं संभ्रम मोहि आनि सुनैहै  
 ॥ १ ॥ विश्वदवन सुर साधु मतावन रावन कियो आपनो  
 पैहै । कनकपुरी भयो भूप विभीषन विबुध समाज बिलोकन  
 पैहै ॥ २ ॥ दिव्य दुंदुभी प्रसंसि हैं मुनिगन नभतल बिसल  
 बिमाननि छैहैं । वरपिहैं कुमुम भानुकुलमनि पर तब सोकीं  
 पवनपूत लै लैहै ॥ ३ ॥ अनुजसहित सोभिहैं कपिन महु  
 तनुद्वि फोटि मनोज छि तैहै । इन नयनन्हि एहि भांति  
 प्रानपति निरपि हृदय आनंद समैहै ॥ ४ ॥ बहुरौ सदल सनाथ  
 सलहिमन कुसल कुसल विधि अवध देखैहै । गुरुपुरलीग  
 सासु दीउ देवर मिलत दुंसइ उर तपित बतैहै ॥ ५ ॥ मंगल-  
 कलस बधावन घर घर पैहैं मागने जो जीहि भैहै । विजय  
 राम राजाधिराल को तुलसिदास पावन जसु गैहै ॥ ६ ॥ ५० ॥

सो दिन ५० । सोने को कहिये को यहें भाव कि जैसे धातुन में  
 सोना उत्कृष्ट होत है तैसे दिनन में सो दिन उत्कृष्ट कव आवंगो  
 ॥ १ ॥ २ ॥ नभतल आकाश औ पृथ्वी में ॥ ३ ॥ फोटि मनोज  
 हितैं फोटि काम को संतप्त करि हैं । ४ ॥ फेर दलमहित लक्ष्मण-  
 सहित नाथ को कुशल औ अवध को कुशल विधाता देखैं हैं । ५ ॥ ६ ॥ ५० ॥



लपति नाथ समुक्ति जिय देपु ॥ ७ ॥ मुनि पुलस्ति के जस  
मयंक महुं कत कलंक हठि होहि । और प्रकार उवार नही  
कहुं मैं देख्यौ जग टोहि ॥८॥ चलु मिलु वेगि कुसल सादर  
सिय सहित अग्र कर मोहि । तुलसिदाम प्रभु सरन सबद  
मुनि अभय करौ गो तोहि ॥ ८॥९॥१॥

### टीका ।

मानइ० । मंदोदरी की उक्ति है आयो व कहैं आयो अर ॥ १ ॥  
जनायो, आप अपने को जनावत भए मिस बहाना ते ॥ २ ॥ दाप  
अभिमान ॥ ३ ॥ ४ ॥ बल उदधि अगाध बल रूप समुद्र जेहि बालि  
को अथाह ॥ ५ ॥ ६ ॥ विरदैत वानावाले टोहि कहैं टोइ कै ॥८॥९॥१॥

राग कान्हरा । तूं दसकांठ भले कुल जायो । तामहुं  
सिवसेवा विरंचिं बर भुज बल विंपुल जगत जसु पायो ॥१॥  
परं दूपन त्रिसिरा कबंधरिपु जेहि वाली जम लोक पठायो ।  
तांको दूत पूनीत चरित हरि सुभ संदेस कहन हौं आयो ॥२॥  
श्रीमद नृप अभिमान मोहवस जानत अनजानत हरि  
लायो । तजि व्यलीक भजु कारुणीक प्रभु दै जानकिहिं सुनहिं  
समुभायो ॥३॥ यातें तव हितु होइ कुसल कुल अचल राज  
चलिहै न चलायो । नाहित रामप्रताप अनल महुं ह्यै पंतंग  
परिहै सठ धायो ॥ ४ ॥ जद्यपि अंगद नीति परम हित  
कह्यो तथापि न कहु मन भायो । तुलसिदास सुनि वचन  
क्रोध अति पावक जरत मनहु घृत नायो ॥ ५ ॥ २ ॥

सू० । अंगद की उक्ति ॥ १ ॥ २ ॥ श्रीमद धनमद, लीक, कपट  
॥ ३ ॥ ४ ॥ ५ ॥ २ ॥

तैं मेरो मरम कहु नहिं पायो । रे कपि कुटिल टोठ-

सु पाँवर मोहि दास ज्यों डांठन आयो ॥ १ ॥ भ्राता कुंभ-  
 रम रिपुघातक सुत दुरपतिहि बंध करि ल्यायो । निज  
 मुनिल भति अतुल कहीं क्यो वंदुक ज्यों कैलास उठायो  
 ॥ २ ॥ सुर नर असुर नाग पग किन्नर सकल करत मेरो  
 ल भायो । निसिचर रुचिर अहार मनुजतनु ताकी जस पल  
 मोहि सुनायो ॥ ३ ॥ कछा भयो वानर सहाय मिलि करि  
 एषाय ज्यों सिंधु बंधायो । जो तरिहै भुज वीस घोर निधि  
 एमी की त्रिभुवन में जायो ॥ ४ ॥ सुनि दससीस वचन  
 विकुंजर विहंसि ईस भाय हि सिर नायो । तुलसिदास  
 कंस कालवस गनत न कोटि जतन समुभायो ॥ ५ ॥ ३ ॥

ते ३० । रावण की उक्ति ॥ १ ॥ २ । मन को भायो कहें हमारे  
 में कहें हमारे गुलाम को भायो करत हैं ॥ ३ ॥ ४ ॥ ५ ॥ ३ ॥

सुनु पल में तोहि बहुत बुझायो । एते मान सठ भयो  
 मोक्ष जानत हूं चाहत विष पायो ॥ १ ॥ जगतघिदित  
 पतिवीर बालि बल जानत हों किधों अब विसरायो । विनु  
 प्रयास सोठ हत्यौ एक सर सरनागरा पर प्रेम देपायो ॥ २ ॥  
 रावहुंग निज कर्म जनित फल भलि ठौर छिठ धैर बटायो ।  
 वानर भालु अपेट लपेटनि मारत तब छैहै पदितायो ॥ ३ ॥  
 मोर्ही दसन तोरिवे लायक कछा करौ जो न पायसु पायो ।  
 एव रघुवीर बाण विदलित उर सोवहिगो रघुभुनि मोहायो  
 ॥ ४ ॥ अघिबल राज विभीषन को सब छैहै रघुनाथ परन  
 किनु लायो । तुलसिदास एहि भांति यदन कहि मरहत  
 रज्जो बालि नृपजायो ॥ ५ ॥ ४ ॥

सुनु ३० । अंगद की उक्ति ३ सठ एतना अधिदान दोहरत

मयो है ॥१॥२॥३॥ हौर्ही कहैं हम, विदलित विशेषदलित ॥ ४॥५॥४॥

राग केदारा । राम लपन उरं लाइ लये हैं । भरे नीप  
राजीवनयन सब अंग अंग परिताप तये हैं ॥ १ ॥ कहत  
ससौक विलोकि बंधुमुख वचन प्रीति गथये हैं । सेवक संप्रा  
भक्ति भायग गुन चाहत अब अथये हैं ॥ २ ॥ निज कोरति  
करतूति तात तुम्ह सुकृती सकल लये हैं । मैं तुम्ह  
विनु तनु राषि लोक अपने अपलोक लये हैं ॥ ३ ॥ मेरे  
पन की लाज इहां लीं हठि प्रिय प्रान दये हैं । लागत सांग  
विभीषन ही पर सीपर आपु भये हैं ॥ ४ ॥ सुनि प्रभुवचन  
भालु कपि सुर गन सोच सुपाइ गये हैं । तुलसी पाइ पवन-  
सुत विधि मानो फिरि निरमये नये हैं ॥ ५॥५ ॥

राम ३० । लक्ष्मण जी की शक्ति लगिये की कथा लिखत हैं । सब  
अंग परिताप तए हैं सब अंग परिताप तें तै उठे है ॥ १ ॥ वचन प्रीति  
गथए हैं वचन प्रीति से गुहे भए हैं । सेवक औ सखा औ भगति औ  
भारिपने को गुन अब इहा चाहत है । भाव ए सब गुण लक्ष्मण छोडि  
दूसरे में कहां होयगो । २ ॥ हे तात तुम अपनी कीर्ति औ करतूति  
के सकल सुकृति को जीति लए हैं हम तुम्हारे विना अपना तन लोक  
में राखि के अपलोक कहैं अयश को लए हैं ॥ ३ ॥ हमारी प्रतिज्ञा  
की लाज तुम को इहां ली भई कि हठि करि के प्रिय जो प्रान सो दिए ।  
विभीषण को सांग लागत तापर लक्ष्मण आप दाल भए हैं । भाव विभी-  
षण जो मरेंगे तो श्रीराघव की प्रतिज्ञा जायगी यह विचारि आप  
शक्ति को ल लए दाल को सिपर पारसी में कहत हैं ॥ ४ ॥ निर्मल  
नए हैं मानो विधाता ने नए सिरे से फिर लक्ष्मण जी को बनाए  
हैं ॥ ५ ॥ ५ ॥

राग सोरठ—सोपैं ती न काछू छै पाई । और निवादि  
भूली विधि भायप बल्यो लपन सो भाई ॥ १ ॥ पुर पितु-

सकल सुख परिहरि जेहि वन विपति बंटाई । ता संगु  
 नुरलोक सोक तजि सख्यो न प्रान पठाई ॥ २ ॥ जानत  
 बाहर कठोर तें कुलिम कठिनता पाई । सुमिरि सनेह  
 निवासुत को दरकि दरार न जाई ॥ ३ ॥ तातमरन तिय-  
 न गीधवध भुज दाहिनी गवांई । तुलसी में सब भांति  
 पने कुलहि कास्तिमा लाई ॥ ४ ॥ ६ ॥

श्लोक १० । ओर अंत लों ॥१॥२॥३॥ दाहिना भुज भाई को फहत  
 ४ ॥ ६ ॥

मेरो सब पुरुषारथ याको । विपति दंटावन बंधु याहु-  
 करों भरोसो काको ॥ १ ॥ सुनु सुयीव सावेहूं मी पर  
 वदन विधाता । ऐसी समय समर संकट हों तज्यो  
 सो भाता ॥ २ ॥ गिरि कानन जेहैं सायामृग हों पुनि  
 संघाती । छैहै कहा विभीषन की गति रही सोच  
 शती ॥ ३ ॥ तुलसी सुनि प्रभुवचन भालु फपि सकल  
 हिद हारे । जामवंत हनुमंत घोलि तव चौसर जानि  
 ॥ ४ ॥ ७ ॥

श्लोक १० । विपति बटावन विपति को पटावनरारो ॥ ७ ॥

ग मारु—जी हों अब अनुसासन पावों । तौ चंद्र-  
 नचोरि चैल ज्यों जानि सुधा सिर नावों ॥ १ ॥ कौ  
 दसों व्याणावलि अमृतमुंड मदि लावों । भेदि भुएन  
 ननु दाहिरो तुरत राहु देतावों ॥ २ ॥ विबुध देद  
 पानी धरि ती प्रभु अनुग कषावों । पटकों मीच नीच  
 ज्यों सबहि को पार पहावों ॥ ३ ॥ तुम्हरेहि कृपा

प्रताप तिहारहि नेकु विलंब न जावों । दीजे सोइ भाय  
तुलसी प्रभु जेहि तुम्हरे मन भावों ॥ ४ ॥ ८ ॥

जौ ३० । हनुमानजी की उक्ति है जो अब हम आज्ञा पावें तब  
षष्ठ संम चन्द्रमा को गारि कै अमृत आनि कै सिर नवावें ॥ १ ॥  
अथवा पाताल के सपों को गारि कै अमृत को कुंड भूमि पर ले आवें  
अथवा ब्रह्मांड को भेदन करि तेहि राह तेहि सूर्य को बाहर करों और  
तेहि राह को राहु से बंद करि दें । भाव जब सूर्य ब्रह्मांड में न रहें  
तब कैसे भिनुसार होयगो । “काज नसाईहि होत प्रभांता” यह आशय  
लेके हनुमानजी । कहे विबुधवैद्य अश्वनीकुमार, वरवस जो रावरी अनु  
गुदास मीचु मृत्यु, मूपक मूसा ॥ ३ ॥ ४ ॥ ८ ॥

२० सुनि हनुमंतवचन रघुवीर । सत्य समीरसुधन सब  
लायक कछौ राम धरि धोर ॥ १ ॥ चाहिय वैद ईस भायसु  
धरि सोस कीस बल ऐन । आन्यौ सदनसहित सोवत ही  
जौलौ पलकु परै न ॥ २ ॥ जियै कुंअर निस, मिलै मूलि  
का कौण्डी बिनय रुपिन । उठ्यो कपीस सुमिरि सीतापति  
प्रल्यौ सजीवन लेन ॥ ३ ॥ कालनेमि दलि वेगि विलोक्यौ  
द्रोनाचल जिय जानि । देपी दिव्यौपधी जहां तथं करी न  
परो पहिचानि ॥ ३ ॥ जियौ उठाइ कुधर कटुक ज्यौ वेगि  
न जाइ वपानि । ज्यौ धाए गजराज उधारन सपदि सुदर  
सनपानि ॥ ४ ॥ आनि पहार जोहारे प्रभु कियौ वैदराज  
उपचार । करुनासिंधु बंधु भेख्यौ मिटि गयो सकल दुपभाक  
॥ ५ ॥ सुदित भालु कपि कटक लछौ जनु समर पयोनिधि  
पार । बहुरि ठौरही रापि महीधर आयो पवनकुमार ॥ ६ ॥  
सिनसहित से कहि सराहत पुनि पुनि राम सुजान । बरपि  
प्रसंसत विबुध वजाइ निसान ॥ ७ ॥

सुमित्रासु सुधि पाइ निमाचर भये मनहुं विनु प्रान । परी  
 सोरी सोरि लंकगट दंड हांक हनुमान ॥ ८॥८ ॥

शुनि १० ॥ १ ॥ श्रीगणेश कहे कि वैद्य नाहिण यह आज्ञा स्वामी  
 ही हनुमान कय अयन मिर पर परिके परमीहत वैद्य को लंका  
 में मोक्षनाई आन्यो एतने शोघना मे कि जय लो पलक न परयो ॥२॥  
 हृषेन नामा वैद्य-जां लंका मे आयो सो विने कीन्दी कि राति भर मे  
 सो पिळ तो कुंभर भावे ॥ ३ ॥ ४ ॥ कुंभर पर्वत, कंदुक गेंदा, वेग  
 शोघना, मुदशेनपानि विष्णु ॥ ५ ॥ ६ ॥ ठौरहीं जहां से आए रहे  
 सो रापि आए ॥ ७ ॥ ८ ॥ ९ ॥

राम कीदारा । कौतुक हीं कापि कुंभर लियो है । चल्थो  
 लम नाइ माघ रघुनाथहि सरिम न वेगु वियो है ॥१॥ देख्यो  
 प्रात जानि निमिचर विनु फर सर उयो छियो है । पखी कहि  
 राम पवन राष्यो गिरि पुर तेहि तेज पियो है ॥ २ ॥ जाइ  
 भरत भरि अंक भेटि निज जीवन दान दियो है । दुप लघु  
 लपन सरम घायल सुनि मुय वडो कीस जियो है ॥ ३ ॥  
 पायसु इतहि स्वामि संकट उत परत न कछू कियो है ।  
 तुलसिदास विहग्यो, अकास सो कैसे के जात सियो है  
 ॥ ४॥१० ॥

कौतुक ३० । सरिस न वेग वियो है जाके परावर दुमरे फो पैग  
 नहीं है । १ ॥ भरत जू हनुमान जी को जात देखे निधर जानि के  
 विनु फर को यान हृदय में धारयो, तेहि यान ने पुर कहे संपूर्ण हनुमान  
 जी के तेज को पी लियो । हनुमानजू राम कहि के पृथ्वी में गिरे पर्वत  
 को पवन ने रोकि राख्यो भाव जाते पुरी न दधि जाय । २ । भरत  
 जू हनुमान जी के दिग जाय के अंक भरि भेटि के पुनि अपना आर-  
 दाय हनुमान जू को दान दियो है तप हनुमान जू जी उठे हैं । एतना  
 शेष है । सरम घायल मर्म स्थान

जू की आज्ञा अवधि भर अयोध्या जी में रहिये की औ. उत श्रीराघव  
जू संकट में हैं कुछ करत नहीं वनत है । भाव न रहत वनत न जात  
वनत गोसाँई जी कहत हैं कि फय्यो आकाश सो कैसे सियो जात है  
॥ ४॥१० ॥

भरत सत्रुसूदन बिलोकि कपि चित चकित भयो है ।  
राम लपन रन जीति अवध आए कौधों मोहि भ्रम कौधों  
काह्ल कपट ठयो है ॥ १ ॥ प्रेम पुलकि पहिचानि कै पद  
पदुम नयो है । कछ्यौ न परत जेहि भांति टुहुं भाइन्ह सनेह  
सों सो उर लाइ लयो है ॥ २ ॥ समाचार कहि गइरू भौ  
तेहि ताप तयो है । कुधरसहित चटो बिसिष वेगि पठवौ  
सुनि हरि हिय गरव गूठ उपयौ है ॥ ३ ॥ तीर ते उतरि  
जसु कछ्यौ चहै गुन गननि जयो है । धन्य भरत धन्य भरत  
करत भयौ मगन मौन रह्यौ मन अनुराग रयौ है ॥ ४ ॥  
यह जलनिधि पन्यौ मय्यो लँघ्यो वंध्यौ अंचयो है । तुलसिदास  
रघुवीर वंधु महिमा को सिंधु तरि को कवि पार गयो है  
॥ ५॥११ ॥

भरत इ०सु० ॥११२॥ हनुमान जू समाचार कहे । गहरु कहें बिक्रम  
भयो तेहि ताप ते भरत जू तपि जात भए । भरत जू कहत भये कि  
पर्वतसहित हमारे वाण पर चटो तुम को शीघ्र प्रभु के दिग भेज देउं,  
यह मुनि के हनुमान जी के हृदय में भारी अहंकार उपज्यौ है कि-  
“मोरे भार चलाहि किमि बाना” । फिर हनुमान जी वाण पर चढ़े भरतजू  
को बोझ न जान परयौ वाण चलावन लगे तब हनुमान जू भरतजू  
को मभाव समुक्ति वाण ते उतरि के भरतजू को यश कहा चाह्यौ पर  
भरतजू के गुणगणों ने जीति लियो है । भाव कहिये को न समर्थ  
भये धन्य धन्य भरत कहत मगन भए औ चुप है जात भए औ मन  
भरतजू के अनुराग में रंगि गयो ॥३॥४॥ यह समुद्र को सगर महा-

राज के पुत्रों ने खन्यो वा मियव्रत ने औ देवता दैत्यों ने मध्यो औ हनुमान जी ने नांघ्यो श्रीरघुनाथ ने धंधिउ औ अगस्त्य जी अचइ गए । गोसाईं जी कहत हैं कि भरत की महिमा समुद्र को तरि के कौन बस कबि है कि जो पार गयो है । एहि समुद्र तें महिमा समुद्र को अधिक जनाए ॥ ५॥११ ॥

हो तो नहिं जो जग जनम भरत को । ती कपि कहत कृपांधार भग चलि आचरण चरत को ॥ १ ॥ धोरज धरम धरनिधर धुरहुं तें गुरु धुर धरनि धरत को । सब सदगुन सनमानि आनि उर अघ औगुन निदरत को ॥ २ ॥ सिवहु न सुगम सनेह रामपद सुजननि सुलभ करत को । सृजि निज जमु सुरतह तुलसी कहुं अभिमत फरनि फरत को ॥ ३॥१२ ॥

होतो इ० । अब हनुमान जी की उक्ति । गोसाईं जी कहत हैं जगत में जो भरत जी को जनम न होतो तो स्नेह का मार्ग कृपांधार सम है ता पर चलि के तेहि व्रत को को आचरण करत ॥१॥ धरणी-धर जो पर्वत तेहि के धुर कहैं भारहु ते गुरु कहैं अधिक है भार जेहि को ऐसे धोरज धर्म को धरणी पर को धरत औ सब सदगुनों को सनमानि कै हृद में आनि कै अघ औ औगुनन को कौन दरत कहैं विदीर्ण करत वा निदरत कहैं निरादर करत ॥२॥ जो रामपद सनेह शिव को भी नहीं सुगम सो सुजननि को सुलभ करत । भाव भरत जी की दशा स्मरण करि के श्रीरामपद में प्रीति उपजति है “कहत सुनत सनिभाव भरत को । सीयरापद होइ न रत को” । निज यश रूप सुर-त को सृजि के तुलसी कहं वांछित फरनि को को फरत भरत जी प्रति श्रीराम जी की उक्ति है “मिटिहै पाप प्रपंच सब अखिल अमंगल-भार । बोक सुजस परलोक मुख सुमिरत नाम तुम्हार” ॥३॥१२॥

सुनि रनघायल लघन परे हैं । स्वामि काज संयाम



सुभट सो लोहै ललकि लरे हैं ॥ १ ॥ सुवन सोक संतोष  
 सुमित्रहिं रघुपति भगति वरे हैं । छिन छिन गात सुपात  
 छिनहिं छिनु हुलसत होत हरे हैं ॥ २ ॥ कपि सो कहत  
 सुभाय अंब के अंबक अंबु भरे हैं । रघुनंदन विनु बंधु कुंभ-  
 वसर जद्यपि धनु दुसरे हैं ॥ ३ ॥ तात जाहु कपि संग रिपु-  
 सूदन उठि कर जोरि परे हैं । प्रमुदित पुलकि पैत पूरे जनु  
 विधिवस सुठर ठरे हैं ॥ ४ ॥ अंब अनुज गति लपि पवनज  
 भरतादि गलानि गरे हैं । तुलसौ सब समुझाइ मातु तेहि  
 समय सचेत करे हैं ॥ ५ ॥ १३ ॥

शुनि ३० । स्वामी के कार्य हेतु संग्राम में सुभट जो मेघनाद तासो  
 ललकारि के लोह करि लरे हैं तेहि रण में लपलाल घायल परे हैं  
 यह सुनि के सुमित्राजू को पुत्र को शोक है औ लक्ष्मणजू रघुपति की  
 भक्ति को वरे कहे अंगीकार किए हैं ताते संतोष है याते छिन छिन में  
 गात सुपात औ छिन छिन में हुलसत औ हरे होत है ॥ १ ॥ २ ॥  
 माता के नेत्रों में जल भरे हैं स्वाभाविक कपि सो कहति है यद्यपि धनु  
 दूसरा है अर्थात् सहायक है तथापि कुअवसर में बिना बंधु के रघुनन्दन  
 भए ॥ ३ ॥ हे रिपुसूदन अब तुम इनुमान के संग जाउ यह सुनि  
 सजुहन जू हाथ जोरि के खड़े होत भए आनन्द करि पुलकित होत  
 भए मानो पूरे दाव पर विधि के बस पास सुन्दर दार से दरे हैं माता  
 की औ सजुहन की दशा देखि इनुमान ज औ भरत आदिक गलानि ने  
 गरत भए तेहि समय में मातु के सजुशाय के सब सचेत करे हैं ॥ ४ ॥ १३ ॥

विजय सुनाइ वीर परि पाय । कहीं कहा कपोस तुम्ह  
 सुचि सुमति सुहृद सुभाय ॥ १ ॥ स्वामि संकट हेतु हीं लड  
 टाननि जनम्यौ जाय । समय पाइ कहाइ सेवक घब्यौ तौन  
 सहाय ॥ २ ॥ कहत मिदिल सनेह भो जनु धीर घायल  
 घाय । भरतगति लपि मातु सब रहि ज्यौ गुही विनु माय ॥

॥ ३ ॥ भेट कहि कहियो कछौ यों कठिनमानस माय ।  
 लाल लोने लपन सहित मुकलित लागत नाय ॥ ४ ॥ देखि  
 बंधु मनेह अंध सुभाउ लपन कुठाय । तपत तुलसी तरनि-  
 वामकु ठाँह नये तिहुं ताय ॥ ५ ॥ १४ ॥

विनय ३० ॥१॥ जाय व्यर्थ, प्रद्यो तैन सहाय सहाय में युक्त  
 न पयो ॥ २ ॥ ज्यों गुडी बिनु वायु जैसे वे हवा की गुडी ॥ ३ ॥  
 श्रीकौशिल्याजू कहति हैं कि हमारो भेट कहि कै ऐसो कहना कि  
 तुम्हारी कठिनमानस माता ने अस कही है कि हे लाल नाय कहें  
 नाव तुम्हारो लपन सहित ललित लागत है । भाव निज शोभा जो  
 बाहो नो लपनसहित आओ ॥ ४ ॥ भरत शत्रुहन को सनेह औ  
 माता को सुभाव औ लपन को कुठाय में देखि कै तरनि जो सूर्य तिन  
 के पास देनिदारे जो हनुमानजू सो यह नये तीनों ताप से तपत हैं ।  
 शंका । नन्दिग्राम में श्रीकौशिल्या जू आदि कैसे पास भई । उत्तर ।  
 महात्मन के मुख से अस सुना है जब लक्ष्मणजू को शक्ति लगी तब  
 सुमित्राजू स्वप्न देखयो कि भुजा को सर्प लील्यो, सो जाय श्रीवशिष्ठ जू  
 सो कही सो मुनि वशिष्ठजू कही कि लक्ष्मण को कुछ आरिष्ट है सो  
 ताके हेतु यह शांति के अर्थ किया चाहिए परन्तु यह समय राक्षस  
 करि यह नहीं होय पावत । भरत जो रक्षा करें तो यह होय तब सब  
 मिले नन्दिग्राम में भरत के समीप आय के समाचार कहे । तब भरत  
 बिना गासी को वान लै करि रक्षा हेतु धरे ताही समय में हनुमान  
 आए सो निश्चर के भ्रम से भरतजू मारत भए ॥ ५ ॥ १४ ॥

हृदय घाउ मेरे पीर रघुवीरै । पाइ सजौवन जागि  
 कहत यों प्रेम पुलकि विसरै सरौरै ॥ १ ॥ मोहि कहा वृकत  
 पुनि पुनि जैसे पाठ अरथ चरचा करै । सोभा सुप कति  
 लाह भूप ऊहुं केवल कांति मोल हीरै ॥ २ ॥ तुलसी मुनि  
 मौमिबचन सब धरि न सकत धीरौ धीरै । उपमा राम  
 लपन को प्रीति कौ क्यों दौजे छीरै नीरै ॥ ३ ॥ १५ ॥

हृदय ३० । श्रीलक्ष्मण जू सजीवन के पाय के जागि के प्रेम में पुलकि के देहाध्यास विसारि के अस कहत हैं कि हम को पुनि पुनि कहा चूझत हौ, जो घाव देखनो होय तो हमारे हृदय में देखो ओ पीर पूलना होय तो श्रीरघुवीर जू सो पूछो । जैसे पाठ के अर्थ की चर्चा सूगा से कोऊ पूछें । भाव तस हम से पूछना है । शोभा मुख हानि औ लाभ राजा कहं है हीरा को केवल कांति औ मोल मात्र है, अस लक्ष्मणजू को वचन मुनि धीरो धीर को नहीं धरि सकत है । श्रीराम-लपन की प्रीति की उपमा छीर औ नीर की क्यों दिजिए । भाव उन की प्रीति खटाई आदि तें विलगति है ॥ ३ ॥ १५ ॥

राग कान्हरा । रातज राम कामसत सुंदर । रिपु रन जीति अनुजसंग सीमित फेरत चाप विक्षिप वनरुह कर ॥ १ ॥  
 स्याम शरीर रुचिर स्वम सीकर सोनितकन विच वीच मनो-हर । जनु पद्योतनिकर हरिहित गन भ्राजत मरकत शैल सिपर पर ॥ २ ॥ घायल वीर विराजत चहुं दिसि हरपित-सकल रीछ अरु वनचर । कुसुमित किंसुक तरु समूह महं तरुन तमाल विसाल विटपवर ॥ ३ ॥ राजिवनयन विलोकि कृपा कारि किये अभय मुनि नाग विबुध नर । तुलसिदास यह रूप अनूपम हृदिसरोज वसि दुसह विपति हर ॥ ४ ॥ १६ ॥

अब रावणादि सब निशाचरों के वध के अनंतर श्री रघुनाथ जी के स्वरूप को, वर्णन करत हैं । राजत ३० । वनरुह कमल ॥ १ ॥ सुंदर श्याम शरीर में सुंदर श्रमविन्दु औ वीच २ में श्रोणितकण हैं । मानो खद्योत समूह औ हरिहित जे चंद्रमा तिन के गण जे तारा ते मरकत शैल के सिपर पर शोभत हैं इहां खद्योत श्रोणितकण है औ तारा श्रमविन्दु है मरकत शैल श्रीराम को शरीर है खद्योत को कोऊ देश में जुगनु कोऊ देश में भगजोगिनी कहत हैं औ जो खद्योत सूर्य वाचक होय तौ भी वनत है क्योंकि अरुण रंग सूर्य का भी है ॥ २ ॥

मानो फूले मए पलाम के नरु समूह में गुवा श्रेष्ठ विशाल तमाल को  
 हल है। इहां वायल वीर फूले पलामसम हें तमालसम श्रीराम हें  
 ॥ ३ ॥ ४ ॥ १६ ॥

राग अमावसी । अवधि आजु कियों शीरो दिन है हैं ।  
 षटि धवरहर विलोकि दपिन दिसि वृक्ष धीं पथिक कहा  
 ते आए वै हैं ॥ १ ॥ बहुरि विचारि हारि हिय सोचति  
 पुनकिगात नागे लोचन धौ हैं । निज वासरनि धरप पुरवैगो  
 विधि मेरे तछं करम कठिन कृत हो हैं ॥ २ ॥ वन रघुवीर  
 मातु गृह जीवति निलज प्राग सुनि सुनि सुष सै हैं । तुल-  
 सिदास मो सी कठोर चित कुलिश सालभंजिको न है हैं  
 ॥ ३ ॥ १७ ॥

अवधि ३० । श्रीकौशल्या जू की उक्ति रघुनाथ के आश्वे को  
 दिन आगुइ है कि दुइ दिन और है सखी ते कहति है कि अटारो पर  
 चाँद के दक्षिण दिशा देखि के पथिक सो वृष्ट कि वै कहां ते आए हें ।  
 भाव कदापि कहीं रघुनाथ से आवत के भेंट भई होय ॥ १ ॥ विचार  
 करि हारि हिय सोच करत हें पुलकावली अंग में है आँ नेत्रन से आँसू  
 टपकन लगे । अब हृदय में सोचत हें कि तहां विधाता के निकट मेरे  
 हन कठिन कर्म कोई है ताते ब्रह्मा अपने दिनन सो चोदह वर्ष पुरवैगो  
 ॥ २ ॥ कुलिश सालभंजिको न है हें कुलिश कहै वज की सालभंजिका  
 कहै मतिमा सो भी नहीं होगी ॥ ३ ॥ १७ ॥

आत्मी अब राम लपन कित है हैं । चित्रकूट तज्यो तब  
 ते न लही सुधि वधूसमेत कुसल सुत है हैं ॥ १ ॥ वारि  
 बयारि विषम हिम आतप सटि विनु वसन भूमितल सै हैं ।  
 कंद मूल फल फूल असन वन भोजन समय मिलात कैसे  
 वै हैं ॥ २ ॥ लिन्हहि विलोकि सोचिहै लता द्रुम पग नग

सुनि लोचन जल च्दैहैं । तुलसिदास तिन्ह को जननी हौं  
मो सो निठुर चित औरौ कहुं छैहैं ॥ ३॥१८ ॥

आली ३० । शंका । हनुमान जी से तो सब वृत्तान्त सुने रहीं  
चित्रकूट तज्यो तव ते न लही सुधि यह कैसे कहति हैं । उत्तर । व्या-  
कुलता करि । अपर पद सु० ॥ १८ ॥

राग सोरठ । वैठी सगुन मनावति माता । कव ऐहैं  
मेरे बाल कुसल घर कहहु काग फुरि वाता ॥ १ ॥ दूध भात  
की दोनी देहौं सोने चोंच मटैहौं । जब सियसहित  
बिलोकि नयन भरि राम लपन उर लैहौं ॥ २ ॥ अवधि  
समोप जानि जननी जिय अति आतुर अकुलानी । गनक  
बुलाइ पाय परि पृच्छति प्रेम भगन मृदुबानी ॥ ३ ॥ तेहि  
अवसर कोउ भरत निकट तें समाचार लै आयौ । प्रभु भाग-  
सन सुनत तुलसी मानो मौन भरत जल पायौ ॥४॥१८॥

वैठी ३० । पद सुगम ॥ १९ ॥

राग गौरी । छेमकरी बलि बोलि सुबानी । कुसल छेम  
सिय राम लपन कव ऐहैं अवधि अवध रजधानी ॥ १ ॥-ससि-  
सुपि कुंकुमवरनि सुलोचनि मोचनि सोचतु वेद वपानी ।  
देवि दया करि देहि दरसफल जोरि पानि विनवाहि सब  
रानी ॥ २ ॥ सुनि सनेहमय बचन निकट ह्वै मंजुल मंडल  
कौ मडरानी । सुभ संगल आनंद गगन धुनि अकनि  
अकनि उर जरनि जुडानी ॥३॥ फरकन लगे सुभंग विदिसि  
दिसि मन प्रसन्न दुप दसा सिरानी । करहि प्रनाम सप्रेम  
पुलकि तन मानि विविध बलि भगुन मयानी ॥ ४ ॥ तेहि  
अवसर हनुमान भरत सो कही मकन कान्धान कहानी ।

तुलसिदास मोड़ चाह मज्जोबनि विषम वियोग बिधा बडि  
भानी ॥ ५॥२० ॥

उप ३० । छमकरी मपेद्रमुखवाली चीन्ह को कहत है । फाहू देश  
में खेपकल्यानी कहत है । ऐंई अवधि अवध रजधानी । रजधानी की  
जो मौवां तेहि अयोध्या जी में कव ऐंई ॥ १ ॥ हे शशिमुखी हे  
अरुणवर्णा तूं कई त्रुप ॥ २ ॥ ३ ॥ मानि विविधि बलि अनेकन पूजा  
मानि के ॥ ४ ॥ सोई कल्यान कहानी रूप इच्छित सजीवन ने विषम  
वियोगजनित जो बड़ी व्यथा ताको जराय दिए ॥ ५ ॥ २० ॥

राग धनाथी । सुनियत सागर सेतु बंधायो । कोसलपति  
की कुसल सकल सुधि कीउ एक दूत भरत पहि ल्यायो ॥ १ ॥  
बधो विराध त्रिसिरा पर दूधन सूपनषा की रूप नसायो ।  
हति कदंध बल बंध बालि दलि क्लुपामिंधु सुयीव बसायो  
॥ २ ॥ सरनागत अपनाइ विभीषन रावन सकुल समूल  
बहायो । विबुधसमाज निवाजि बांइ दे बंदि श्रीर वर  
बिरुद कहायो ॥ ३ ॥ एक एक सों समाचार सुनि नगर  
लोग जहं तहं सब धायो । धन धुनि अकनि सुदित मयूर  
ज्यों बूडत जलधि पार सो पायो ॥ ४ ॥ अवधि आजु यों  
कहत परसपर बेगि विमान निकट पुर आयो । उतरि  
अनुज अनुगनि समेत प्रभु गुरु द्विज गन चरननि सिरु नायो  
॥ ५ ॥ जो जेहि लोग राम तेहि विधि मिलि सब के मन  
धति मोद बढायो । भेंटी मातु भरत भरतानुज क्यों कहीं  
प्रेम अमित अनमायो ॥ ६ ॥ तेही दिन मुनिबृंद अनंदित  
तुरित तिलक की साज सजायो । महाराज रघुबंधसतिलक  
को सादर तुलसिदास गुन गायो ॥ ७॥२१ ॥

सुनियत ३० सु० ॥१॥२॥३॥ मेघधुनि सुनि के जैसे मयूर महदित

होत अर्थात् तस प्रमुदित भए औ जस समुद्र में वृहत पार पावै तस  
पाए ॥४॥ अनुग सेवक ॥ ५ ॥ अनमायो जो न अमाय ॥६॥७॥१॥

राग जयतिश्री । रन जीति राम राउ आए । सानुज  
सदल ससीय कुसल आजु अवध अनंद वधाए ॥ १ ॥ अरि-  
पुर नारि उजारि मारि रिपु विवुध सुवास वसाए । धरनि  
धेनु महिदेव साधु सब के सब सोच नसाए ॥ २ ॥ दर्द लंक  
थिर यथो विभीषन वचन पियूष पिआए । सुधा सींचि कपि  
कृपा नगर नर नारि निहारि जिआए ॥ ३ ॥ मिले गुर वंधु  
मातु जन परिजन भए सकल मनभाए । दरस हरप दस-  
चारि वरप के दुष पल में विसराए ॥ ४ ॥ बोलि सचिव  
सुचि सोधि सुदिन मुनि मंगल साज सजाए । महाराज  
अभिषेक वरषि सुर सुमन निसान बजाए ॥ ५ ॥ लै लै भेंट  
नृप अहिप लोकपति अति सनेह सिरु नाए । पूजि प्रीति  
पहिचानि राम आदरे अधिक अपनाए ॥ ६ ॥ दान मान  
सनमानि जानि रुचि जाचक जन पहिराए । गए सोक सर  
सूधि मोद सरिता समुद्र गहिराए ॥ ७ ॥ प्रभुप्रताप रवि  
अहित अमंगल अघ उलूक तम ताए । किए विसोक हित  
कोक कोकनद लोक सुजस सुभ छाए ॥ ८ ॥ रामराज  
कुलि काज सुमंगल सवनि सवै सुष पाए । देहिं असीस  
भूमिसुर प्रमुदित प्रजा प्रमोद बढाए ॥ ९ ॥ आसम धरम  
विभाग वेद पथ पावन लोग चलाए । धरम निरत सियराम  
चरन रत मनहुं राम सिय जाए ॥१०॥ कामधेनु महि विटप  
कामतक कोउ विधि धाम न लाए । ते तव अघ तुलसी तेउ  
जिन्ह हित सहित राम गुन गाए ॥ ११॥१२॥ -

रण० सु० ॥ १॥२ ॥ युधा मे साँचि के कपिन को औ कृपा से  
 र के नर नारि को जिआवन भए ॥ ३ ॥ दरश हरप दर्शन के हर्ष  
 मराराज अभिषेक मराराज के अभिषेक होने में ॥ ४ ॥ ५ ॥ अहिप  
 पानि शेष चासुकी आदि औ इन्द्रादि लोकपाल ॥ ६ ॥ सोक रूप  
 व मुखि गए औ आनंद रूप सरिता औ समुद्र अथाह होत भए  
 ७ ॥ मधु के प्रताप रूप सूर्य ने अहित औ अमंगल औ अघ रूप  
 क को मुखदायी जो तम ताको नाश किए । इहां तम करि अविद्या  
 औ हिन रूप चक्रवाक औ कमल को विगत सोक किए औ लोक  
 दर यज्ञ शुभ छाए ॥ ८ ॥ श्रीरघुनाथ के राज्य में सब काज में  
 ल भयो औ सब ने सब प्रकार के सुख पाए ॥ ९ ॥ मनहुं राम  
 जाए मानो श्री सतिाराम के पुत्र हैं । भूमि काम धेनु होत भई औ  
 कल्पतरु होत भए औ कोऊ पर विधाता वाम न भए ते प्रजा तय  
 राज्य में सुखी भए अय तेऊ सुखी हैं जे हितसहित रामगुण  
 ॥ १० ॥ २२ ॥

राग टोडी । आनु अवध आनंद वधावन रिपु रन  
 ते रामु घर आए । सजि सुविमान निसान वजावत  
 रत देव देपन धाए ॥ १ ॥ घर घर चारु चौक चंदन  
 मंगल कलस सबनि साजे । धुज पताक तोरन वितान  
 विविधि भांति वाजन वाजे ॥ २ ॥ रामतिलक सुनि  
 दीप के नृप आए उपहार लिए । सौयसहित आसीन  
 आसन निरपि जोहारत हरपि हिये ॥ ३ ॥ मंगल गान  
 धुनि जयधुनि सुनि असीस धुनि भुवन भरे । वरपि  
 न सुर सिद्ध प्रसंसत सब के सब संताप हरे ॥ ४ ॥ राम-  
 भद्र कामधेनु महि सुप संपदा लोक छाए । जनम  
 म जानकीनाथ के गुनगन तुलसिदास गाए ॥५॥२३ ॥

इति श्री रामगीतावल्यां लंकाकाण्डः समाप्तः ।



आजु इ० ॥ १ ॥ घर घर में सुंदर चौक चंदन ते औ मणि ते औ  
 मंगल कलश सब ने साजे तोरण कहैं बदनवार वितान कहैं मंडप ॥२॥  
 उपहार भेंट, आसीन बैठे ॥ ३ ॥ ४ ॥ श्री रघुनाथ के राज्य में भूमि  
 कामधेनु भई सुख औ संपदा सब लोक में छावत भई जन्म जन्म में  
 जानकीनाथ के गुनगन को गाए । इहां जन्म जन्म पद ते अपने को  
 वाल्मीक जी को अवतार सूचन किए । स्पष्ट श्रीनाभा जी लिखे “कलि  
 कुटिल जीव निस्तार हित वाल्मीक तुलसी भयो” लंका कांड की समाप्ति  
 जैसे वाल्मीक जी रामराज्य में किए तैसे गीतावली में गोसाईं जी किए ।

दोहा ।

मंगल श्री सरयू सरित, मंगल विविन प्रमोद ॥

मंगल सीता राम जू, जो मोदहु को मोद ॥

इति श्रीतुलसीदासकृतरामगीतावलीप्रकाशिकाटीकायां श्रीसीताराम-  
 कृपापात्र श्रीसीतारामीय हरिहरप्रसादकृतौ लङ्काकाण्डः समाप्तः ।

श्रीसीतारामाभ्यां नमः ।

## मटीक गीतावली—उत्तरकाण्ड ।

मङ्गलाचरण—दोहा ।

इत कलंगी उत चंद्रिका, कुंडल तरिवन कान ।  
मिय सियबल्लभ मो सदा, बमो हिये विच आन ॥ १ ॥

मूल ।

राग सोरठ—वन ते आइ कै राजा राम भए भुचाल ।  
मुद्रित चौदह भुञ्जन सब सुप सुपी सब सब काल ॥ १ ॥ मिटे  
कलुप कलैस कुलपन कपट कुपघ कुचाल । गठ दारिद्र टाप  
दाहन दभ टुरित टुवाल ॥ २ ॥ कामधुक सहि कामतक तरु  
उपल सनिगन नाल । नारि नर तेहि समय मुहता भरे भाग  
सुभाल ॥ ३ ॥ बरल आध्रम धरम रत मन वचन वैष मराल ।  
राम सिय सेवक मनेहा माधु मुमुप रमाल ॥ ४ ॥ रामगल  
समाज घरनत मिठ मुर दिगाल । सुगिरि मो तुलसी पत्रु  
हिय छरप होत बिमाल ॥ ५ ॥ १ ॥

टीका ।

वन १० । भए भुभाल पृथ्वीपालन मे मुक्त भए चौदहो भुञ्जन के रामः  
नर शक्ति भौ मय काल मे मय मुन परिसुरी रोन भए । १० वन हारे  
बलेन जो रोगजनित भौ कुलक्षण नृणतेजनादि मो मिटे औ बल्लभरे  
भौ कुपघ मे परि जो कुचाल ते चमन रहे मो मिटे औ दारण हरे रोन

दंभ औ पाप रूप दुकाल अर्थात् दुरभिक्षादि तें जो दारिद्रजनित दोष रहे सो गए ॥ २ ॥ भूमि कामधेनु भई, वृक्ष कल्पवृक्ष भए, पाथर सब लालमणि के समूह भए अर्थात् चिन्तामणि भए औ तेहि समय में नारि नर सुकृती औ सुन्दर भाल अपना भाग्य तें भरत भए ॥ ३ ॥ वरणाश्रम धर्म में रत औ मन वचन करि हंस सम वेपधारी अर्थात् बोली मधुर औ वेपौ उज्वल औ राम सिय के सेवक औ सनेही औ परकार्यसाधक औ सुमुख कहैं प्रसन्नमुख औ रसयुक्त वचन अर्थात् मिष्ठभाषी ॥ ४ ॥ १ ॥

राग ललित—भोर जानकीजीवन जागे । सूत मागध प्रवीन वेनु बोना धुनि द्वारे गायक सरस रागरागे ॥ १ ॥ स्यामल सलोने गात आलसबस जभाँति प्रियाप्रेमरस पागे । उनीदे लोचन चारुमुख सुपमा सिंगारु हेरि हारे मार भूरि भागे ॥ २ ॥ सहज सुहाई छवि उपमा न लहै काव मुदित बिलोकन लागे । तुलसिदास निसिवासर अनूप रूप रहत प्रेम अनुरागे ॥ ३ ॥ २ ॥

भोर ३० । सूत पौराणिक, मागध वंशप्रसंसक, सरस रागते रागे कहैं गावत भए । उनीदे लोचन नन्दि भरे नयन सुन्दर और मुख की परम शोभा देखि श्रृंगार रस हारे औ एक के को कहैं बहुत काम भागे ॥ १ ॥ स्वाभाविक सुन्दर छवि ताकी उपमा कवि नहीं पावत । दृषित सब देखन लागे यह अनूप रूप के प्रेम में राति दिन दास अनुरागे रहत हैं ॥ २ ॥ ३ ॥ २ ॥

राग कल्याण—रघुपति राजीवनयन सोभा तन कीटि मयन कमनारस अयन चयन रूप भूप माई । टेपो मपि अतु-  
न्तित छवि संतबंध कानन रधि गावत कल कीरति कधि  
कौविद ममुदाई ॥ १ ॥ मञ्जन करि सरजुतोर ठाटे रघुवंस  
वीर सेवत पदकमल धीर निरमल चित लाई । ब्रह्ममंडली

पूर्वाह्न मध्य इन्द्रवदन राजत मुषमदन लोकलोकन मुष-  
 दाई ॥ १ ॥ विद्युत्त मिररुहवग्ग कुंचित विच सुमनजुध-  
 मन्दिन्नम मिष्कानि अनीक ममि समीप आई । जनु सभोत  
 दे अकोर राधि पुग रुचिर मोर कुंडलछवि निरपि चोर सङ्ग-  
 वत अधिकाई । ३ ॥ ललितभृकुटि तिलकभाल चिबुक  
 वधर द्विज रमाल चाम उततर कपीत नामिका मुहाई ।  
 मधुकर जुग पंकज विच मुक विनोकि नीरज पर लरत  
 मधुर अवली मानो योवि कियो जाई ॥ ४ ॥ मुंद्र पठ पीत  
 विमद भाजत वनमाल उरमि तुलमिका प्रसून रचित  
 विविध विधि बनाई । तरु तमाल अधिविच जनु त्रिविधि कीर  
 पांति रुचिर हिमजाल अंतर परि ताते न उहाई ॥ ५ ॥ संकर  
 हृदि पुंडरीक निवसत हरि चंचरीक निरव्यलोक मानस गृह  
 संतत रहे छाई । अतिमय आनंद मूल तुलसिदाम सानमूल  
 धरन सकल मूल अवधमंडन रघुराई ॥ ६ ॥ ३ ॥

रघुपति ३० । सखी प्रति सखी कछति है । सी माई अर्थात् सी सखी रघु-  
 पति जो कपलनयन हैं औ जिन के तन की शोभा कोदिपयन सम है औ  
 करणारम के अयन कहे गृह हैं औ चैनदाता रूप भूरे हैं जिन को वागावत  
 चैन कहे आनंद रूप ब्रह्मादि तिन के भूप हैं तिन को देखो अतुलित छवि  
 है उन की औ संत रूपा कमल वन के सूर्य हैं अर्थात् प्रफुलित करनिहारे  
 हैं औ उन की मुंद्रि कीरति कवि पंडितन को ममुदाय गावत हैं ॥ १ ॥  
 सो श्रीरघुवंश वीर स्नान करि के सरजूतीर में खड़े हैं । धीर कहे शानी  
 अपने निर्मल चित्त को लगाय उन के पद कमल को भवत है । ब्राह्मणन  
 की मंडली औ मुनिन के समूहन के बीच में चन्द्रवदन सुखसदन  
 सब लोग के नैनन को सुखदाता श्रीरघुनाथ सोहत हैं । ब्राह्मण चनिष्ठ  
 न्याय करि ब्रह्ममंडली ते मुनांद्रगुन्द पृथक् लिखे ॥ २ ॥ मिररुह

कहें वार कुंचित कहें टेढे तिन को वरुथ कहें समूह विधुरित कहें विखरे भए हैं । तिन के बीच बीच फूलन के गुच्छे गथे हैं, सो मानो मणियुक्त सर्पन के बालकन की सेना चन्द्रमा के समीप आई है, सो सेना देखि चंद्रमा डरि अकोर दै जुगल सुंदर कुंडल जो मयूर है ताको राखे अर्थात् सर्प को मयूर खात है तिन कुंडल मयूरन की छवि देखि चोर सर्पबालक बहुत सकुचत हैं । इहां मणि गूथे भये पुष्प है, सिसुफणि की सेना टेढे विखरे वार हैं चन्द्रमा मुख है कुंडल के आइ कर वार मुख पर नहीं आय सकत है सो सकुचना है । शंका । सर्प को मणि गुप्त रहत हैं इहां फूल तो प्रगट है । उत्तर । मणि जो सिर पर गुप्त रहत है ताकी आभा बाहर चमकत है तैसे बालन में पुष्प गुप्त हैं किंचित् पसुरी जो निकली है सो आभा रूप हैं ॥३॥ भौंहें ललित हैं औ भाल तिलक औ ठोड़ी औ ओठ औ दांत रसीले हैं हंसी अति सुंदर है औ कपोल नासिका सुंदर है मानो नीरज कहें कमल इहां कमल करि नेत्र जानना तिन के ऊपर भ्रम की अवली लरत हैं, यहां भ्रमर की पांक्ति दोनो भौंहें हैं सो कमल रूप नेत्र के रस पान करिने हेतु लरत हैं सो विलोकि मधुकर जुगल जो कमल में हैं, इहां मधुकर जुगल कस्तूरी को तिलक रेख है । जो केसर को तिलक मानो तो पीत जुगल मधुकर जानो पंकज मुख है अर्थात् कमल वदन पर जो जुग मधुकर तिलक रेख सो औ नासिका रूप सुभा सो दोऊ के बीच अर्थात् दोऊ भौंह भ्रमरावली के बीच कियो । भाव धरहर कियो जाय कै ॥ ४ ॥ सुंदर पीत वस्त्र धारे हैं औ विमद बनमाल तुलसी औ पुष्प करि रचित विविधि विधान ते घनाई उर में शोभत । मानो तमाल वृक्ष के अधविच त्रिविध मृगन की पांति नचिर बैठी है । कोऊ संदेह करै कि पक्षी चंचल होत हैं थिर क्यों है गहे हैं, ता हेतु लिखत हैं कि सोने के जाल के भीतर परे हैं ताने उड़ात नहीं हैं । इहां तमाल तरु राघव हैं । अधविच वक्षस्थल है त्रिविध कीर पांति बनमाला जो हरित श्वेत पीत तुलसी पुष्पन करि है सोई, सोने की जाल पीत वसन है ॥ ५ ॥ शिव जी के हृदय कमल में राम रूपा भंवर जो नेवास करत है औ विवर्णलीक कहें दूपनरहित मानम कहें हृदय रूप गृह में निरंतर जो छायो रहत है औ अतिस आनन्द को मूल है औ

मङ्गल भूल हरणिहारो औ श्री अवध के गंडन कहैं भूपन करनिहारो  
 रघुसौ, मैं जो तुलसीदास ना पर मानुकुल रहौ ॥ ६॥३॥

राजत रघुवीर धोर भंजन भदभीर पीरहरन मक्षण  
 मरजुतीर निरपहु सपि मोहैं । रंग अनुज मनुजनिकर  
 दनुजवन विरंगकरन जंग जंग छवि अनंग अगनित मन  
 मोहैं ॥ १ ॥ मुपमा मुप मोल नयन नयन निरपि निरपि नील  
 कुंचितकच कुंडल कल नासिक चित पोहैं । मनरं दुंदुविंध  
 मध्य बांज मोन भंजन लपि सधुप मकार कीर चाण तक त-  
 कि निज गोहैं ॥ २ ॥ ललित गंडमंडल मुविमाल भाल-  
 तिलक भालक मंजुतर अदक अक रुचिर वंक भौहैं । अरुन  
 यधर सधुर दोल दमन दमक दासिनिदुति दुलमति पिय  
 हमनि चान चितवनि तिरछौहैं ॥ ३ ॥ कंबुकंठ भुजविमाल  
 उरनि तरुन तुलसिमाल मंजुल सुतावनिजुत जागति जिय  
 सो हैं । जलु कलिंद लोटनिमनि इंद्रनाल सिपर पर मिध-  
 मति लमति हंसरनि मंदुल अधिकौ हैं ॥ ४ ॥ टिव्यतर  
 दुगुल मध्य नयन रुचिर चंपकचय चंचला कलाप कमक निकर  
 पनि किधौ हैं । सखन चप भूपनिहित भूपन मनिगन  
 ममेत रूप जलधि वपुष नित मन गर्यद वीहैं ॥ ५ ॥ अरुनि  
 येवन चातुरी तुरीय पैपि प्रेममगन यगन परत इत उत मव  
 प्रकित तैहि मनो हैं । तुलसिदास यष्ट मुधि नहि कौन का  
 कहां ते चाइ कौन जाइ ताके टिग कौन ठाउं कोरे ॥ ५ ॥

राजत ६० । श्री मर्या रघुवीर धोर भंजन करनिहारो भदभीर धोर  
 धोर औ मक्षण पीर हरनिहारो मरजु तीर मैं मेरे मोहैं वंदे मनदुप  
 गोपन ह देखहु । भाई औ पदुन मनुप्य मंग हैं औ दनुज हें हट हो

विसेप तोदनिहारें हैं जो दनुजवन पाठ होय तो अस अर्थ करना  
 दनुज रूप वन को तोदनिहारें हैं । हैं तो पंगे बलिष्ठ पर सुंदर ऐसे हैं  
 कि अंग अंग की छवि पर एक को को कहें अगिनित काम मांछें ॥१॥  
 परमा शोभा आ मुख आ शील के गृह जे नैन हैं तिन्हें देख आ श्याम  
 टेढे बाल आ कुंडल आ सुंदर नासिका जे चित्त पोहत हैं तिन्हें देखु ।  
 भाव वशकरि लेत हैं सो मानो चंद्रमा के विंय के मध्य में कमल  
 मछरी पंजरीट लखि कै भंवर मछरी सुआ अपने अपने गाँहें कहैं  
 संबंध जानि आए । इहां चंद्रविंय श्री राघव को मुख है तेहि मध्य कमल  
 मीन खंजन रूप नेत्र है तेहि को देखि कै कमल जानि बाल रूप भ्रमर  
 आए आ कुंडल रूप मकर अपनो सजाती नेत्र मीन को मानि आए  
 आ नासिका जो कीर सोऊ अपनो सजातीय अर्थात् पक्षी नैन खंजन  
 को जानि आए ॥ २ ॥ ललित कपोल मंडल है आ सुंदर विसाल  
 भाल तामें तिलक अति सुंदर टेढ़ी भाँहें अंक सम है आ लाल ओठ  
 है बोल मधुर है दांतन की चमक दामिनि की दुति सम है हंसनि आ  
 तिरछी चितवनि देखि हृदय हुलसति है ॥ ३ ॥ संख के तीन रेखा  
 सम कंठ है भुज विसाल है उर में तुलसी की माला मोतिन की माला  
 युक्त है जाको योगी जिय सो देखत हैं मानो यमुना जी नीलमनिद्र  
 पहार के सिखर को परसि धसति कहैं गिरति तहां हंसनि की पंक्ति  
 संकुल कहैं संकीर्ण अधिक होति अर्थात् एक में एक सटि लसति इहां  
 यमुना तुलसी की माला है मनींद्रनील रघुनाथ हैं सिखर कांधा है  
 ताको परमि धारासम माला नीचे को गिरयो है ताके पास मोतिन  
 की माला है सो हंस की पंक्ति है ॥ ४ ॥ अति अलौकिक पीत वसन  
 भव्य कहैं सुंदर नवीन जो है सो कैधों सुंदर चंपा के पुष्पन का समूह  
 है कैधों बिजुरीन को समूह है कैधों सोननि के भ्रमरन को समूह है  
 अर्थात् पीत भ्रमरन का समूह है आ रूप रूपी समुद्र जो है सो भूपन  
 रूप मनिगन समेत सज्जन के नेत्र रूप मछरी के निकेत कहैं रहिवे  
 को स्थान है । भाव समुद्र में मछरी रहत है सो इहां सज्जन का नेत्र है,  
 वहां मुनिगन रहत इहां भूपन है, तेहि रूप रूपी समुद्र में मन रूप  
 हाथी को वपुष कहैं सरीर बोह लेत है अर्थात् ह्वत उतिराति है ॥५॥

सर्ग के दहन की चतुर्गाई प्रकृति कई मुनि नव तुर्गाय जो श्रीरघु-  
नाथ तिन की देखि के प्रेम से दहन भई . पग नहीं इन घर के ओर  
एत न इन घरज ओर परन नहि ममय मों मत्र चकित है गई । गोसाईं  
हो करन है यह श्राप नहीं रही कि कवन की हों औ केहि ठांय ते  
जाई जो ज्ञान प्राप्त करना है याके दिग हों औ कवन ठांय के रहैया  
हो तुर्गाय ते रघुनाथ योग देतु प्रमान : “तुर्गीया जानकी प्रोक्ता तुरीयो  
रघुनंदनः” इति महागमायणे ॥ ६॥४ ॥

दंपु मपि आज्ञारघुनाथ मोभा वना । नील नीरद वरन वपुप  
भुवनाभरन पीत अवर धरन हरन दुःखदासिनी ॥१॥ सरजु  
मञ्जन किये संग मञ्जन लिये हेतु जनपर हिये कृपा कोमल  
घनो । मञ्जनि आवत भवन मत्त गजवरगवन लंक मृगपति  
ठवनि सुवर कोसल धनी ॥२॥ सघन चिक्कन कुटिल चिकुर  
विलुलित मृदुल करनि विवरत चतुर सरस सुपमा जनो ।  
ललित अहिंसमुनिकर मनहुं ससि सन समर लरत धर-  
हरि करत रुधिर जनु जुगफनौ ॥ ३ ॥ भाल भ्राजत तिलक  
जलज लोचन पलक चारु भू नासिका सुभग मुक आननौ ।  
धियुक्त सुंदर अधर अरुन द्विज दुःख सुधर वचन गंभोर मृदु  
हास भव भाननी ॥ ४ ॥ सवन कुंडल विमल गंड मंडित  
चपल कलित कलकांत अति भांत कछु तिन तनौ । जुगल  
कांचन मकर मनहुं विधुकर मधुर पिअत पहिचानि करि  
सिंधु कौरतिभनी ॥ ५ ॥ उरसि राजत पदिक लीतिरचना  
अधिक माल सुविसाल चहुं पास वनी गजमनी । स्याम नव  
जलद पर निरपि दिनकर कला कौतुको मनहुं रहि घेरि  
उहगन अनौ ॥ ६ ॥ मंदिरनि पर घरी नारि आनंद भरी  
निरपि वरपदि विपुल कुसुम कुंकुम कनी । दास तुलसी राम



परम करुणा धाम काम सतकोटि मद् हरत छवि आपनी  
॥ ७ ॥ ५ ॥

देखु इति । हे सखी आजु जो रघुनाथ की शोभा बनी सो देखु । श्याम मेघ सम शरीर को रंग है सो शरीर समस्त भुवन के आभरण कहैं भूपन रूप है औ पीतवसन का जो पहिरन है सो दाभिनी की छुति हरनिहारो है, सरजू ते भंजन किए संग में सज्जनन को लिए हेतु कहैं भीति जन के ऊपर जिन क हृदय में है औ कृपा करि कोमल स्वभाव बनी कहैं अत्यंत है औ मतवारे श्रेष्ठ हाथी सम चाल है औ लंक कहे कठि औ ठवनि कहे अकड़ सिद्ध सम है । हे सजनी कोशल धनी कुंअर भौन आवत है ॥ २ ॥ सघन चिकन टेढ़े वार अरुद्ध भाव स्नान किए ते अरुद्ध हैं ताको कोमल हाथ सो रघुनाथ धिवरत कहैं पृथक् पृथक् करत तासे अतिरसयुक्त परमा शोभा बनी कहैं उत्पन्न भई । सुंदर सर्पन के बालकन के समूह मानो चन्द्रमा सन युद्ध में लरत तहां दुई सर्प सुंदर धरहरि करत हैं इहा सर्पन के बालकन के समूह वार हैं शक्ति मुख है युग फनी दोउ हाथ है मुख पर जो वार परत हैं सो लख है हाथन ते जो सम्हारव है सो धरहरि है । भाव यह कि अमृत हेतु चंद्रमा सो सर्पन के बालक लरत हैं दुई बड़े सर्प धरहरि करत हैं । कि जो कोई अपना माल न दे तो तासो लड़ना न चाहिये ॥ ३ ॥ ललाट में तिलक शोभत कमल सम नेत्र हैं पलकें और भौंह सुंदर हैं औ नासिका सुंदर सगा के मुख सम है, अर्थात् ठोर सम ठोड़ी औ अरुन अधर ओष्ठ के नीचे को भाग औ दांतनि की दुतिधर कहैं ओष्ठसहित सुंदर है । वचन गंभीर है औ मृदु हँसी संसार की नासनिहारी है ॥४॥ कानन में चंचल निर्मल कुंडल है तिन्ह करि कपोल भूषित हैं कल कहैं सुंदर शोभित आति प्रकाशित जिन्ह की कांति तिन्ह कुंडलन ते कहैं तनी कहैं विस्तार कियो है । ताको कहत हैं मानो दुई सोने के मकर अर्थात् कुंडल रूप मछरी चंद्र की किरन मधुर अमृत पियत इहां मुख चंद्र है रूप अमृत है, समुद्र की कीर्ति जो बनी भई है अर्थात् चन्द्रमा अमृत आदि समुद्र ते उत्पन्न है यह कीर्ति तें पहिचानि करि के पियत कि हमहुं समुद्र तें उत्पन्न हैं तो भाई के चीज लेवे में दोष नहीं ॥ ५ ॥

स में पदिक शोभति ताकी रचना की जोति अधिक है औ गजमुक्ता  
 करि बनी सुंदर विशाल माला चहुं पास शोभत सो मानो श्याम नवीन  
 मेघ पर सूर्य की कला देखि के कौतुक करनेवाली तारागन की सेना घेर  
 री । इहां श्याम नव जलद रघुनाथ को बक्षस्थल है औ पदिक जोति  
 दिनकर की कला हैं तारागन मोती की दाना हैं, कौतुक मेघ सूर्य की  
 कला को होनो हैं ताको देखि तारागन विचारे हमहूँ संग ललटी करै  
 गों मेघ के ऊपर ताहू पर सूर्य के समीप आनि बँठे यह अति आर्थ्य  
 कौतुक किये ॥ ६ ॥ मंदिरन पर खड़ी आनंद भरी नारि निरखि कै  
 बहुत फूल-औ कुमकुम कहैं फेसरि वा रोरी ताकी कनिका को दृष्टि  
 करति हैं । गोसाई जी करत हैं परम करुणा के धाम जो राम सो आपनी  
 धरि सो सौ कोटि काम के मद को हरत हैं ॥ ७ ॥ ५ ॥

षाचु रघुधोर छवि जातिनहि कछु कही । सुभग सिंहा-  
 सनासीन सीतारमन भुयन अभिराम बहुकाम सोभा सही  
 ॥ १ ॥ चारुचामर व्यञ्जन छत्र मनिगन विपुलदाम मुकुता-  
 वली जोति जगिमगि रही । मनहुं राकेस संग इस उडगन  
 बरहि मिलन आये हृदय जानि निज नायही ॥ २ ॥ मुकुट  
 सुंदर सिरसि भालवर तिलक भूकुटिल कचकुंडलनि परम  
 पाभालही । मनहु इरडर जुगल मारध्वज की मफरलागि  
 धवननि करत मेरु की बतदाही ॥ ३ ॥ षष्ठन राजीवदल  
 नयन करुना अयन वदन सुपमासदन हासत्रय तापही ।  
 विविधि कंकनधार उरसि गजमनिमाल ननहु वगपांति  
 जुगमिलि चली जलदही ॥ ४ ॥ घीत निरमल वैश मनहु  
 मरकत सैल पृथुलदामिनि रहो एाद्र तजि सरजरी । एलित  
 सःयकषाप पोनु भुजवल चतुल मनुजतन दनुजदन दहन  
 मंडन मही ॥ ५ ॥ जामु गुन रुपनहि कलित निरगुन सगुन

संभुसनकादि सुफ भक्ति दृष्ट करि गही। दासतुलसी राम-  
चरन पंकज सदा वचन मन कारमं चहै प्रीति नित निर-  
वही ॥ ६ ॥ ६ ॥

आजु ६०। आसीन घंटे, भुवन अभिराम चौदहों भुवन में सुंदर  
है, सही सत्य ॥ १ ॥ सुंदर चंवर पंखा छत्र तामो बहुत मनिगन औ  
मोतिन की पंक्ति अर्थात् झालरि लगी है औ दाम कहे गुच्छा तिन की  
जोति जगमगाय रही मानो छत्र नहीं राकेस कहे पूर्णचन्द्र है, चमर  
नहीं हंस है। चमर स्वेत होत है ताते हंस कहे। मुक्तामणि नहीं है तारा-  
गन हैं औ पंखा नहीं है वरही कहे मयूर है, हृदय में अपना स्वामी  
जानि मित्रन आय पंखा मयूर के पक्ष का है औ मयूर के नाचवे सम  
डोलत रहत है ताते मयूर कहे ॥२॥ सुंदर मुकुट सिरपर है औ ललाट में  
श्रेष्ठ तिलक है भौंहें टेढ़ी हैं औ दोऊ कुंडल परम प्रभा को लही है मानो  
शिव जी के डर ते कामदेव के ध्वजा के दोऊ मछरी कान में लगी  
मेल की बतकही करत हैं। इहां दोऊ कुंडल मछरी हैं। भाव हमारे स्वामी  
काम को मारि डारे अब हम को भी शिव कदापि मारि डारें यह हेतु  
शिव जी को स्वामी रघुनाथ को जानि मेल की बतकही करत हैं कि  
इन्हें के कहे शिव जी न मारेंगे मेल है जायगो ॥ ३ ॥ लाल कमल  
सम नेत्र करुणा के गृह हैं औ मुख परमा शोभा को घर तीनों ताप  
हरता है और विविध प्रकार के कंकन हारादि अर्थात् बनमाला आदि  
औ डर में गजमुक्ता की माला है सो मानो माला नहीं है जुगवर्ति  
पांति है, शरीर रूप मेघ सो मिलि चली है ॥ ४ ॥ मलरहित पीतंग  
को बसन मानो शरीर रूप मरकतमणि कं शैल पर पृथुल कहे समूह  
पीताम्बर रूप बिजुली सहज ही स्वभाव जो चंचल ताको ताज के  
छाय रही धिर होय रही, पीनभुजा औ वल अतुलित है, सुंदर बान  
धनुष धारे मनुष्य के शरीर सम शरीर औ दनुज रूपी बन के दहन  
कहे अग्नि औ पृथ्वी के भूषणकर्ता हैं ॥ ५ ॥ गुण रूप को निर्गुण  
सगुण शिवादि नहीं कहत अर्थात् नहीं निश्चय करि सकत। शंभु सनकादि  
शुंभ ने केवल भक्ति ही को दृष्ट करि गहि रही है। गोसाईं जी कहत हैं

द्विज निरु गम के चरण कण्ठ में मदा मन धवन कर्म करि प्रीति  
 नो निजाहो चाहन है ॥ ६॥६ ॥

रामराज राजमौलि मुनिवर मनहरन सरन लायक  
 सुपदायक रघुनाथक टेंपोरी । लोच लोचनाभिराम नीलमनि  
 तमाल म्यामरूप मोलधाम अंगद्वि अनंगकोरी ॥ १ ॥ भ्राजल  
 सिरमुकुट पुरट निरमित अनिरचित चारु कुंचित कच रुचिर  
 परमसोभा नदि घोरी । मनहुं धंचरीक पुंजकंज वृंद प्रीति-  
 लागि गुंजत कलगान तान दिनमनि रिभयोरी ॥ २ ॥ अरुन  
 कंजदल विमाल लोचन भू तिलकभाल मंडित श्रुतिकुंडलवर  
 सुंदरतर जोरी । मनहुं संघरारि मारि ललित मकर जुग-  
 विचारि दौन्हे ससिकहं पुरारि भ्राजत दुहुंभोरी ॥ ३ ॥  
 सुंदर नासा कपोल चिबुक अधर अरुन बोल मधुर दसन  
 राजत जव चितवत सुपमोरी । कंजकोस भौतर जनु कंजराग  
 सेपर निकर रुचिर रचित विधि विचित्र तडित रंगवोरी  
 ४ कंबुकंठ उरविमाल तुलसिका नवीनमाल मधुकरवर  
 नास विवस उपमा सुनिसोरी । जनुकलिंद जात नीलसैल ते  
 सी समीप कंदवृंद वरपत छवि मधुर घोरिघोरी ॥ ५ ॥  
 नेरमल अति पीतचैल दामिनि जनु जलदनील रापी निज  
 मोभाहित विपुल विधि निहोरी । नैननि को फल विसैप  
 अरु अरुन सगुन वेप निरपहु तजि पलक सुफल जीवन  
 पोरी ॥ ६ ॥ सुंदर सीतासमेत सोभित करुनानिकेत  
 वक सुप देत लेत चितवत चितचोरी । वरनत यह अमित  
 प थकित निगम नागभूप तुलसिदास छवि बिलोकि सारद  
 र भोरी ॥ ७ ॥ ७ ॥

राम राज ६० । राजन के मौलि कहें मस्तक रूप औ मुनिबरन के मन हरनिहारे औ शरण के योग्य मुख के दाता रघुकुल के स्वामी वा रघु नाग जीव ताके स्वामी जो राम राजा तिन को री सखी देखो सब जग के नेत्रों को रमणीय हैं औ नील मणि सम श्याम औ चिक्कन औ तमाल सम पुष्ट औ श्याम हैं औ रूप औ शील के गृह हैं औ कोरी कहें करोरिन काम की छवि है जाको ॥ १ ॥ सिर में पुरट कहें सोना ताको मुकुट निर्मित कहें बनायो औ मणिन करि जड़ित सुंदर शोभत औ सुंदर टेढ़े वाल तिन की उत्कृष्ट शोभा घोरि नहीं मानो वाल नहीं भ्रमरन को समूह हैं मुख औ दोऊ नेत्र एही कमलन के वृंद हैं तिन के प्रीति लागि गुंजार करत हैं सो सुंदर तान करि गान ते सूर्य रूप मुकुट को रिसायो । भाव सूर्य को चंचल सुभाव है ताको रीक्षि कै छोड़ि थिर है घैठे ॥ २ ॥ लाल कमल के दल समान विशाल नेत्र हैं औ भौंह करि तिलक करि भाल शोभित है औ श्रेष्ठ कुंडलनि की जोड़ी अति सुंदर कानन में हैं मानो संवरारि कहें काम ताको मारि कुंडल नहीं हैं ताके पताका केलित दोऊ मछरी हैं तिन को मुख रूप चंद्रमा कहें शिव जू दियो सो दोऊ ओर शोभत है ॥ ३ ॥ नासिका औ कपोल औ ठोड़ी सुंदर हैं औ ओठ लाल हैं बोल मधुर है जब मुख घोरि देखत हैं तब दांतै शोभत हैं मानो कमल कोस के भीतर कंज कहें कमल राग कहें लाल अर्थात् लाल कमल तिन के सुंदर शिखर का समूह अर्थात् पखुरिन का समूह विधि कहें ब्रह्मा ने आश्चर्य विजुली के रंग में घोरि कै रचित कियो है । इहां कंज कोस मुखकोस है ताके भीतर लाल कमल को शिखर को समूह दांतै अरुण है तद्विधा को रंग झलक है वा कंज राग कहें पञ्चरागमाणि शृंग तिन के समूह ॥ ४ ॥ शंख सम कंठ है लाती चौड़ी है तामें नवीन तुलसी को माला है तेहि विषे श्रेष्ठ सुगंध ते विवस है भ्रमर घेरि रहे हैं ताकी जो उपमा है री सखी सो सुनु । मानो कलिदजात कहें जमुना जी नील परबत ते घसी कहें गिरी तिन के समीप कंद वृंद कहें मेघन को समूह । इहां जमुना श्याम तुलसी की माला है श्री राघव को शरीर नीलपर्वत है पसिबो माला को नीचे के ओर लटकनो है ताके समीप जो

कमल का धार है सो देव है. माना के पुत्र के मन के उदर हैं मुख से  
 जो मन करके दान है सो करमना है. जो गुंजार मन्त्र करत हैं सो गर-  
 वना है ॥५॥ काँच निर्मल जो रंग बरन बिजली मम दाहो मानो श्याम  
 रंगने बहुत प्रकार निहोरो करि अपने प्रोभाहित राखी है । उहां श्याम  
 रंग श्याम शरीर है. रंग रंग (करदा) श्यामिने में करक अलंकार है । जनु  
 लपेता है, नाल मन्त्र में करकानिभयोकि नीन अलंकार का संकर है ।  
 शिरो करि मैनन को फल नर दान जगुण मगुण वेप थी रामचंद्र को  
 निरन ननि देग्रह. तप अपने जीवन को मुफल जानो ॥ ६ ॥ करुणा-  
 निरन करुणा के श्रु, निगम वेद, नागभूष शेष ॥६॥७ ॥

राग केदारा—सपि रघुनाथ रूपनिहार । सरदविधु रविसु-  
 मत मनसिज मानभंजनिहार ॥१॥ ग्यामसुभग शरीर जनमन  
 राम पूरनिहार । धारचंदन मनपुमरकत सिपर लसतनिहार  
 २ ॥ सुखर उर उपवीत राजतपदिकगजमनिहार । मनहुं  
 र धनु नपतगन विच तिमिरगंजनिहार ॥ ३ ॥ विमल-  
 त दुकूल दामिनिदुति विनिंदनिहार । वदन सुपमासदन  
 भितमदन मोहनिहार ॥ ४ ॥ सकल चंग अनूपनहि कोउ  
 कवि बरननिहार । दासतुलसी निरपतहि मुपलहत निरप-  
 तहार ॥ ५ ॥ ८ ॥

सखि ३० । शरद को पूर्ण चन्द्र औ अश्वनीकुमार औ काम के  
 कार भंजनिहार रूप निहार ॥ १ ॥ सुंदर चंदन जो शरीर में है  
 जानो मरकत के शिखर पर निहार कहें धरफ लसत है ॥ २ ॥ सुंदर  
 में यज्ञोपवीत औ पदिक कहें चौकी औ गजमुक्तन का हार शोभत  
 सो मानो यज्ञोपवीत नहीं है इन्द्र धनु है । इहां केवल आकार में उपमा  
 ग में नहीं । गजमनि हार नहीं है तारागण है ताके बीच में चौकी  
 है तिमिरगंजनिहार कहें सूर्य हैं ॥ ३ ॥ दामिनि के दुति को  
 त करनिहारो निर्मल पीत बसन है जाको औ मदन को मोहन

करनिहारो परमा शोभा को गृह को शोभित बदन जाको ॥१॥ निरखि-  
निहार देखनेवालों पर ॥ ५ ॥ ८ ॥

सपि रघुबीर सुष छविदेपु । चित्तभीति सुप्रीति रंगसुसु-  
पता अवरैपु ॥ १ ॥ नयन सुषमा निरपि नागरि सुफल जीवन  
लेषु । मनहुं विधि जुग जलज विरचे ससि सुपूरन मेपु ॥ २ ॥  
भृकुटि भालविसाल राजत बचिर कुंकुमरेपु । भ्रमर है  
रवि विरन ल्याए कारनजनु उनमेपु ॥ ३ ॥ सुमुषि केस  
सुदेस सुंदर सुमन संजुत पेपु । मनहु उडगन वाहु आये  
मिलन तम तजि देपु ॥ ४ ॥ अवन कुंडल मनहुं गुरु कबि  
करत वाद विसेपु । नासिका डिज अधर जनु रघौ मदन  
करि बडुबेपु ॥ ५ ॥ रूपवरनि नहि सकत नारद संभु सारद  
सेपु । कहै तुलसीदास क्यों मतिमंद सकल नरेपु ॥ ६ ॥ ८ ॥

चित्त रूपी भीति पर सुंदर भीति रूपी रंग तें ता स्वरूप को लिखि  
लेहु ॥ १ ॥ हे नागरि नेत्रों की परमाशोभा देखि कै अपने जीवन को  
सुफल लेखो । मानो नेत्र नहीं हैं ब्रह्मा ने मेघ राशि के पूर्ण चन्द्रमा में  
जुगल कमल बनाए हैं । इहां मेघ राशि को पूर्णचन्द्र श्री राघव को मुख  
है । मेघ के चन्द्रमा निर्मल होत है औ मेघही के सक्रांति में श्री राघव  
को जन्महू हैं ताते मेघ के चन्द्रमा की उपमा दिए । चंद्र दिग कमल कैसे  
पिकाशित भए सो हेतु आगे लिखत हैं ॥ २ ॥ भौंहे, युक्त भाल जो  
विशाल है तामें सुंदर केसरि को जुगल रेखा शोभत है, मानो भौंहे दोनों  
भ्रमर हैं तिन्हों ने उन्मेघ कहैं विकाश करिवे हेतु नेत्र रूप कमल के  
कुमकुम रेखा रूप सूर्य किरन को ल्हाए । भाव यह कि मुख रूप चंद्र  
देखि संप्रुदित भए हैं तिन को तिलक रेखा रूप सूर्याकिरन तें मफुलित  
करायो चाहत हैं । छवि रूप मकरंद के पान करिवे हेतु ॥ ३ ॥ सुंदर  
मुख पर केश अपने भाग पर सुंदर पुष्पन युत देखु, मानो फूल जो है  
सो तारागन हैं तिन्ह के वाह ते वाररूप तम मुख रूप चन्द्र तें मिलन

भाषो ॥ ४ ॥ कानन में जो दोऊ कुंडल हैं सो वृहस्पति भुक्त हैं परस्पर  
बाद करत हैं इहां कुंडलन का हलना सो बाद है। नाक दांत ओठ नहीं  
हैं मानो काम बहुत बेप करि टिक रखा है ॥ ५ ॥ सकल नरेणु सप  
मनुष्यन में ॥ ६ ॥ ९ ॥

राग जयतथो—देपोराघो वदन विराजत चारु । ज्ञात न  
वरनि विलोकतही मुप मुप किधौं छवि बरनारि सिंगारु ॥ १ ॥  
रुचिर चिबुक्क रद जोति अनूपम अधर अरुन सित हास निहार ।  
मनो ससिकर यस्यौ चहत कमलमहुं प्रगटत दुरत न वनत  
विचार ॥ २ ॥ नासिक सुभग मनहुं सुकसुंदर चितवत चकित  
अचरजु अपार । कल कपोल मृदु बोल मनोहर रीति चित  
चतुर अपनपौ वारु ॥ ३ ॥ नयन सरोज कुटिल कचकुंडल  
भृकुटि सुभाल तिलक सोभासारु । मनहुं केतु के मकर चाप  
सर गयो विसरि भयो मोहित मारु ॥ ४ ॥ निगम सेप सारद  
सुकसंकर वरनत रूप न पावत पारु । तुलसिदास कहै कही  
कौन विधि अतिलघु मति लड कूर गंवारु ॥ ५ ॥ १० ॥

देखो इ० । हे सखी देखो श्री राघव को मुख सुंदर सोभत है ।  
देखत ही जो मुख होत है सो बरनयो नहीं जात है, मुख है फेर्षा भेष्ट  
छवि रूप स्त्री को शृंगार है ॥ १ ॥ सुंदर ठोड़ी है औ दातनि की जोति  
अनुपम है ओठ लाल औ हंसी उज्ज्वल इन सब को निहार । मानो रंगी  
रूप चंद्रमा को किरण ओठ रूप कमल में पसो चाहत है पर विचार  
नहीं वनत कबहुं प्रगटत कबहुं छिपि जात है अर्थात् जब गघुनाथ  
मुसकात तब प्रगटत जब मुमुकाव छोड देत तब छिपि जात  
॥ २ ॥ नासिका जो सुंदर सो मानो मुवा को चोच है । अपार आश्चर्य  
करि देखनवारे चकित होय ताको चितवत है सुंदर दण्ड है औ  
कोमल बोल मनोहर है ताको मुनि चतुर जन चित में रीति के अरयो  
अपनपौ कहै देहाध्यास वा आत्मा अपना नेबटावरि वरु ॥ ३ ॥



नेत्र कमल सम हैं, टेढ़े वाले हैं औ कुंडल भौंह सुंदर भालतिलक ए  
सब शोभा को सारांश रूप हैं मानो कुंडल नहीं केतु कई ध्वजा पर के  
मीन हैं औ भृकुटीं नहीं हैं चांप है तिलक नहीं है बाण है श्री रघुवर  
मुख देखि मोहित होय काम इन सब को विसारि गयो ॥ ४५॥१० ॥

राग ललित—आञ्जु रघुपति सुप्र दंपत लागत सुप्र  
सेवत सुख सोभा सरद ससि सिहाई । दसन बसन लाल-  
विसद हास रसाल मानो हिमकरकर राषे राजीव बनाई ॥ १ ॥  
अरुन नयन विसाल ललित भृकुटि भालतिलक चाखतर-  
कपोल चिबुक नासा सुहाई । विद्युरे कुटिल कच मानहु  
सधु लालच अलिनलिन जुगल ऊपर रहै लुभाई ॥ २ ॥ अवनं  
सुंदर सम कुंडल कलजुगम तुलसिदास अनूप उपमा कहि  
न जाई । मानहुं मरकत सीप सुंदर ससिसमीप कनक  
मकरजुत विधि विरचि बनाई ॥ ४ ॥ ११ ॥

हे सखी आञ्जु रघुपतिमुख देखत मुख लागत कहै मुख होत है ।  
वह मुख कैसो है कि सेवक पर सुंदर रुखपूर्वक रहत है औ जाके शोभा  
को शरद पूनो को चंद्रमा सिहात है । दसन बसन कई ओठ सो लाल  
है औ हांस उज्ज्वल रसीला है मानो मुख नहीं चंद्रमा है उज्ज्वल हांस  
नहीं ताको कर कई किरन है तिहि से ओष्ठ रूप कमल को मनाइ  
राखे भाव चंद्रमा को कमल ते बिरोध है ताको छोड़ाय राखे ॥ १ ॥  
लाल नयन विशाल है सुंदर है औ कपोल ठोड़ी नासिका सुंदर है औ  
विखरे भए टेढ़े वार हैं सो मानो वार नहीं हैं अमर हैं । छवि रूप मधु  
के लालच तें जुगल नेत्र रूप कमल के ऊपर लोभाय रहे हैं ॥ २ ॥  
कान सुंदर हैं ताके सम कुंडलो कल कई सुंदर दुई हैं । गोसाई जी कहत  
हैं कि उपमा रहित हैं ताते उपमा नहीं कही जात है । मानो कान नहीं हैं  
मरकत मणि जो स्याम रंग को ताको सीप सुंदर है । सो मुख रूप चंद्रमा  
के निकट सोने के कुंडल रूप मछली युत घाता जी ने बनाइ रच्यो  
। हंसका । कई की उपमा नहीं कही जाति है केरि उपमा कहे सो क्यो ।

रत्न । अब उपमा न पाए तब जो कबहुं न टोनेदार सो उपमान  
 २११११ अर्थात् मंगलन मणि की सीप न टोने औ सोने की मछरी  
 की टोने ॥ ३॥११ ॥

राग भैरव्य—प्रातकाल रघुवीर ददनछवि चितै चतुर  
 चित मेरे । होहि विवेक विनोचन निरमल सुफल सुसीतल  
 तरे ॥ १ ॥ भालविमानविकट भृकुटी बिच तिलकरेप रुचि  
 रात्रै । मगधुं मदनतम ताकि नरकत धनु जुगुल कनक सर  
 साजै ॥ २ ॥ रुचिर पनक लोचनजुग तारक स्याम अरुन  
 मित कोए । अनु अलि नलिन कीस मधुं वंधुक सुमन सेज  
 सजि सोए ॥ ३ ॥ विलुगित ललित कपोलनि पर कच मेचका  
 कुटिल मुशए । मनो विधु मधुं वनरुष्ट विलोकि अलि विपुल  
 सकौतुक पाए ॥ ४ ॥ सोभित खवन कनककुंडल कल संबित  
 विवि भुजमूले । मनधुं कीकि ताकि गहन चहत जुग उरग चंद्र  
 प्रतिकूलि ॥ ५ ॥ अधर अरुनतर दसन पांतिवर मधुर मनोहर  
 शासा । मनधुं सोन सरसिज मधुं कुलिसनि तडित सहित  
 कृतशासा ॥ ६ ॥ चरु चिबुक सुकतुंड विनिंदक सुभग सुउन्नत  
 नासा । तुलसिदास छवि धामराममुप सुपद समन भव-  
 शासा ॥ ७ ॥ १२ ॥

प्रात ३० । हे चतुरचित्त मेरे ! प्रातकाल रघुवीर के मुख की छवि  
 को देखो, तब विवेक रूपी नेत्र तेरे मलरहित फलसहित औ शीतल  
 रहें । चतुर कहिये को यह भाव कि मुख छवि के सनमुख कराया  
 चारु हैं ताते बढ़ाई दें बोलें ॥ १ ॥ विशाल भाल औ भौंह के बीच में  
 तिलक की रेखा सुंदर शोभति है मानो मुख रूप काम ने बाल रूप तम  
 को ताकि के भौंह रूप धनुष पर पीत तिलक रूप युगल सोने को  
 मान साज्यो है ॥ २ ॥ पलकें औ नेत्रें सुंदर हैं, तारक कहें पुतरी श्याम

हैं औ ललाई मिश्रित श्वेत आंख के कोण कहैं कोने हैं सो मानो पुतली रूप भ्रमर नेत्र रूप कमल के कोस में ललाई रूप दुपहरि के फूल की शय्या बिछाय सोए ॥ ३ ॥ अरुं श्याम टेढ़े वार सुंदर कपोलन पर शोभत है मानो मुख चन्द्र मह नेत्र रूप वनरुह कहैं कमल देखि कै केश रूप भ्रमरैं कौतुकसहित अर्थात् एक से एक में मिले क्रीड़ा करते आये ॥ ४ ॥ लंबे जां विधिं कहैं दोऊ भुजा हैं तिन के मूल में सुंदर सोने के कुंडल कानो के शोभित हैं सो मानो कुंडल रूप मयूर को देखि के दोऊ भुजा रूप सर्प जो चन्द्रमा के प्रतिकूल में है अर्थात् मुख चन्द्र के सन्मुख मुख नहीं है पादर्वभाग में है सो पकड़ा चाहत है । भाव कुंडल मयूर को मुख चंद्र के अनुकूल जानि के ॥५॥ आंठ लालतर है दांतनि की पांति श्रेष्ठ है औ मधुर हंसी मन की हरनिहारी है, मानो आंठ नहीं सोन कहैं लाल रंग के सरसिज कहैं कमल है, तामें दांत पंक्ति नहीं कुलिस कहैं हीरन का समूह है सो हंसी तड़िता रूप हंसी सहित वास कियो है वा दांतनि की चमक सो तड़िता है ॥ ६ ॥ सुंदर ठोड़ी है औ मुवाके ठोर को निंदा करनिहारी अति सुंदर उन्नत नासिका है । गोसाई जी कहत हैं छवि को धाम औ मुख को दाता औ भवत्रास को शमन करनिहारो श्रीरामजी को मुख है ॥ ७ ॥ १२ ॥

राग कैदारा—सुमिरत श्रीरघुवीर की बाहैं । होत सुगम भव उदधि अगम अति कोउ लांघत कोउ उतरत घाहैं ॥ १ ॥ सुंदर श्याम सरौर सैल तें धसि जनु द्वै जमुना धवगाहैं । अमित अमलजल बल परिपूरन जनु जनमी सिंगार सविता हैं ॥ २ ॥ धारैं वान कूल धनु भूपन जलघर भंवर सुभग सबघाहैं । बिलसति वीषि विजै विरुदावलि करसरोज सोहत सुपमा हैं ॥३॥ सकल भुवन मंगल मंदिर की द्वार विसाल सोहाई साहैं । जे पूजी कौसिकसप रिपवनि जनक गनप संकर गिरिजा हैं ॥ ४ ॥ भवधनु दलि जानकी विवाही भए विहाल नृपाल त्रपा हैं । परसुपानि जिन्ह किए

महामुनि जी वितए कथेहूं न कृपा हैं ॥ ५ ॥ जातुधान तिय  
 जानि बियोगिनि दुपई सीय सुनाइ कुचाहैं । जिन्ह रिपु-  
 मारि सुरारिनारि तीइ सीस उघारि दिवाईथा हैं ॥६॥ दस-  
 मुप विवस तिलोकलोकपति विकल विनाये नाकुचना हैं ।  
 सुवस बसे गावत जिन्ह की जमु अमर नाग नर मुमुपि सनाहैं  
 ॥७॥ जी भुज वेदपुरान सेप मुक सारदसहित सनेइ सराहैं ।  
 कलपलताहु कि कलपलतावर कामदुहाहु कि कामदुहा हैं  
 ॥ ८ ॥ सरनागत आरत प्रनतनि की दै दै अभयपद पीर  
 निवाहैं । करिभाई करिहैं करती हैं तुलसिदास दासनि  
 पर छाहैं ॥ ९ ॥ १३ ॥

सुमिरत ३० । श्री रघुनाथ के भुजन को स्मरण करत मात्र में  
 संसाररूपी समुद्र जो अति अगम है सो भुगम होत । पराभक्तिवाले तो  
 बारी काल लांघि जात औ सकामा भक्तिवाले प्रारब्ध भोगपूर्वक  
 संसार समुद्र को थाहैं उतरत अर्थात् किंचित् देर होत पर उतर में  
 सदैव नहीं ॥ १ ॥ सुंदर श्याम शरीर रूप परवत ते मानो दै जमुना  
 की धारा अवगाहैं कहैं अथाहैं घसी । भाव नीचे को गिरी, पितिरहित  
 निर्मल बल रूप जल करि भरी । जमुना जी मूर्ध से जनमी हैं यह भुजा  
 रूप जमुना शृंगार रस रूप सविता कहैं मूर्ध से जनमी हैं ॥ २ ॥ शान  
 धार है धनुकूल है जो भूपन पहिरे हैं सो जलचर हैं औ सब पाहैं  
 धंवर हैं पाह अंगुरी के बीच को कहत हैं जाको कोऊ देश में गाहैं  
 कहैं पाहैं कहैं गासा कहत हैं । नदी में कमल रहत है, इहाँ गुणना कहैं  
 परमा शोभा करि सोहत जो फर सो कमल है ॥ ३ ॥ मङ्गल भुवन  
 रूप मंदिर के मंगल रूप जो दरवाजा विशाल ताके सुंदर सारें कहैं  
 शान्त को बाजू भुजा हैं । भाव बाजू आधार से दरवाजा रहत है जैसे  
 सभ मंगल इन भुजन के आधार में रहत हैं औ जेहि भुजन को विशा-  
 मित्र जी के यज्ञ में ऋषि सभ औ विवाह में जनक औ भी भुजन के

जय किये पर गणप कहैं लोकपाल सब औ शिव पार्वती जू काशी में  
जे मरै तेहि के मोक्ष हेतु पूजा ॥ ४ ॥ जिन्ह भुजन ने शिवधनु तोरि  
जानकी जू को विवाही, राजा सब त्रपा कहैं लज्जा करि विहाल भए  
औ जेहि भुजन ने परशुराम को महामुनि किए अर्थात् शान्त बनाय  
दिए जे परशुराम कृपायुक्त काहू को कबहूँ न देखे ॥ ५ ॥ श्री  
जानकी जू को वियोगिनि जानि निशाचरन की स्त्री कुचाहैं सुनाय  
दुख देत भई तय जिन्ह भुजन ने शत्रु को मारि कै तेई निशाचर की  
स्त्रीन की सीस उघारि कै अर्थात् बिधवा करि कै धा कहैं दोहाई देवाई  
दाहै पाठ होय तो अस अर्थ करना उन के पतिन के चिता को दाहै  
कहैं अचि देवाई अर्थात् दग्ध करिवै समय में ॥ ६ ॥ तीनों लोक के  
लोकपालन को रावन विकल औ विशेष बश करि नाक ते चना  
बिनाए सो सुबस वसे जिन्ह भुजन को यश देवता नाग नरन स्त्री  
सनाहैं कहैं अपने पतिन सहित गाथाते हैं ॥ ७ ॥ जेहि भुजन को वेद  
पुराण शेष शुक्र सरस्वती नेहसहित सराहैं हैं कि कल्पवृक्ष औ काम-  
धेनहूँ के कामधेनु हैं । भाव कल्पवृक्ष कामधेनु जो सब को मनोरथ पूरन  
करत तिनहूँ के मनोरथ पूरन करत हैं ॥ ८ ॥ आरत जीव शरणागत  
में आय प्रणाम करत तिन को अभयपद दे दे ओर कहैं अंत लो निवा-  
हत । भाव आदि सों अंत लो निवाहत । गोसाईं जी कहत हैं सो कर  
दासनि पर छाहैं करि आए औ करैगे औ करत हैं ॥ ९ ॥ १३ ॥

राग भैरव—रामचंद्र करकंज कामतक वामदेव हित-  
कारो । सियसनेह बरवेलि बखितवर प्रेमबंधु बरवारी ॥ १ ॥  
मंजुल मंगलमूल मूलतनु करज मनोहर सापा । रोम परन  
नय सुमन सुफल सबकाल सुजन अभिलापा ॥ २ ॥ अविचल  
अमल अनामय अविश्रल ललित रहित छल छाया । समन  
सकल संताप पापरुज मोह मान मद माया ॥ ३ ॥ सेवहि सुचि  
मुनि भृंग विहंग मन सुदित मनोरथ पाए । मुमिरत चिय  
हुलसत तुलसी अनुराग उमगि गुन गाए ॥ ४ ॥ १४ ॥

श्रीगणेशाय नमः । इत्यन्तमन्त्रं च जो कल्पवृक्ष सो वामदेव कहें  
 वन्द्य को दिनकारी है श्री भीमानरीजू को मोह सोई श्रेष्ठ कता है  
 जो करि बलिह कर्त आनन्दारतिन है श्री श्रेष्ठ भेम जो बंधु का सोई वर-  
 णी कहें बाद है अर्थात् ताको योग है ॥ १ ॥ इत्य कमल रूप कल्प-  
 वृक्ष इत्यन्त मंगलमूल को मूल कहें जड़ सो तनु कहें शरीर है औ  
 वरुण कहें अंगुरी सब आम्बा है इत्य में जो गोम है सो वृक्ष को पत्र है  
 नैवे हूल है औ सुंदर जनन की जो अभिष्यापा सब काल में सोई  
 सुंदर फल है । भाव अभिष्यापानुगार फल फरयो रहत है ॥२॥ विशेष  
 करि चंचलतारादिनि निर्मल औ रोगरहित । भाव जैसे भिलामा आदि  
 वृक्ष की छाया रोगकारी होनि है तसी नहीं, अविरल कहें सघन है,  
 देविवे में ललित है औ लल करि रहित छाया है अर्थात् दग आदि  
 वृक्ष लगाय भलो थल पनाय राखत है कि कोई पधिक सुथल देखि  
 वाम करंगो ताको धनादि हरंगो तस नहीं । फिर छाया कैसी है सकल  
 मंत्राय अर्थात् दैहिक दैविक भौतिक शमन करनिहारी है औ पाप औ  
 रोग औ माया करि जो मोह मान मद ताको शमन करनिहारी ॥ ३ ॥  
 वृक्ष को भ्रमर पक्षी सेवत है इहां पवित्र जो मुनिन को मन सोई भ्रमर  
 औ पक्षी है सो मन भाए रस फल पाए हरखित है सेवत । गुसाईं जी  
 करत है या कल्पवृक्ष के तो नीचे गए सुख पावत है औ इहां स्मरण  
 करत मात्र में हिय हुलसत औ गुनगान किये ते अनुराग लगनि चलत  
 ॥ ४ ॥ १४ ॥

रामचरन अभिराम कामप्रद तोरयराज विराजै । शंकर  
 इदय भक्ति भूतल पर प्रेम चक्षुवट भाजै ॥ १ ॥ स्यामचरन  
 पदपीठ अरुनतल लसति विसद नपश्रेनी । जनु रविमुता  
 सारदा सुरसरि मिलि बलि जलित विविनी ॥ २ ॥ चंकुस  
 कुक्किस कामल ध्वज सुंदर भवर तरंग विलासा । सप्यहि सुर  
 सप्यम मुनिजन मन मुदित मनोहर घासा ॥३॥ विनु विराग

जप जाग जोगव्रत विनुतीरथ तनु त्यागे । सब सुप कुलभ सद्य  
तुलसी प्रभुपद प्रयाग अनुरागे ॥ ४ ॥ १५ ॥

राम इ० । चरन में तीरथ राज प्रयाग का रूपक करि कहत हैं । श्रीराम को चरन रमणीय मनोरथदाता प्रयाग रूप शोभै है । शंकर को जो प्रेम सोई अक्षयवट है सो शंकर के हृदय की भक्ति रूप भूतल पर सोइत है ॥ १ ॥ पदपीठ श्याम वर्ण है, तरवा लाल है औ नखन्ह की पंक्ति उज्ज्वल सोइति है । मानहु यमुना सरस्वती औ गंगा मिलि के सुंदरि त्रिवेणी चली है, सरस्वती जैसे प्रयाग में गुप्त है तैसे तरवा गुप्त है ॥२॥ अंकुशादि जे चिन्ह है ते भँवर तरंग के विलास हैं । सुरसंत औ मुनि जन अर्थात् मननशील ते मनोहर चरन रूप प्रयाग में वास औ मज्जन करत हैं । इहां पद के वर्णिवे आदि में जो हर्षना औ पुलकना सो मज्जन है । “ कहव सुनत हर्षहि पुलकाहीं । ते सुकृती मनमुदि नहाहीं ” ॥ औ ध्यान करना वास करना है । “पदराजीव वरनि नाि जाहीं । मुनि मनमधुप वसाहि जिन्ह माहीं” ॥ ४ ॥ १५ ॥

राग विलावल—रघुवररूप विलोकु नेकु मन । मकर  
लोक लोचन सुप्रदायक नपसिष सुभगं स्यामसुंदर तन ॥ १ ॥  
चारुचरनतल चिन्ह चारि फल चारिदित परचारि जानि जन ।  
रागत नप जनु कमल दलनि पर अरुनप्रभारंजित तुषारकन  
॥२॥ जंघाजानु आनु उर उरु कटि किंकिन पटपीत मुहावन ।  
रुचिर नितंब नाभि रोमावलि त्रिवलि बलित उपमा कछु  
आवन ॥ ३ ॥ भृगुपदचिन्ह पटिक उर सोभित मुकुतमाल  
कुंकुम अनुलेपन । मनहुं परसपर मिलि पंकजरवि प्रगथ्यौ  
निज अनुराग सुजस धन ॥ ४ ॥ बाहुविसाल ललित सायक  
धनु करकांकन कैयूर महाधन । विमल दुकूल दलन दामिनि-  
दुति जग्योपवीत लसत अतिपावन ॥ ५ ॥ कंबुसीव हनि  
सीव चिबुश द्विज अधर कपील बोल भयमोचन । नामिक

दुभग हृष्यापतिपूरन तदन चदन राजीव विलोचन ॥ ६ ॥  
 कुटिल भृकुटिवर भान्तिलक्ष्मि सुचिमुन्दरतर स्रवन विभू-  
 धन । मनहुं मारि मनमिज पुरारि द्विष्ट ससिद्धि चाप सर  
 मकर चट्टपन ॥ ७ ॥ कुंचित कच कंचन किरौट सिर जटित  
 कौतुमय वक्षुविधि मनिगन । तुलामिदाम रविबुल्लरवि छवि  
 कवि कवि न मकत सुक संभु महमफन ॥ ८ ॥ १५ ॥

रघुवर १० । सुंदर तरवा में जे अंकुजादि चारि चिन्ह हैं ते जन  
 जानि के ललकारि के चारो फल देत हैं वा अंकुश अर्थ कुलिश धर्म  
 कमल कामध्वज मोक्ष देत हैं । नप मानहुं नहीं सोहत हैं कमलदलानि  
 पर मानःकाल के सूर्य के प्रभा ने रंजित ओसकण सोहत है ॥ २ ॥  
 वज्रित सरिन ॥ ३ ॥ भृगुपद को चिन्ह आ धुकधुकी आ मुक्तामाल  
 चौर केसर को अनुलेपन सोहत हैं मानो कमल आ सूर्य परस्पर मिलि  
 के अपना अनुराग आ घनो सुयश प्रगट कियो है । इहां भृगुपदचिन्ह  
 कमल पदिक सूर्य मुक्तामाल सुयश कुंकुम को अनुलेपन अनुराग है  
 ॥ ४ ॥ कंगूर विजायठ, महाधन बड़े मोल को ॥ ५ ॥ द्विज दांत ॥ ६ ॥  
 टंठी भाई आ श्रेष्ठ भाल पर सुंदर तिलक है और कुंडल की रुचि  
 कहिये कांति सुंदर है मानो शिव ने कामदेव को मारि के ताको चाप  
 सर आ दूषणरहित मकर चंद्रमा को दियो है । यहां मुखचंद्र है, भृकुटी  
 चाप है, तिलक सर है, कुंडल मकर है ॥ ६ ॥ ७ ॥ १५ ॥

राग कान्हरा—देपो रघुपतिछवि अतुलित अति । जनु  
 तिलोक सुपमा सकेलि विधि रापी रुचिर चंग चंगनि प्रति  
 ॥ १ ॥ पटुसराग रुचि मृदुपदतल ध्वज चंकुस कुलिस कमल  
 यहि सूरति । रही आनि चहुंविधि भगतन की जनु अनुराग  
 भरी अंतरगति ॥ २ ॥ सकल सुचिन्ह सुजन सुपदायक जरध-  
 रैष विसैप विराजति । मनहुं मानु मंडलहि सवारत धरौ  
 सूत विधि सुत विचित्र मति ॥ ३ ॥ मुभग चंगुष्ट चंगुली



अविरल ककुब अरुननप जोति जगसगति । चग्नपीठ उन्नत  
 नतपालक गूढ गुल्फं चंधा कदलीजति ॥४॥ काम तून तल  
 सरिस जानुजुग उरु करिकर करभङ्गि विन्नपावति । रसना  
 रचित रतन धामौकर पीतवसन काठि कसे सर वसति ॥५॥  
 नाभीसरसि द्विवली निसैनिका रोमराजि सेवालकवि  
 पावति । उर मुकुतामनि साल मनोहर मनहुं रंस अवली उडि  
 भावति ॥ ६ ॥ हृदय पदिक भृगुचरन चिन्हवर बाहुविसाल  
 जानुलगि पहुंचति । कलकियूर पूर कांचनमनि पहुंची मंजु  
 कांजकर सोहति ॥ ७ ॥ सुजव सुरेप सुनप अंगुलिनुत सुन्दर  
 पानि मुद्रिका राजति । अंगुलीवान कमान वानछवि सुरनि  
 सुपद असुरनि उर सालति ॥ ८ ॥ स्यामसरीर सुचंदन  
 चरचित पीतदुकूल अधिक छवि छाजति । नील जलदपर  
 निरपि चंद्रिका टुरनि त्यागि दामिनि जनु दमकति ॥ ९ ॥  
 जग्योपवीत पुनीत विराजत गूढ जंजुवनि पीन अंसुतति ।  
 सुगठपृष्ठ उन्नतकृष्णाटिका कंबुकुठ सोभा मनमानति ॥१०॥  
 सरदसमय सरसीरुह निंदक सुप सुपमा ककुबहत नहिं  
 बनति । निरपतही नयननि निरुपम सुप रविसुत मदन सोम-  
 दुति निदरति ॥११॥ अरुन अधर द्विजपांति अनूपम ललित  
 अंसनि जनमन आकरपति । विद्रुम रचित विमान मध्य सानी  
 सुरमंडली सुमनचय वरपति ॥ १२ ॥ मंजुल चिबुक मनोहर  
 अनुथलु कलकपोल नासा मन मोहति । पंकज मानविमोघन  
 लोचन चितवनि चारु अमृत जल सींचति ॥ १२ ॥ कस  
 सुदेस गंभीर वचन वरं श्रुति कुंडल डोलनि जिय जागति ।  
 लपि नव नील पयोदर सित रुनि रुचिर मोर जोरो जनु

नाचति ॥१४॥ भौं है दंका मयंक अंक रुचि कुंकुमरेप भाल भलि  
 भाजति । सिरसि हेम हीरक मानिकामय मुकुटप्रभा सब  
 भुवन प्रकासति ॥ १५ ॥ वरनत रूप पार नहिं पावत निगम  
 सेपु मुक्त संकर भारति । तुलसिदास कैहि विधि वपानि  
 कहै यह मन वचन अगोचर मूरति ॥ १६ ॥ १७ ॥

देखो इ० ॥ १ ॥ लाल मणि की कांति सम कोमल तरवा है और  
 चामे ध्वज अंकुश कुलिश कमल एहि चारि रेखन की मूरति है मानो  
 सो रेखा अन्तर्गति अनुराग भरी से आर्त जिज्ञासु अर्थार्थी ज्ञानी चारो  
 मकार के भक्तन की आनि रही ॥ २ ॥ सब श्रीरघुनाथ के पदन के  
 सुन्दर चिन्ह मुजनन के सुखदायक हैं पर उर्दरेखा विशेष सोभति है  
 मानो सूर्य मंडल के सँवारते में विचित्रमति विश्वकर्मा ने गूत घरयो  
 है । यहाँ तरवा को रंग लाल है ताते सूर्यमंडल की उपमा कही ॥ ३ ॥  
 उन्नत ऊँचा, नतपालक शरणागतपालक, गूढ़ गुल्फ घुटना टंका है ॥४॥  
 करिकर करभाई दिलखावाति हाथी के वधा के मुँद फों बिलखावनि  
 है, रसना किंकिनी, चामीकर सुवर्ण सरवसति तरफस ॥ ५ ॥ नाभी  
 तड़ाग है, तेहि तड़ाग की सीढ़ी त्रिवली है औ तामे रोमन की पांनि  
 सवार की छवि पावति है ॥ ६ ॥ केपूर पूर कंचन मनि कंचन औ  
 मणि ते पूर कहै भरा बिजायट है ॥ ७ ॥ मुजब सुरेख सुंदर जब की  
 रेखा है, अंगुलीजान अगुस्ताना ॥ ८ ॥ मानो श्याम मेघ पर चंद्रिका  
 देखि के चंचलता त्यागि के दामिनि दमकति है यहाँ श्याम मेघ श्याम  
 शरीर है, चंदन चंद्रिका है, दामिनि पीतान्तर है । दामिनि के मिर राने  
 को यह भाव कि जब चंद्रिका ने अपनी मर्वादा छोड़ी तब हम बसो न  
 छोड़ें ॥ ९ ॥ सुंदर यज्ञोपवीत सोभति है, हेमुली गुप्त है औ विन्दु  
 औ पुष्ट कांध है औ पीठि की सुंदर गद्दिनि है, कृपादिशा बँद लेखा  
 बाज देग में जाफो जोता फरत है अर्थात् गले की सुभान सो उन्नत  
 है ॥ १० ॥ रविभुत अभिर्नाडमार, सोम चंद्रमा ॥ ११ ॥ अंड जट  
 है औ दांनि की पांनि उपमारति है औ जन के दन की गोरखिदास  
 सुंदर हंतानि है । मानो मृगा के बिमान के रूप में देखा की मंडली

... विदुषो रचित विमान ओत है। सुरभरती  
 ... ॥ १२ ॥ विदुषु कपोलन के नीचे को  
 ... ॥ १३ ॥ मानो नवीन मेघ देखि है  
 ... नाचति है। यहाँ नवीन मेघ  
 ... डोलनि नाचति है ॥ १४ ॥  
 ... भाव विना अंक को द्रव्य  
 ... सतसई में कितने  
 ... चिन अधिक डेरात । जौ  
 ... ॥ १५ ॥ १६ ॥ १७ ॥

... के कचिर हिडोबन  
 ... चंद्रसि संजुमनिम  
 ... पांचसर सुपसीरि।  
 ... प्रतिहारि-  
 ... ॥ १ ॥ मर  
 ... पाँटिर्विष  
 ... सुकुम तिलक रंजि  
 ... कालधीत  
 ... सुपद सावन  
 ... विभाय  
 ... अनुराग।  
 ... सो समी  
 ... सब  
 ... सुप-  
 ...

तार ॥ अतिमचत अमकन सुपनि विद्युरे चिकुर विलुण्णित-  
 शर । तमतडिता उडगन अरुन विधु जनु करत व्योम विहार  
 ॥५॥ इय हरपि वरपि प्रसून निरपति विबुधतिय तनतूरि ।  
 भानंदजल लोचन मुदितमन पुलकतन भरिपूरि ॥ सब  
 काइहिं अविचल राजनित कल्यान संगल भूरि । चिरजिओ  
 जानकिनाथ जग तुलसो सजीवनमूरि ॥ ६ ॥ १८ ॥

आली ६० । अति सुंदर चहुंओर स्फटिकमणि की भीति हैं औ  
 सुंदर मणि में दरवाजा है । हे सखी कांच को गच देखि के मन नाचत  
 है, मानो कांच को गच नहीं है काम की फांसी है । बंदनवार मंडप पताका  
 चपर ध्वज फूल फलनि की घोषा परिछाहीं प्रति की छवि की शाक्षी छावि  
 की दैके विंच प्रति कहति है किं तुम से हम गरू हैं ॥१॥ सरल सूधा  
 गादीर नीचे के चारों पाटीको कहत हैं औ पाटी ऊपर के चारो पाटी  
 को कहत हैं, भँवरा गोल गोल धरन में लटके रहत हैं । बलित् प्रथित  
 लना धरन के नीचे रहत है जामे डांठी लगाई जाती है । पटुली पटरा  
 को पटरो नहीं है मानो रति के हृदय की सोने की मालोंकी पदिक है  
 अर्थात् जुगावली है भाव पटरा पदिक है औ जामे लटको है सो सोने  
 की माला है अर्थात् डांठी जाको एक बार कुमकुम तिलक को उपमा  
 दि आप ॥ २ ॥ सधन घन गंभीर घटा, शृदुझरि नान्दी नान्दी, बूंदी  
 ॥ ३ ॥ नवसत सोलहो शृंगार, दिंडोलसार, श्लिषे को स्थान ॥४॥  
 पारिन्ह पारिन्ह सूहाराग औ गौड महार राग गावे, मंजीर पापेंजेव  
 पुर पुंघुरु, बलय कंकन एन के जो धुनि है सो धुनि नहीं है मानो  
 म के हथोरी के ताल हैं, अत्यंत जो झूला मचत है ताने पमीना को  
 न मुखन पर है रहे हैं औ चार बिखरि परे हैं औ माला टोछि रहे हैं  
 र बिखरे तम है, अंग की गोलाई तडिता है, उडगन कई तारागन सो  
 रकण हैं, अरुण कई सूर्य सो दार है औ विबुध कई चंद्रमा सो सुय  
 सो आकाश में विहार करत हैं ॥ ५ ॥ विबुध तिय के लृण तूरिये कां  
 भाव किं जामे नजर न लागे वा लज्जा को तन सम नोरिहे देखे  
 स्वर्ग मुख को लृण सम तोरे ॥ ६ ॥ १८ ॥

राग सूहव—कोसलपुरी सुहावनि सरिसरजू के तोर ।  
भूपावली मुकुटमनि नृपति जहां रघुवीर ॥ १ ॥ पुरनरनारि  
चतुर अति धरम निपुनरत नीति । सहज सुभाय सकल उर  
श्रीरघुवीरपद प्रीति ॥ छंद ॥ श्रीरामपदजलजात सब के  
प्रीति अविरल पावनी । जो चहत सुक सनकादि संभु विरंचि  
मुनिमन भावनी ॥ सवही के सुंदर मंदिराजिर राउ रंक न  
लषिपरे । नाकेसदुर्लभ भोगलोग करहि न मन विषयनिहरे  
॥ १ ॥ सवरितु मुपप्रद सो पुरी पावस अतिकमनीय । निरपत  
मनहि हरति हठि हरित अबनि रमनीय । वीरवह्नि विरा-  
जही दादुर धुनिचहुंभोर ॥ मधुर गरजिघन वरपहिं  
सुनि मुनि बोलत मोर ॥ छन्द ॥ बोलत जो चातक मोर  
कोशिल कीर पारावत घने । पग विपुलपाले बालकनि  
कूजत छडात सुहावने ॥ वकराजि राजत गगन हरिधनु  
सडित दिसिदिसि सोइहीं । नभनगर की सोभा अतुल अव-  
लोकि मुनिमन मोइहीं ॥ २ ॥ गृहगृह रचे हिंडोलना महि  
गचकांच मुठारि । चित्रविचित्र चहुंदिसि परदा फटिक  
पगार ॥ सरलधिसाल विराजहिं विद्रुम पंग सुजोर ।  
चारुपाटि पटु पुरट की भरकत मरकत मोर ॥ छन्द ॥  
मरकत भवर डांडी कनकमनि जटितदुति जगमग रही ।  
पटुनी मनहुं विधि निपुनता निजप्रगट करि रापीसही ॥  
बहुरंग लसत वितान मुकुतादाम सहित मनोहरा । नव  
मुमनमाल सुगंध लोभे मंजु गुंजत मधुकरा ॥ ३ ॥ भुंडभुंड  
भूलन चली गजगामिनि वरनारि । कुमुभिधीर तन सोइहीं  
भूपन विविधि संवारि ॥ पिंकवयनी मृगलोचनी सारद ससि

१० ॥ रामसुन्दर मदनगार्हो मृग मुरारिग गुंड ॥  
 ११ ॥ मारंग मुहमरान मोरठ मुहव मुवरनि वाजर्ही ।  
 १२ ॥ भांति तान तरंग मृनि गंधर्वकिन्नर नाजर्ही ॥ अति  
 १३ ॥ हृत्क कृटिक कचद्वि अधिक मुन्दरि पावर्ही । पटउडत  
 १४ ॥ मदन पमत र्हीम र्हीम अपरमयी भुलावर्ही ॥४ ॥ फिरिफिरि  
 १५ ॥ मृदधिं भासिनी अपनी अपनी वार । विबुध विमान घकित  
 १६ ॥ मण टपत अरित अपार ॥ दरपि मुमन हरपहिं सुर  
 १७ ॥ वानहि हरिगुज गाध । पुनिपुनि प्रभुहि प्रभंसर्ही जयजय  
 १८ ॥ शनकिनाथ ॥ अन्द ॥ अय जानकोपति विसद कोरति  
 १९ ॥ सकललोक मलापरा । सुरवधु टधिं असोम धिर जीवहु राम सुप  
 २० ॥ संपति महा ॥ १ ॥ पायमममय कळु अवध वरगत सुनि  
 २१ ॥ रवीव नसावर्ही । रघुवीर के गुनगनन बल नित दासतुलसी  
 गावर्ही ॥ ५ ॥ १८ ॥

कोशल ३० । सरि नदी, जलजात कपल, अधिरल निरंतर, अजिर  
 बांगन, नाकेश इंद्र ॥१॥ अयनि पृथ्वी, चातक पपीहा, कोकिल कोइल,  
 धीर सुआ, पारावन कचूतर, यकराजि यकपांनि, हरिधनु इंद्रधनु ॥ २ ॥  
 पगार भीति, विटुम मृंगा, पुरट सोना, मुकुतादाम भोग्तिन की माला,  
 पत्रुकर भ्रमर ॥३॥ शारद शशि समतुंड शरत्काल पूर्णिमा के चंद्र सम  
 ह्व, गुंड मलारंभद ॥ ४ ॥ विशद उज्वल ॥ ५ ॥ १९ ॥

राग असावरी—सांक्रसमय रघुवीरपुरी की सोभा आजु  
 रनी । ललित दीपमालिका विलोकाहिं हितकरि अवधधनी  
 ॥ १ ॥ फटिकभीत सिपरनि पर राजति वांचनदीप चनी ।  
 वनु अहिनाथ मिलन आये मनि सोभित सहस्रफनी ॥ २ ॥  
 प्रतिमंदिर कलसनि पर भाषहिं मनिगनदुति अपनी ।  
 मानहुं विपुल प्रगटि पुरलोहित पठइ दिए अघनी ॥ ३ ॥

घरघर मंगलचार एकरस हरपित रंक गनी । तुलसिदास  
कालकीरति गावत जो कलिभल समनी ॥ ४ ॥ २० ॥

अर्थ से सूचित होत है कि यह पद देवारी को है । सांज्ञ ३० इहां  
स्फटिक की भाँति शेष हैं औ ताकी शिखरें फणि हैं औ दीपमालिकां  
मणिहैं ॥ १ ॥ यहाँ लोहित कहै मंगल सो कलसन के मणि हैं ॥ २ ॥  
रंक दरिद्र गनी तालवर ॥ ३ ॥ २० ॥

राग गौरी—अवधनगर अतिमुन्दर वरसरितां के तौर ।  
नीतिनिपुन नर निवसहिं धरमधुरंधर धीर ॥ १ ॥ सकल  
रितुन्ह सुपदायक ता महुं अधिक वसंत । भूप मौलिमनि  
जहंबस नृपति जानकी कंत ॥ २ ॥ वन उपवन नवकिसलय  
कुसुमिते नानारंग । बोलत मधुर सुपर पग पिकवर गुंजत  
भृंग ॥ ३ ॥ समय विचारि कृपानिधि देषि हार अतिभीर ।  
पेलहु मुदित नारि नर विहंसि कहैउ रघुवीर ॥ ४ ॥ नगर  
नारि नर हरपित सब चले पेलन फागु । देषि रामकवि अतु-  
लित उमगत उर अनुरागु ॥ ५ ॥ स्याम तमाल जलदतन  
निरमल पीतदुकूल । अरुन कंजदल लोचन सटा दास अनु-  
कूल ॥ ६ ॥ सिरकिरीट श्रुतिकुंडल तिलक मनोहर भाल ।  
कुंचितकेस कुटिल भुञ्चित वेनि भगत कृपाल ॥ ७ ॥ कल-  
कपोल मुकनासिक ललित अधर द्विज जोति । अरुन कंज-  
महँ जनु जुगपांति रुचिर गज मोति ॥ ८ ॥ वरदरशीव  
अमित बलवाहु सुपीन विसाल । कंकनहार मनोहर उरसि  
लसति वनमाल ॥ ९ ॥ उर भृगुचरन विराजत द्विजप्रिय  
चरित युनोत । भगतहेतु नर विग्रह सुरवर गुन गोतीत  
॥ १० ॥ उदर विरेष मनोहर सुंदर नाभिगंभीर । हाटक

घटित जटितामनि कटितटरट मंजीर ॥ ११ ॥ ऊरु लांनु-  
 पीन मृदुभरकत पंभ समान । नूपुर मुनिमन मोहत करत  
 सुकोमल गान ॥ १२ ॥ अरुनवरन पदपंकज नपटुति इंदु  
 प्रकास । जनकसुता करपल्लव लालित विपुल विलास ॥ १३ ॥  
 कंज कुलिस ध्वज थंकुस रेप चरन सुभचारि । जनमन मीन  
 हरन कहं वनसीरची संवारि ॥ १४ ॥ अंगअंग प्रति अतुलित  
 सुपमा वरनि न जाइ । एहि सुपमगन हीइ मन फिरि नहि  
 पनत लोभाइ ॥ १५ ॥ पैलतफागु अवधपति अनुजसपा  
 सबसंग । वरपि सुमन सुर निरपहि सोभा अमित अंग  
 ॥ १६ ॥ ताल मृदंग भांभ डफ वाजहिं पनव निसान । सुघर  
 सरस सहनाइन्ह गावहिं समय समान ॥ १७ ॥ योना वीनु  
 मधुरधुनि सुनि किन्नर गंधर्व । निजगुन गरुअ हरुअ अति  
 मानहिं मन तजि गर्व ॥ १८ ॥ निजनिज अटनि मनोहर गान  
 करहिं पिकवैनि । मनहुं हिमालय सिपरनि लसहिं अमर  
 मगनैनि ॥ १९ ॥ धवलधाम ते निकसहिं जहं तहं नारिवरुघ ।  
 मानहुं मद्यत पयोनिवि विपुल अपहरा जूय ॥ २० ॥ किंसुक  
 वरन सुषंसुक सुपमा सुपनि समेत । जनु विधु निवह रहकरि  
 शमिनि निकर निकेत ॥ २१ ॥ कुंकुम सुरस अवीरनि भरहि  
 अनुर वरनारि । रितु सुभाय सुठि सोभित देखि विविधि  
 विधि गारि ॥ २२ ॥ जो सुप लोगलाग जपतप तीरघ ते दूरि ।  
 रामरूपा ते मोइ सुप अवधगलिन रघौ पुरि ॥ २३ ॥ धंसि  
 बसंत कियौ प्रभु मज्जन सरजूनीर । विविधि भांति प्रांइइ  
 बन पाए भूपन चीर ॥ २४ ॥



भंगति अनूप । मृदुमुमुकाङ्क्ष दीन्धि तव कृपादृष्टि रघु-  
भूप ॥ २५ ॥ २१ ॥

अवध ३० । वर सरिता सरजू ॥ १ ॥ नवकिसलय नवीन पल्लव,  
कुमुमित पुष्पित ॥२॥३॥४॥ पीत दुकूल पीतांबर ॥ ५ ॥ श्रुति कान  
कुंचित टेढ़ा ॥ ६ ॥ द्विज दांत इहां मुख कोस अरुन कमल है औ जुग  
दंत पंक्ति गजमोती है ॥ ७ ॥ वरदर ग्रीव श्रेष्ठ संखसम कंठ ॥ ८ ॥  
द्विज मिय चरित पुनीत श्रीराम द्विजन के मिय हैं औ चरित पुनीत  
वा द्विजन को मिय है चरित पुनीत जिन का ॥ ९ ॥ हाटक सोना  
मंजीर करि किंकिनी लेना पावनेय नहीं ॥१०॥११॥ इंदु चंद्रमा ॥१२॥  
इहां रेखै वंसी हैं वा एक रेखा को वंसी कहा ॥ १३॥१४॥१५॥ पनव  
ढोल निंसान नगारा ॥ १६ ॥ हरअ हलुका ॥ १७ ॥ अग्नि अटारिन,  
अमरमृगनयन देव पत्री ॥१८॥ इहां धवल धाम छीर सागर औ निक-  
सने वाली नारि अपछरा समूह है ॥ १९ ॥ किंसुक कहैं लाल बरग  
के सुंदर अंसुक कहैं जो वख तेहि समेत परम शोभा सहित जे सुतैं हैं  
ते मानो विधुनिवह कहैं चंद्रमा के समूह है दाबिन निकर अरुन बख  
के घुघुटैं हैं तिन में निकेत हैं गृह करि रहे हैं ॥ २० ॥ कुंकुम कुंकुमा  
सुरस अवीर घोरा भवा अवीर सुंदर ॥ २१ ॥ २२ ॥ २३ ॥ गोसाईं  
जी कहत हैं जे तेहि अवसर में अनूप भक्ति मांगी तेहि कौ मृदु मुस-  
काय के तब कहैं तेहि काल में कृपादृष्टि करि के रघुभूप कहैं रघुकुल  
के राजा दिए वा रघु कहैं जीव तिन के भूप जे श्रीराम ते दिए वा  
गोसाईं जी ध्यान में यह पद बनाए वा काल में प्रत्यक्ष रघुनाथ वर  
दान दिए सो स्पष्ट अंत के तुक में लिखे ॥ २४ ॥२५॥२१॥

राग वसन्त । चलंत वसन्त राजाधिराज । दीपत न  
कौतुक सुरसमाज ॥ १ ॥ सोहैं सखा अनुज रघुनाथ साथ  
भोलिन्ह अवीर पिचकारि हाथ ॥२॥ वाजहिं मृदंग डफता  
वेनु । छिरकहिं मुगंध भरै मलय रेनु ॥२॥ उत बुवति  
जानकी रंग । पहिरे पट भूपन सरस रंग ॥ ३ ॥ लिये  
वैत सोधे विभाग । चांचरि भूमक गावहिं सरस राग ॥

नूपुर किंकिनि धुनि अति सुहाइ । ललनागन जवं जेहि  
 धरि धाइ ॥ ५ ॥ लोचन आंजलिं फगुआ मनाइ । छाडहिं  
 नवाइ हाहा कराइ ॥ ६ ॥ चढे परनि विदूषक खांग  
 साजि । करै कूट निपट गइ लाज भाजि । नर नारि परस-  
 पर गारि देत । सुनि दंसत राम भाइन्ह समेत ॥ ७ ॥ वर-  
 पत प्रसून वर विबुध वृन्द । जय जय दिनकरकुलकुमुद  
 वंद ॥ ८ ॥ ब्रह्मादि प्रसंसत अवध बास । गावत कल  
 कोरति तुलसिदास ॥ ९ ॥ २२ ॥

पेलत ३० । नभ आकाश मलय रेनु चंदनरज ॥१॥२॥ लोचन  
 आंजलिं अंजन लगाइ देइ ॥ ३ ॥ पर गदहा विदूषक भाइ ॥ ४ ॥  
 विबुध देवता ॥ ५ ॥ २२ ॥

राग केदारा—टेपत अवध को आनंद । हरपि वरपत  
 सुमन दिनदिन देवतनि को वृंद ॥ १ ॥ नगर रचना सिपन  
 को विधि तकत बहुविधि वंद । निपट लागत अगम ज्यों  
 अलपरहिं गमन सुखंद ॥ २ ॥ मुदित पुरजोगनि सराहत  
 निरपि सुपमाकंद । जिन्ह के सुचलिचप पिपत राम सुपार-  
 बिंद मरंद ॥ ३ ॥ मध्यव्योम विलंबिचलत दिनेस उडुगन  
 चंद । रामपुरी विलोकि तुलसी मिटत सबटुप वंद ॥४॥२३॥

देखत ३० । नगर रचना सीखवे को वंद कई प्रकार बहुविध ते  
 विधाता तकत हैं सुखंद स्वेच्छा ॥ १ ॥ सुखमादंद परमाशोभा के  
 मूल, सुभालचिख नेत्र रूप सुंदरभ्रमर, मरंद रस ॥ २ ॥ व्योम आकाश,  
 दिनेस सूर्य उडुगन तारागण ॥ ३ ॥ २३ ॥

राग सोरठ—पालत राजुयों राजाराम धरमधुरीन । सावधान  
 मुजान सबदिन रहत नयलय लीन ॥ १ ॥ खान पगजति

न्याउ देख्यौ आपु वैठि प्रवीन । नीचु हतिं सहिदेव दान्धक  
 कियो मोक्ष विहीन ॥ २ ॥ भरत ज्यौं अनुकूल जगनिरुपाधि  
 नेह नवीन । सकल चाहत रामहो ज्यौं बालकगाधहि मोन  
 ॥ ३ ॥ गावु राजसमाज जाघत दासतुलसी दीन । सिद्ध निज-  
 कर देहु निजपदप्रेम पावन पौन ॥ ४ ॥ २४ ॥

पालत ३० । नयनीति यती ने स्वान को मारा रहा सो विनयपत्रिका  
 में स्पष्ट है, स्वान के हेतु कियो पुरवाहर यती गयंद चढ़ाई अर्थात् शिव  
 निर्माल्य खाइवे ते स्वान भयो रह्यो सोई अधिकार यती को दिए काक  
 औ उलूक को विवाद रहा उलूक कहत रहा कि ई स्थान हमारा है औ  
 काक कहत रहा कि हमारा है सो पहिले ते रहनेवाला उलूक को जानि  
 के जिताए औ शूद्र तप करत रहा ताते ब्राह्मण को बालक मारि गयो  
 ताते नेडे शूद्र को मारि के ब्राह्मण के बालक को जिताए ६ जैसे भरत जी  
 के अनुकूल है तैसे निरुपाधि नेह नवीन पूर्वक जगतअनुकूल है २।३।४।२४

संकठ सुव्रत को सोचत जानि जिय रघुराउ । सहस  
 द्वादस पंचसत में ककुक है अब आउ ॥ १ ॥ भोग पुनि पितु  
 आपु को सोउ किये बने बनाउ । परिहरे विनु जानकी  
 नहि और अनघ उपाउ ॥ २ ॥ पालिवे असिधारव्रत प्रियप्रेम-  
 पाल सुभाउ । होइहित केहिभांति नित सुविचार नहि  
 छितचाउ ॥ ३ ॥ निपट असमंजसहुं विलसति मुप मनोहर-  
 ताउ । परमधीर धुरीन हृदय कि हरप विसमय काउ ॥ ४ ॥  
 अनुज सेवक सचिव हैं सबसुमति साधु सपाउ । जान कोउ न  
 जानको विनु अगम अल्प लपाउ ॥ ५ ॥ रामजोगवत सीयमन  
 प्रियमनहि प्रान प्रियाउ । परमपावन प्रेमे परमित समुक्ति  
 तुसखी गाउ ॥ ६ ॥ २५ ॥

संकठ ३० । सहस द्वादश पंचशत पारह हजार पांच सौ वर्ष में ककुक

अर भाय है यद्यपि चान्दीज जाँ के मन मे ग्यारह हजार वर्षे आयत  
है इहाँ गोलाई जाँ वह कल मे भिन्न के लिये ताने शंका नहीं करना  
॥३॥३॥१५॥६॥२५॥

राम विचारि कै रायी ठीक दे मनसाहिं । लीकवेद सनेह  
पानत पच ह्यमानहि जाहिं ॥१॥ प्रियतमा पति देवता वीहि  
उमा रमा मिहाहिं । तुर्दिनी सुकुमारिसियतियमनि समुक्ति  
सकुचाहिं ॥२॥ मेरेहोमुप सुपोमुपु भवनो सो सपनेहूँ नाहिं ।  
मेहिनी गुनगेहनी गुन सुमिरि सोवसमाहिं ॥ ३ ॥ रामसोव  
सनेह परगत अगम सुकवि सकाहिं । रामसोय रहस्य तुलसी  
कहत रामरुपाहिं ॥ ४ ॥ २६ ॥

राम ६० ॥ १ ॥ मेहिनी श्री जानकी जू गुनगेहनी गुन केवृह ॥२॥  
रामरुपाहिं रामरुपा हरि तुलसी श्रीराम रहस्य को कहत हैं ॥३॥४ ॥२६॥

चरचा चरनि सोंच रंची जानि मनि रघुराइ । दूत मुप  
सुनि लो क धुनि घर चरनि यूभो जाइ ॥ १ ॥ प्रिया निज  
अभिलाप कवि कह कहति सिय सकुचाइ । तीय तनय  
समेत तापम पुजिहोँ वन जाइ ॥ २ ॥ जानि काननासिंधु  
भयो विवस सकल सहाय । धीर धरि रघुवोर भोरहिं लिए  
लपन बोलाइ ॥ ३ ॥ तात तुरतहि साजि स्वदन सीय लीहु  
घटाइ । बालमीक मुनोस आश्रम आइअहु पहुंदाइ ॥ ४ ॥  
भलेहि नाथ सुशाय माथि रापि राम रजाइ । चले तुलसी  
पालि सेवकधर्म अवधि अवाइ ॥ ५ ॥ २७ ॥

चरचा ३० । चरनि सों दूतन सों, जानि मनिजानी शिरोमणि  
अपीय प्रसादि जे ज्ञानी तिन के शिरोमणि ॥ १ ॥ २ ॥ स्वदन रथ  
॥ ३॥४॥५॥२७ ॥

आए लपन लै सौंपी सिय मुनीसहि आनि । नाइ सिर  
रहे पाइ आसिप जोरि पंक्तज पानि ॥ १ ॥ बालमीक  
विलोकि ब्याकुल लपन गरत गलानि । सर्वविद वृक्षत न  
विधि की वामता पहिचानि ॥ २ ॥ जानि जिय अनुमान ही  
सिय सहस विधि सनमानि । राम सदगुणधाम परमिति  
भई ककुक मलानि ॥ ४ ॥ दीनबंधु दयाल देवर देपि अति  
अकुलानि । कहति बचन उदास तुलसीदास त्रिभुवन रानि  
॥ ४॥२८ ॥

आए ३० सर्वविद सर्वज्ञ ॥ १ ॥ श्रीराम सदगुण धाम के परमित  
कहैं मर्यादा हैं पर यह क्या किया यह विचारि के बालमीक जी की  
बुद्धि कुछ मलान भई ॥ २॥३॥२८ ॥

तौलों बलि आपु ही कीबो विनये समुक्ति सुधारि ।  
जौलों हों सिपिं लेउ बन रिपिरोति वसि दिन चारि ॥ १ ॥  
तापसी कहि कहा पठवाति नृपति को मनुहारि । बहुरि  
तेहि विधि आइ कहिहै साधु कोउ हितकारि ॥ २ ॥ लपन  
लाल कृपाल निपटहि डारिबो न बिसारि । पालिबो सब  
तापसिनि ज्यों राजधरम विचारि ॥ ३ ॥ सुनत सीता  
वचन मोचत सकल लोचन वारि । बालमीकि न सके तुलसी  
सो सनेह संभारि ॥ ४॥२९ ॥

सु० ॥ २९ ॥

सुनि ब्याकुल भयेउ तर ककु कछी न जाइ । जानि  
जिय विधि-वाम दीन्ही मोहि सरुप सजाइ ॥ १ ॥ कहत  
द्विय नेरी कठिनई लपि गइ प्रीति लजाइ । आनु-पौसर-  
ऐसें जौ न चले प्राण बजाइ ॥ २ ॥ इतहि सोय सनेह संकट-

अतहि राम रजाइ । मौन ही गहि चरन गौने सिय मुखा-  
सिय पाइ ॥ ३ ॥ प्रेमनिधि पितु को कछौ मैं परुषः यवन  
पथाइ । पाप तेहि परिताप तुलसी उचित सहै सिराइ  
। ४॥३० ॥

मुगम ॥ ३० ॥

गौने मौन हीं वारहि वार परि परि पाय । जात जनु  
परची कर लछिमन मगन पछिताय ॥ १ ॥ असन विनु  
वन वरस विनु रन वच्यौ कठिन कुवाय । दुसइ सांसति  
सहन को हनुमान ज्यायौ जाय ॥ २ ॥ हेतु हीं सिय हरन  
हो तव अवहुं भयौ सहाय । होत इठि मोहि दाहिनो दिन  
देव दाहन दाय ॥ ३ ॥ तज्यो तनु संयाम कीहि लगि गोध  
वसी जटाय । ताहि हीं पंथाइ कानन चल्थौ अवध सुभाय  
॥ ४ ॥ घोर हृदय कठोर करतय मृज्यौ हीं विधि पाय । दास  
तुनमो जानि राख्यौ कृपानिधि रघुराय ॥ ५ ॥ ३१ ॥

गौने इ० । लछिमन जी पथाचाप में मगन हैं मानो लछिमन जी  
हीं जान हैं कर ते रची भई अर्थात् प्रणिमा मो जात है । कोऊ रचि-  
कर मृतक को कहत, अब लछिमन जी का पछितार फलन है कि भोजन  
विना बन में बेचड आ बखतर विना रण में एचेउं । एउिन दुनाउ का  
मन्वर दूगेर तुफ मे है ॥ १॥२॥३॥४॥५॥३१ ॥

पुत्रिन सोषिये पाइ हो लजकइह जिय जानि । जानि  
हो कल्याण कौतुका कुसल तुव कल्यानि । १॥ राइरिधि विनु  
समुर प्रभु पति तू मुमंगलपानि । ऐसैइ दल बामता दहि  
बाम विधि की जानि ॥ २ ॥ बोलि मुनि कन्टा सिपाई दीति  
पति पहिपानि । आनसिन्द की देवसरि सिइं रीइइ रज-

मानि ॥ ३ ॥ स्नाद् प्रातर्हि पूजिवो वटः विटपः अभिमत  
दानि । सुवन लाहु उछाहु दिन दिन देविचन हित हानि  
॥ ४ ॥ पाप ताप विमोचनो कृहि कथा सरस पुरानि ।  
वालमीक प्रबोध तुलसी गर्द गह्वर गलानि ॥ ५ ॥ ३२ ॥

पुत्रि ३० । राजकृपि तुम्हारे पिता औ समुद्र हैं, प्रभु पति हैं, तूं  
सुमंगलखानि हौ ॥ १ ॥ कृपि श्री जानकी को आपनि कन्या बोलि  
प्रीति की गति पदिचानि के सिखाई कि हे सिय आलसिन्ह की देवता  
जो गंगा हैं तिन्ह को सनमान करि के सेइअहु ॥ २ ॥ ३३ ॥ ४ ॥ ५ ॥ ३३ ॥

जब ते जानकी रहि रुचिर आश्रम आइ । गगन जल  
जल विमल तब ते सकल मंगल दाइ ॥ १ ॥ निरस भूरुह  
सरस फूलत फलत अति अधिकार । बंद मूल अनेक चंकर  
स्नाद सुधा लजाइ ॥ २ ॥ मलय मरुत मराल मधुकर भोर  
पिक-समुदाइ । मुदित मन मृग विहंग विहरत विपम वयस  
विहाइ ॥ ३ ॥ रहत रवि अनुकूल दिन ससि रजनि  
सजनि मुहाइ । सोय सुनि सादर सगाइति सपिन भलो  
सनाइ ॥ ४ ॥ मोद विपिन विनोद चितवत लित चितानि  
चुराइ । राम विनु सिय सुपद वन तुलसी कहै किमि गाइ  
॥ ५ ॥ ३३ ॥

जब ते ३० । निरस भूरुह शुष्क वृक्ष ॥ १ ॥ मलय मरुत दक्षिण  
पवन तेहि से मुदित मन होय मृग पक्षी विपम वर विहाय विहरत हैं ॥  
रहन रवि अनुकूल दिन उष्णता आदि से क्लेश नहीं दैत हैं ॥ ३ ॥ ४ ॥  
सहि मकरज की व्याख्याः स्पष्ट करि नहीं लिखी वाल्मीकीय रामायण  
औ पद्मपुराण में स्पष्ट है ॥ ५ ॥ ३५ ॥

सुभ दिन सुभ चरो नौकी नपत लगन मुहाइ । पूत  
कसए कानकी है सुनिगधु उठि गाइ ॥ १ ॥ हरपि वरपत सुमन

न गहनं दधाद् वजाद् । भुवन कामन आग्रमनि रहे  
 मोद् भगल छाद् ॥ २ ॥ तैश्च निना तहं सत्रुसूदन रडे  
 विधि दन भाद् । मांगि मुनि सो विद्वा गयने भोर सो रुप  
 भाद् ॥ ३ ॥ मातु मोस्ती वहिन हूं ती सामु तें अधिकाद् ।  
 दरहि तापस तोयतनया मोयहित चित लाद् ॥ ४ ॥ क्रिये  
 विधि व्योहार मुनिवर विप्रवृन्द वोलाद् । कहत सब रिपि  
 हवा फो फल भयो आजु भवाद् ॥ ५ ॥ मुरुप रिपि मुप सुतनि  
 को सिय रुपद् सकन सहाद् । सुल राम सनेह को तुलसी  
 न जिय री जाद् ॥ ६ ॥ ३४ ॥

सुभ्र ० । पद सुगुम । कया स्पष्ट श्रीमद्रामायण में ॥ ३४ ॥

मुनिवर करि छठी कीन्ही वारहे की रीति । वनवसन  
 पहिराद् तापस तोपपोषे प्रीति ॥ १ ॥ नामकरण सुभ्र-  
 प्रासन वेदवांधो नीति । समै सवरिपिगज करत समाज  
 साजि समीति ॥ २ ॥ बालबालहिं काहहिं करिहै राजसुख  
 जगु जीति । रामसियसुत गुरअनुग्रह उचित अफल प्रीतीति  
 ॥ ३ ॥ निरधि बालविनोद तुलसी जातबासर यीति । पिप-  
 चरित सिय चितचितैरो लिपत नितहित भौति ॥ ४ ॥ ३५ ॥

मुनि ३० । समीति सभा वा समित्र ॥ १ ॥ २ ॥ हित भीति भीति  
 रूप भीति पर ॥ ३ ॥ ३५ ॥

बालक सोय के विहरत मुदित मन दोउ भाइ । नाम  
 लक्षकुम राम सिअ अनुहरत सुंदरताद् ॥ १ ॥ देत मुनि मुनि-  
 सिनु पिपौना लित धरत दुगाद् । धेल धेलत नृप सिमुह के  
 बालवृन्द वोलाद् ॥ २ ॥ भूप भूपन वसन याहन राज साज  
 मजाद् । वरम घरम कृपान सर धनु तून लित बनाद् ॥ ३ ॥



दुषी सिय पिय विरह तुलसी सुषी सुत मुपपाइ । आंचपय  
उफनात सींचत सलिल ज्यौं सकुचाइ ॥ ४ ॥ ॥ ३६ ॥

बाल ३० ॥ १ ॥ बरम बखतर, चरम ढाल, कृपान तलवार, तून  
तरकस ॥ २ ॥ ३ ॥ ३६ ॥

केकड़ लौलौं जिअत रह्यो । तौलौं वात मातु सों सुइ  
भरि भरत न भूलि कह्यो ॥ १ ॥ भानी राम अधिक जननी  
तें जननिहुं गस न गह्यो । सोय लपन रिपुदवन रामरूप लपि  
सब की निवह्यो ॥ २ ॥ लोक वेद भरजाद दोष गुन गति  
चित्त चपन चह्यो । तुलसी भरत समुक्ति मुनि राषी राम  
सनेह सह्यो ॥ ३ ॥ ३७ ॥

बाल ३० । गस गांस ॥ १।२ ॥ चप नेत्र इहां सिंहावलोकन रीति  
से पिछिली कथा कहे ॥ ३ ॥ ३७ ॥

राग रामकलौ । रघुनाथ तुम्हारे चरित मनोहर गावत  
सकल अवधवासो , अति उदार अवतार मनुज वपु धरे ब्रह्म  
अज अविनासो ॥ १ ॥ प्रथम ताडिका इति सुबाहु वधि मप  
राश्री द्विज हितकारो । देखि दुषो अति सिला सापवस  
रघुपति विप्रनारि तारो ॥ २ ॥ सब भूपनि को गरव छह्यो  
हरि भंज्यो संभुचाप भारी । जनकमुता समेत आवत गृह  
परसराम अति मदहारी ॥ ३ ॥ तात वचन तजि राजकाज  
सुर-चित्रकूट मुनिभेध धर्यो । एक नयन कीन्हो सुरपति-  
सुत वधि विराध रिपिसोक रच्यो ॥ ४ ॥ पंचवटो पाषन  
राघव करि सूपनपा कुरूप कीन्हो । परदूपन संघार कपट  
मृग गोधराज कहुं गति दीन्हो ॥ ५ ॥ इति कबंध सुयीव  
मपा करि वेधे ताल धान्ति माग्यो । वानर रीछ सहाय अनुज

धेनु सिंधु ज्योति इमु दिम्बतागौ १६॥ मकुज पुत्र दलमहित  
 ज्ञानन मागि चटिन् सुदृष्ट टागौ । परम माधु जिय जानि  
 दिभीपन मंत्रापुरी तिलक मागौ ॥ ७ ॥ मोता अरु लखि-  
 नन मंग मीन्दि श्रीगे जिते टाम पाए । नगरनिकट विमान  
 पायो मध नर नारी टेंपन धाए ॥८॥ मित्र विरंचि सुक नार-  
 दादि मुनि अमूर्ति करत विमल वानी । चौदह भुवन चराचर  
 ररपित पाए राम राजधानी ॥ ९ ॥ मिले भरत जननी गुरु  
 णमिजन पाहत परम अनंद भरे । टुमह वियोग जनित दारुन  
 दुप रामचरन टेंपत विमरे ॥ १० ॥ वेद पुरान विचार लगन  
 सुभ महराज अभिषेक कियौ । तुलसीदास जिय जानि सुअ-  
 यमरु भक्तिदान तव मागि कियौ ॥ ११ ॥ ३८ ॥  
 इति श्रीतुलसीदासकृत रामगीतावल्यां उत्तरकाण्डः समाप्तः ।  
 रघुनाथ ६० । इति सप्तमः प्रश्नः ॥ ११ ॥ ३८

### दोहा ।

श्रीमद्विष्णु रघुनाथ निधि, रामसखे पद नाथ ।

हरिहर मम भक्तिमंद हूं, टीका लखे बनाय ॥

इति श्रीतुलसीदासकृत रामगीतावलीप्रकाशिकाटीकायां श्रीमीताराम-  
 कृपापात्र श्रीमीतारामीय हरिहरपदादकृतौ उत्तरकाण्डः समाप्तः ।





## विज्ञापन ।

- रामचरित मानस गोस्वामी तुलसी दास कृत शुद्धपाठ  
का रामायण फोटो, जीवनी और जिल्दसहित ७)
- रामचरितमानस बिना जिल्द और फोटो ४)
- रामायण परिचर्या परिशिष्ट प्रकाश-रामायण  
की सारगर्भित अपूर्व टीका दो जिल्दों में १०)
- मानसभाव प्रकाश रामायण की भावपरिपूर्ण  
टीका तीन जिल्दों में १०)
- कवित्तरामायण और हनुमानबाहुक सटीक १)
- वैराग्यसंदीपिनी-वन्दनपाठक कृत टीका सहित ॥)
- सटीक मानसमयंक सातो कांड ४)
- श्रीगुणधरगुणदर्पणश्रीमहात्मायुगलानन्यशरणकृत १,  
योगदर्शन भाषाभाष्यसहित २॥) और ३)
- श्राद्धमीमांसा १)
- सटीक किष्किंधाकांड अनेक शंकासमाधान  
सहित ६०० पृष्ठों में २॥)
- हरिश्चन्द्रकला प्रथम खंड नाटकसमूह ४)
- ” २ य० इतिहास ग्रंथसमूह ३)
- ” ३ य० राजभक्ति ग्रंथसमूह २)
- ” ४ य० भक्तरहस्य भक्ति ग्रंथसमूह ४)
- ” ५ म० काव्यामृतप्रवाह कविनाग्रंथ” ४)
- ” ६ य० भिन्न २ विषय के ३७ ग्रंथ १२)





.

7

.





